UNIVERSAL
LIBRARY

OU_186162

UNIVERSAL
LIBRARY

Osmania University Library

Call No H 392 C 52 J

Accession No G H 705

Author Chesser, Eustace.

Title Tiye Jeuje.

This book should be returned on or before the date last marked below

जियो-जागो

Eustace Chesser के
GROW UP-AND LIVE का अनुवाद

अनुवादक
श्यामसुन्दर खत्री

प्रकाशक
ज्ञानमण्डल लिमिटेड
बनारस

मूल्य चार रुपये

प्रकाशक, ज्ञानमण्डल लिमिटेड, बनारस।
मुद्रक, ओमप्रकाश कपूर, ज्ञानमण्डल यन्त्रालय, काशी, २७७०-०७

दो शब्द

यह पुस्तक Eustace Chesser लिखित 'ग्रो अप् ऐंड लिव्'-का अनुवाद है। युवावस्थामें पदार्पण करनेवाले १४-१५ वर्षीय बालकों और बालिकाओंके लिए तो यह लिखी ही गयी है, पर Adult education—वयस्क लोगोंकी शिक्षाके लिए भी परम लाभदायक सिद्ध होगी। पुस्तकमें जिन बातोंका उपदेश दिया गया है, उनके लिए धर्म, सदाचार, कर्त्तव्य, पाप, पुण्य आदिका पल्ला न देकर लेखकने उन्हें व्यावहारिकताकी दृष्टिसे समझाया है। यही पुस्तककी सबसे बड़ी विशेषता है। इसमें इतना सुन्दर नोवैज्ञानिक विश्लेषण है, यौवनारम्भकी गहन उलझनों और कार्योंके घातक परिणामोंसे रक्षा पानेके लिए इतने उत्तम सुझाव जानने योग्य प्रायः सभी बातोंका ऐसा संचयन है कि पाठक सकी उपयोगिताकी भूरि भूरि प्रशंसा किये बिना नहीं रह सकते। र्ष है कि इसका अनुवाद भी बहुत अच्छा हुआ है। अनुवादकने न लेखकके कथनको यथासाध्य उसीके-से शब्दोंमें व्यक्त करने ी भरपूर चेष्टा की है और सफलता पायी है। भाषा भी यथा-सम्भव सरल रखनेका प्रयास किया गया है। मूल पुस्तकका एक-प्राध अंश जो बिलकुल ही अनावश्यक है, छोड़ दिया गया है।

—प्रकाशक

विषय-सूची

अध्याय १

लेखकके विषयमें ... १
पाठकके विषयमें ... ६
जिस दुनियामें हम रहते हैं ... १०
फिर तुम्हारी ही बात ... १३

अध्याय २

तुम्हारा आन्तरिक और बाह्यजीवन ... १८
संसारकी उत्पत्ति कैसे हुई ... २२
मौसम और आबहवा ... २६

अध्याय ३

जीवनकी उत्पत्ति कैसे हुई ... ३१
जीवनका क्षुद्रतम रूप ... ३७
विकासका पहला कदम ... ३८
जलसे स्थलपर ... ४७
अगले विकासकी अवस्थाएँ ... ४
स्थलपर जीवन ... ४२

अध्याय ४

पैतृक प्रभाव ... ४५
इन्द्रियजन्य सन्तानोत्पत्ति ... ४८
पैतृक प्रभावकी कार्य-शैली ... ४९
पैतृक आकृति और गुणोंकी प्राप्ति ... ५०
तुम लड़के या लड़की क्यों हो ? ... ५५

जब प्रकृति स्वयं गलती करती है ...
भूत और भविष्यका सम्बन्ध ...

अध्याय ५

मैं कौन हूँ ...
तुम्हारे शरीरका चमत्कार ...
आदर्श समाज ...

अध्याय ६

पाचन और शुद्धीकरण मण्डली ...

अध्याय ७

श्वासोच्छ्वास मण्डली ...

अध्याय ८

रक्तप्रवाह—प्रणाली ...

अध्याय ९

स्नायुमण्डल और मस्तिष्क या मेधा ...

अध्याय १०

ग्रन्थि या गिल्टी मण्डली ...

अध्याय ११

जननक्रिया मण्डली ...

अध्याय १२

तुम्हारी स्थिति ...
मन क्या है—कैसे समझे ...
मन और कर्म ...
नये विज्ञानकी योजना ...

अध्याय १३

मनके विषयमें हम क्या जानते है ..
हमारी समता और विषमता ...

आत्मज्ञानसे लाभ ... १५६
कहीं नहीं और हर कहीं ... १५९
अध्याय १४
मनके विषयमे हम क्या जानते हैं (२)— ... १६५
अध्याय १५
संसारमें आगमन ... १७६
अध्याय १६
संसारके रहन-सहनमें अभ्यस्त होना ... १९०
गरीबी और बच्चा ... १९२
बचपनमें सजा ... १९९
अध्याय १७
बचपनकी समस्याएँ ... २०७
अध्याय १८
छुटपनकी पशुता ... २१८
बचपनका झूठ बोलना ... २२१
अध्याय १९
बचपनमें चोरी ... २३१
बचपनमें डाह ... २३५
बचपनमें कौतूहल ... २३८
अध्याय २०
स्कूल जाना ... २४६
क्या तुम स्कूलमें सुखी नहीं थे ? ... २४८
आगे बढ़े हुए और पिछड़े हुए बालक ... २५०
आज और कलका स्कूल ... २५५
अध्याय २१
पढ़ना-लिखना और मनकी प्रसन्नता ... २६१

शिक्षक भी मनुष्य है २६७
तुम्हारे मित्र ... २७०
मित्रतासे प्रथम प्रेमका आविर्भाव ... २७३

अध्याय २२

पुरुषत्व या स्त्रीत्व प्राप्त होनेपर ... २७९
मनुष्योंमें यौन-जीवन ... २८२
किशोरावस्थाकी समस्याएँ ... २८२

अध्याय २३

क्या तुम पूरे मर्द या औरत हो गये ? ... २९४
विवाहित जीवनका आन्तरिक और बाह्य अनुभव ... २९७
पाँव फिसलनेका खतरा ... ३०४
तुम्हारा कर्त्तव्य ... ३०६

अध्याय २४

संसारमें तुम्हारा स्थान ... ३१२
काम-धन्धेका आरम्भ ... ३१४
केवल योग्यतासे काम नहीं चलता ... ३२०
प्रारम्भिक कर्मजीवन ... ३२२

अध्याय २५

सिलसिला जमाना ... ३२९
विनयशीलता और शिष्टाचार ... ३३२
प्रथम प्रेम ... ३३६

अध्याय २६

तुम्हारा सुदूर भविष्य ... ३३९
ईश्वर और तुम ... ३४४
तरुण पाठकोंसे निवेदन ... ३४७

जियो-जागो

अध्याय १

लेखकके विषयमें

सम्भवतः सबसे पहले तुम यह जान लेना उचित समझते होगे कि तुम्हारी सहायता करनेकी योग्यता मुझमें कहाँतक है।

बचपनमें मैं एडिनबरामें अपने माता-पिताके साथ साधारण घरेलू जीवन व्यतीत करता था। कभी कभी वह जीवन मुझे कुछ असाधारण-सा भी प्रतीत होता था। माता-पिता और सन्तानोंके दृष्टिकोण पृथक होनेके कारण दोनों पीढ़ियोंमें प्रायः कुछ गलत-फहमियाँ भी हो जाया करती थी। मुझे याद है कि भाई-बहनोंसे मेरी लड़ाई और मार-पीट हो जाया करती थी। उनके साथ जो हर्ष-खुशीके दिन बीते हैं, उनकी भी मुझे याद है।

ऐसे भी अवसर आये जब मैं अपने माता-पिताके व्यवहारसे बड़ा दुःखी हो जाता था। यहाँतक कि उनकी कड़ाई और रोक-थामसे झुँझलाकर मैं उन्हें अपना जानी-दुश्मन समझने लगता था। अन्यान्य अवसरोंपर उनकी सहायता और घरके सुखोंसे मैं फूला नहीं समाता था।

मुझे स्कूलसे घृणा थी और आजतक मुझे उससे चिढ़ है, यहाँतक कि जब मेरे पुत्रने कहा कि उसे स्कूल अच्छा लगता है तब मेरे हृदयमें धक्का-सा लगा।

इतना तो तुम समझते ही होगे कि स्कूलके विरुद्ध मेरी इस चिढ़का कोई वास्तविक कारण नहीं है बल्कि मेरे स्कूली जीवनकी भावुकता-पूर्ण प्रतिक्रिया ही इसका मूल कारण है। अनेकानेक विषयोंपर हम अपनी रायें इसी ढंगसे कायम कर लिया करते हैं। अतः हमें सदा इस बातके लिए सावधान रहना चाहिए कि हमारी अपनी ही भावुकता हममें किसी विषयके सम्बन्धमें अन्ध पक्षपात या अन्ध विरोध न भर दे। जो हो, मैं उन लोगोंमें तो नहीं हूँ जो कहा करते हैं कि हमारे स्कूलके दिन ही हमारे जीवनके सर्वाधिक आनन्द-दायक थे। मेरी रायमें तो वास्तविक आनन्दके दिन पिछले दस वर्षोंसे ही आये हैं क्योंकि इन बीचों जीवनकी कठिनाइयोंके द्वारा मुझमें एक हदतक सहनशीलता और समझदारी आ गयी है और मैं लोगोंके व्यवहार-बर्तावको अपने मनोनुकूल बना लेनेकी अपेक्षा उन्हें उनके प्रकृतरूपमें ही ग्रहण करनेके लिए तैयार हो गया हूँ।

दो बार मैं घरसे भाग चुका हूँ। मैं भूला नहीं हूँ कि दोनों बार मुझे लौट आना पड़ा और फिर घरमें स्थान पानेके लिए गिड़गिड़ाना पड़ा। अभी उस कच्ची उम्रमें ही मैंने असफलता और विवशताका मजा चख लिया था।

मैं यह भी बता देना चाहता हूँ कि बचपन और जवानीमें मुझसे वे सभी छोटी-मोटी भूलें हुई हैं जो भयङ्कर गिनी जाती हैं,—जैसे झूठ बोलना, चोरी करना, दूसरे लोगोंके शरीरकी बनावटके विषयमें कौतूहली होना और अपने शरीरपर उनकी आजमाइश करना। यह न समझो कि तुम्हीं अकेले बदमाश हो और इस तरहके कुकर्म करके केवल तुम्हींने अक्षय नरकवास मोल ले लिया है। जैसा कि मैं आगे चलकर बतलाऊँगा, ये

या इनसे मिलते-जुलते कार्य शारीरिक और मानसिक विकासके स्वाभाविक रूप है।

जिस बातपर मैं यहाँ जोर देना चाहता हूँ वह यह है कि मैंने ये काम किये अवश्य है पर इन्हें बहुत पहले ही छोड़ चुका हूँ। आज मै ऐसी भूलें नहीं करता। आज भी यदि मुझसे ये भूलें होती तो इसका अर्थ यह होता कि मेरी अवस्थाका उत्तरोत्तर पनपना रुक गया है।

मुझमें एक और कमजोरी थी और वह प्रत्येक व्यक्तिमें होती है। मुझे अच्छी तरह याद है कि सरासर झूठी या गलत बात सुनकर मै उसका इतना विरोध नहीं करता था जितना प्रबल प्रतिवाद मै उस समय करता था जब कोई सच्ची बात कहता था। यह जानते हुए भी कि बात बिलकुल सच्ची है मै उसे सुनना नहीं चाहता था।

मुझे घोर अर्थ-संकटका सामना करना पड़ा है। यह अर्थ-संकट कभी कभी तो परिस्थिति-विशेषके कारण होता था परन्तु यह मुख्यतया मेरी अपनी ही मूर्खता-पूर्ण भूलो और फिजूल खर्चीके कारण हुआ करता था। कठिन परिश्रमका साथ भाग्यने दिया जिससे मैंने इतना कुछ पैदा कर लिया कि लोगोंकी दृष्टिमें मै धनाढ्य हो गया; परन्तु मै यह भूला नहीं हूँ कि हजारों ऐसे भी मनुष्य पड़े है जो इस सौभाग्यसे वांछित है।

मै विवाहित हूँ और विवाहका जो कुछ अर्थ होता है मैं उससे भली-भाँति परिचित हूँ। अच्छीसे अच्छी संगिनी मिलने-पर भी विवाह केवल फूलोंकी सेज नहीं होता। मेरे दाम्पत्य जीवनमें कलह और टंटेके अवसर आये तो परम आनन्दकी घड़ियाँ भी आयीं। जब दो मानव एक जीवन-सूत्रमें बँध जानेका निश्चय करते है तब ये बातें हुआ ही करती हैं।

हमारे एक लड़का और एक लड़की है। है तो हम मनुष्य ही; इस नाते इस विषयमें भी भलाई-बुराई लगी हुई है। मैं यह अवश्य स्वीकार करूंगा कि इन लोगोंसे कभी-कभी मेरा बड़ा उग्र लड़ाई-झगड़ा हो जाया करता है पर यह सब होते हुए भी हमलोगोंमें इतनी समझदारी और मुस्तैदी है कि हम आपस-में एक दूसरेके स्वभावसे समझौता कर लेते हैं। घरपर उनके साथ रहकर मैंने बहुत-कुछ सीखा है।

मैं डाक्टर हूँ। शारीरिक और मानसिक व्याधियोंकी चिकित्सा-की अनेक शाखाओंका मुझे अनुभव प्राप्त है। चिकित्सक होनेके कारण मैं इतने अधिक लोगोंके सम्पर्कमें आया हूँ कि उन्हें एक साथ याद रखना कठिन है। वे लोग मुझसे जो कुछ शिक्षा ग्रहण कर सकते थे, उतनी ही क्या, बल्कि उससे कहीं अधिक शिक्षा मैंने उनसे प्राप्त की।

मैंने उनसे यह शिक्षा पायी कि अधिकतर लोग बहुत ही नेकनीयत होते हैं, परन्तु उनमें बहुतेरे लोग बुरी तरहसे अपने जीवनको निकम्मा बना लेते हैं, केवल इसीलिए कि किसी निर्धा-रित कार्यक्रमके अभावमें वे इधर-उधर भटकते रहते हैं और अपनी ओरसे कोई प्रयत्न न करके जो बात जिस तरह होती रहती है उसे वैसे ही होने देते हैं।

इसी शिक्षाने मुझमें यह प्रेरणा उत्पन्न की कि इस विषयकी एक पुस्तक लिखी जा सकती है। उसी प्रेरणासे मैं यह पुस्तक लिखने बैठा हूँ। अपने विगत अनुभव और बचपन तथा जवानी के दिन मुझे इस खूबीसे याद हैं और मैंने युवक-मण्डलीके प्रश्नों-के उत्तर दे देकर अपने छुटपनकी समस्याओंको इतना तरोताजा बना लिया है कि मैं समझता हूँ कि मैं तुमलोगोंकी वास्तविक सहायता कर सकता हूँ।

इस पुस्तकके विशेषतः उन अंशोंमें, जिनमें लोगोंकी मानसिक प्रवृत्तियों और आवेगोंकी गवेषणा की गयी है, मैंने यह अनुभव किया है कि मेरी सहायता किसी एक व्यक्तिके लिए नहीं बल्कि व्यक्ति-समूहके लिए विशेष फलदायी है, ऐसे व्यक्ति-समूहके लिए, जैसे, विवाहित स्त्री-पुरुष, एक परिवारके लोग इत्यादि, जिनके सम्मिलित जीवनकी प्रतिक्रिया एक दूसरेपर प्रतिफलित हुआ करती है। माता-पिताकी सहायताके लिए कुछ सलाह देना और बच्चेको भूल जाना अथवा बच्चेको सलाह देते हुए माता-पिताके विषयमें चुप्पी साध लेना आधी सफलता प्रदान कर सकता है। इस तरीकेसे पूरी सफलता नहीं प्राप्त हो सकती।

मनुष्यकी समस्याओंको स्पष्ट रीतिसे ही हल करना चाहिए। चूंकि मैं बहुतसी पुस्तकें जीवनको निकम्मा बना लेनेवाले बालिगों या वयःप्राप्त लोगोंकी सहायता पहुचानेकी दृष्टिसे लिख चुका हूँ, इसलिए अब तरुणोंकी सहायता करनेके लिए मेरा यह प्रयत्न स्वाभाविक है।

पाठकके विषयमें

यह पुस्तक तुम्हारे लिए लिखी गयी है। तुम्हारे बचपनके पिछले हिस्सेकी सुख-शान्तिमें महायुद्धने गड़बड़ी पैदा कर दी थी। एक अर्थमें तुम अपने बड़े भाई-बहनोंसे अधिक भाग्यशाली हो क्योंकि ईश्वर चाहेगा तो तुम्हारी किशोर और युवावस्था देशकी युद्धग्रस्त नहीं बल्कि सुख-शान्ति-पूर्ण स्थितिमें व्यतीत होगी।

देशमें जीवनकी स्थिति पहलेकी-सी स्वाभाविक होती जायगी और तुम्हारी मनोवृत्तियोंको जगानेवाले पदार्थ तुम्हारे सामने

आएंगे। सुख और आनन्द-जैसे उत्तम पदार्थ तुम्हारे निकटस्थ है। इनकी उपलब्धिका सुअवसर प्राप्त करना और इनका सुन्दरसे सुन्दर उपयोग करना तुम्हारे लिए सर्वथा उचित होगा।

मनोवृत्तियोंको जगानेवाले पदार्थोंमें कुछ संगीन चीजें भी है, जैसे ,लोगोंसे मेल-मिलाप और उनसे व्यवहार-बर्तावका तरीका, कामपर जाना और उसमें सफलता प्राप्त करना। तुम अभी लड़के हो (या लड़की), समय आनेपर तुम्हारी अपनी गृहस्थी होगी और सम्भवतः बाल-बच्चे भी होंगे। तुम्हारी इस समयकी उम्रको देखते हुए वह समय बहुत दूर जान पड़ता है परन्तु शायद वह इतना अधिक दूर नहीं भी हो सकता है।

कुछ और वस्तुओंको भी तुम अपने निकटस्थ समझो। ये वस्तुएं उतनी अच्छी नहीं है। जैसे—निराशा, भग्नहृदयता, मानसिक पीड़ा। इनका वास्तविक अर्थ अब तुम समझने लगे होंगे। वास्तवमें छुटपन और किशोरावस्थाकी भग्नाशाएं और हृदयकी पीड़ाएं बड़ी कटु होती हैं। इसका स्वाभाविक कारण यह है कि बालक अपनी छोटी-सी दुनियाका स्वयं केन्द्रस्थल होता है और वह इस बातको महसूस नहीं करता कि और भी हजारों-लाखों बालक ऐसे है जिन्हें उसीकी तरह दुःखोंको भुगतना पड़ा है या आगे भी पड़ता रहेगा।

संसार-सागरमें जीवन एक गोताखोरी-सा है। डुबकी लगानेके पहले तुम यह नहीं जान सकते कि पानीमें कौन-सी वस्तु तुम्हारे हाथ लगेगी। अकस्मात् ऐसी विपत्तियाँ आ सकती हैं जिनकी आशा नहीं होती। यह सोच लेना कि ये नहीं आएंगी, मूर्खता है। जो हो, यह बात सच है कि यदि तुम्हारा लक्ष्य न्याय-सङ्गत है और तुम उसे प्राप्त करनेमें लगे हुए हो, तो विश्वास रखो, तुम उसे प्राप्त कर लोगे। लक्ष्य प्राप्त करनेके लिए यदि तुम

दूसरोंको गिरानेकी चेष्टा नहीं करोगे तो साधारणतया तुम्हारे मित्र भी तुम्हें नहीं गिराएंगे। पर कभी कभी तुम्हें निराश होना पड़ेगा क्योंकि तुम्हें लक्ष्यसे गिरानेवाले भी कुछ लोग उनमें निकल ही आएंगे।

वास्तवमें किशोर अवस्थाके बालकोंके लिए एक यह बहुत बड़ी दिक्कत है कि उनके अबतकके जीवनमें केवल किताबी विद्या सीखने और इम्तहान पास करनेपर ही ज्यादा जोर दिया जाता रहा है और यही कारण है कि वे स्वयं इन बातोंको उचितसे अधिक महत्त्व देने लगते हैं। तुम भी यदि ऐसा करते हो तो स्वाभाविक ही है। दस वर्ष या इससे न्यूनाधिक कालके स्कूली जीवनके पश्चात् तुम्हारी यह आदत पड़ गयी है कि तुम्हारा सारा सोचना-विचारना पुस्तक-अध्ययनके विषयको सामने रखकर ही होता है।

यद्यपि पुस्तकें पढ़कर थोड़ा-बहुत सभी विषयोंका ज्ञान-प्राप्त कर लेना बड़ी अच्छी बात है तो भी इतनेहीसे किसीमें पुरुष या स्त्रीके सभी गुण नहीं आ सकते। सत्रह-अठारह वर्षके किशोरों-को बीस-पच्चीस वर्षके पूर्ण यौवनकालतक पहुचनेकी अवधिमें वास्तविक अड़चन यह होती है कि घर और स्कूलके संकीर्ण जगत्, विशाल बहिर्जगत् और अपने अन्तर्जगतमें (जो कि तुम्हारी दृष्टिमें इन दोनोंसे अधिक विशाल है) एक सामञ्जस्य खोज निकालना पड़ता है।

ऐसे बहुतेरे लोग हैं जिनकी स्कूली शिक्षा नहींके बराबर है। फिर भी वे दृढ़ चरित्रके हैं और अपने-अपने काम-धन्धेमें दक्ष हैं। युद्धके समय जब आदमियोंकी दिक्कत पड़ी तब कम पढ़े-लिखे लोगोंको महत्वपूर्ण कार्योंपर लगाना पड़ा। जो लोग होशियार

और समझदार देखकर रखे गये थे उन्होंने अपने कार्यको सचमुच बहुत उत्तमतासे निभाया।

कुछ ऐसे भी विद्यार्थी हैं जो पुस्तकोंसे भरी कोठरीमें बन्द रहकर अपना सारा जीवन बिता देते हैं। उन्हें दूसरे लोगोंके विचार और स्वभावका कोई ज्ञान नहीं होता और न बाहरी दुनियाकी कोई जानकारी होती है। ऐसे लोग महान् हो सकते हैं और प्रायः होते भी हैं, परन्तु उनकी महत्ता किसी विशेष विषयमें ही सीमित रहती है। यदि तुम उनसे मनुष्यके पारस्परिक सम्बन्धके विषयमें कोई मदद या सलाह माँगोगे तो वह उनसे नहीं मिलेगी।

यदि तुम ऊपर लिखे दोनों तरीकोंमें किसी एक तरीकेसे अपना जीवन बिताना चाहते हो और उसके लिए तुम्हें मौका भी मिल गया हो, तो तुम्हारी राहमें कोई रुकावट नहीं डाल सकता। परन्तु मेरी रायमें सबसे बढ़कर सन्तोष तो तब प्राप्त हो सकता है जब जीवनका पूरे तौरसे उपयोग किया जाय, अर्थात् स्वस्थ और सरल ढंगसे सम्पूर्ण शारीरिक और मानसिक शक्तियोंका उपयोग और विकास किया जाय।

तन चंगा तो मन चंगा। यही सिद्धान्त है आदर्श जीवनका। यदि यह सिद्धान्त ठीक है, तो इसका अर्थ बहुत व्यापक है।

मानसिक शक्तियोंको उत्तरोत्तर उपजाऊ बनाना चाहिए और शरीरको स्वस्थ रखना चाहिए। साथ ही मानव-जीवन-सम्बन्धी ज्ञानको बढ़ाना चाहिए।

इसलिए मेरे विचारसे अन्यान्य विषयोंकी भाँति इस विषयमें भी बीचका रास्ता ही हितकर है। मै जानता हू कि बहुतेरे नवयुवकोंको "बीच" के रास्तेसे घृणा है क्योंकि वे हरएक

बातके दो ही पहलू समझते हैं—स्याह या सफेद, अच्छा या बुरा। तीसरा पहलू कोई "बीचका" भी है—यह वे नहीं सोचते।

जीवन इतना जटिल होता है और साथ ही मनुष्य-स्वभाव भी ऐसा पेचीदा होता है कि इनको अच्छा और बुरा—इन्हीं दो भागोंमें नहीं विभक्त किया जा सकता। इस सम्बन्धमें हम यह भी देख सकते है कि व्यावहारिक ज्ञानकी उपेक्षा करके जो स्कूली शिक्षा दी जाती है वह मनुष्यको अनस्थिर-चित्त बना देती है। अत्यधिक व्यावहारिक ज्ञान और अत्यल्प स्कूली शिक्षाका फल भी यही होता है।

इसमे सन्देह नहीं कि जीविका उपार्जन करना तुम्हारा प्रथम कार्य है और उसके लिए तुम्हें अपने पेशेमें विशेषज्ञ होनेकी आवश्यकता पड़ सकती है। अब यह तुम्हारा काम होगा कि उस पेशेसे बाहरकी बड़ी-बड़ी बातोंसे दृष्टि न हटाओ। किसी बैंकका मैनेजर या सरकारी अफसर दिन-दिनभर अपने आफिस-के कमरेमें बन्द बैठा रहता है। यदि वह सप्ताहके अन्तमें गाल्फ या टेनिस खेलने जाता है, तो वह चाहे इस बातको जानता भले ही न हो, अपने परिश्रम और मनोरञ्जनके पलड़ोंको बराबर कर लेता है। ऐसा कर लेना बड़ा स्वास्थ्यकर है।

मेरे विचारसे यहींतक नहीं, बल्कि इससे भी आगे बढ़ना चाहिए। यदि किसीका काम-काज इस तरहका हो कि उसे एक छोटे-से दायरेमें ही बन्द रहना पड़ता हो तो उसे मनुष्यता या मनुष्य-स्वभावसे परिचित होनेके लिए अपनेसे भिन्न प्रकारके जीवन व्यतीत करनेवाले और भिन्न आचार-विचारके लोगोंसे भी मिलना-जुलना चाहिए।

जिस दुनियामें हम रहते हैं

सच पूछो तो हम किसी खाली या खोखली जगहमें नहीं रहते। हमारे शरीरका स्वास्थ्य और हित बहुत-कुछ वातावरणके उस घेरेपर निर्भर होता है जिसमें हम रहते है। इस घेरेकी अवस्था एक देशमें दूसरे देशसे जुदा होती है। यही नहीं, बल्कि एक ही देशमें एक स्थानका ऐसा घेरा दूसरे स्थानसे जुदा होता है।

यदि तुम्हारा जन्म और लालन-पालन किसी बड़े शहरके ऐसे हिस्सेमें हुआ है जिसमें घनी बस्ती और गन्दगी है, तो बहुत सम्भव है कि तुम्हारे शरीरको ताजी हवा और सूरजकी रोशनी-की कमीका फल भुगतना पड़ा हो। इस सभ्य कहे जानेवाले देशमें हजारों बच्चोंको जैसा चाहिए वैसा भोजन नहीं मिलता। इसमें उन बच्चोंका कोई दोष नहीं, परन्तु वे बीमार और कमजोर होते हुए बड़े होते हैं और बहुतेरे बच्चे रोगोंके शिकार भी हो जाते हैं। जो बच्चे साफ-सुथरे और आरामदेह घरोंमें रहते हैं वे इस तरह रोगोंके शिकार बहुत कम होते है।

रहन-सहन या लालन-पालनकी खराबीके बुरे फल केवल रोग या व्याधियाँ ही हों, सो बात नहीं है। हमारे शरीरकी तरह हमारे हृदय और मस्तिष्कपर भी हमारे रहन-सहनका प्रभाव पड़ता है।

यदि सारा परिवार दो-एक कमरेमें ही गुजर बसर करता हो, जैसा कि आजकल प्रायः होता है, तो घरमें बैठकर किसी तरहका काम-काज करनेमें सहूलियत नहीं होती है। जिस घरमें लगातार लड़ाई-झगड़े हुआ करते हैं या रुपये-पैसेके लिए हाय-

हाय मचा करती है, उस घरका बच्चा जीवनको जिस दृष्टिसे देखता है उसपर चोट पहुँचे बिना नहीं रह सकती।

बहुत अधिक या बहुत कम धार्मिक या सदाचारकी शिक्षा देनेका भी एक-साथ ही बुरा फल होता है। ऐसी शिक्षा लोगोंको ऐसा कट्टर बना देती है कि वे अपने विचारोंको छोड़ दूसरेके विचारोंको सुनने-समझनेमें असमर्थ होते हैं, अथवा यह समझने लगते हैं कि सारा संसार केवल उन्हींके लिए बनाया गया है, उनके पड़ोसियोंकी भलाईसे उन्हें कोई मतलब नहीं।

शरीरको जो नुकसान पहुँचता है, उसे आसानीसे पूरा किया जा सकता है। व्याधियाँ आराम हो सकती हैं परन्तु मनके भीतरका घाव स्थायी हो सकता है क्योंकि किसीकी प्रबल इच्छा-शक्ति ही उसकी इस व्याधिको आराम करनेमें सहायक हो सकती है। जिन लोगोंके हृदय और मस्तिष्क इस प्रकार गलत रास्तेपर आ गये हैं, वे प्रायः यह नहीं समझ पाते हैं कि 'हममें किस बातकी खराबी है और हम जीवन-मार्गपर सरलता-पूर्वक क्यों नहीं चल सकते।'

बचपनमें मनमें इस तरहकी जो चोट बैठ जाती है उसके कारण आगे चलकर मनुष्य अपने बर्ताव-व्यवहारमें अच्छाई या बुराईकी अन्तिम सीमाको पहुँच जाते हैं। वे उग्र राजनीतिज्ञ हो सकते हैं, चोर हो सकते हैं, धोखेबाज और विश्वासघाती हो सकते हैं, कलाकार हो सकते हैं या साधु-महात्मा भी हो सकते हैं। तात्पर्य यह कि उनलोगोंके मूल-चरित्रपर जैसी प्रतिक्रिया होगी उसीके अनुसार वे अच्छाई या बुराईकी सीमापर पहुँच जायँगे।

कुछ लोगोंने यह तर्क करनेकी चेष्टा की है कि जिन स्त्री पुरुषोंने बचपनमें अड़चनें और तकलीफें उठायी हैं और आगे

चलकर बड़े बड़े काम किये हैं, उनके हकमें उन तकलीफों और अड़चनोंने भलाई ही की है। जिस तरह एड़ लगानेसे घोड़ा तेजीसे दौड़ता है, उसी तरह तकलीफोंके धक्केसे वे आगे बढ़े हैं। परन्तु मेरी समझसे यह तर्क टिक नहीं सकता। जिन लोगोंको बचपनमें कोई तकलीफ नहीं थी और जो बड़ी अच्छी हालतमें रहे, उन्होंने भी ठीक उसी तरह बड़े-बड़े काम किये हैं। यद्यपि उग्र दलके लोगोंने भी अनेक कार्योंसे मनुष्य-जातिका बहुत उपकार किया है, फिर भी उनमें यह खराबी होती है कि उनका चरित्र और स्वभाव अनस्थिर होता है।

अस्वास्थ्यकर घर और रहन-सहनका क्या प्रभाव पड़ता है, अबतक मैंने इसी विषयपर लिखा है। हो सकता है कि जो घर आर्थिक दृष्टिसे या नैतिक दृष्टिसे या दोनों ही दृष्टियोंसे बहुत अच्छा है, उसीमें जन्म लेनेका तुम्हें सौभाग्य प्राप्त हुआ हो; फिर भी तुम्हारे गिरनेके लिए एक गड्ढा तैयार है। अपनी तथा औरोंकी भलाईके लिए उससे बचना तुम्हारा कर्त्तव्य है।

जिन लोगोंको तुम्हारी तरह सुभीते नहीं प्राप्त हुए उनकी अवस्थाको समझनेका और उनके प्रति सहनशील बननेका तुम्हें प्रयत्न करना चाहिए। तुम्हारे जीवनका आरम्भ जो बड़े अच्छे ढंगसे हुआ, इसे केवल भाग्यकी ही बात समझो और इसके लिए तुम्हें घमण्ड नहीं करना चाहिए और न औरोंसे अपनेको बड़ा समझना चाहिए।

तुम्हारे जीवनका प्रारम्भ अच्छे वातावरणमें होनेके कारण तुम्हारे ऊपर थोड़ी-बहुत यह जिम्मेवारी आ जाती है कि जिन विचारोंको दिक्कतका सामना करना पड़ा है तुम उनकी अपने भरसक मदद करो। तुम्हारी अलग-अलग रहनेकी नीति उनके और तुम्हारे बीच एक पहाड़ खड़ा कर देगी। इसका फल रह

होगा कि उनकी उन्नतिमें जितनी रुकावट होगी, उतनी ही तुम्हारी उन्नतिमें भी होगी और मनुष्य-जीवनके हरएक पहलू-का ज्ञान प्राप्त करनेसे तुम वञ्चित रह जाओगे।

मनुष्यका चरित्र बनाने या बिगाड़नेवाली उसकी अपनी परिस्थिति तो होती ही है पर इसके अलावा राजनीतिक उथल-पुथल, अकाल, युद्ध, जनसाधारणकी असावधानी या अज्ञान-से उत्पन्न बीमारियोंका प्रकोप, इत्यादि बड़ी-बड़ी घटनाओंका भी बहुत-कुछ प्रभाव उसके चरित्रपर पड़ता है।

फिर तुम्हारी ही बात

जिन दिक्कतोंका प्रभाव हमारे मानव जीवनके विकासमें पड़ता है उनमें एकाधको तुम बचपनमें भुगत चुके होगे।

यह सौभाग्यकी बात है कि बचपनकी इन दिक्कतोंकी छाप हमपर इस तरह नहीं बैठ जाती कि वह मिट ही न सके। बचपनकी बुरी परिस्थितियोंके असरको सुधार लेना हममेंसे बहुतोंकी ताकतके अन्दर है बशर्ते कि हममें इस बातकी लगन हो। छोटी अवस्थामें ही जब हम इस बातको महसूस करने लगें कि हमारे शरीर, मन, हृदय, आत्मा, चरित्र या व्यक्तित्वपर पहले बुरा असर पड़ चुका है, तभी हमें अपनेको सुधारने या सँभालने-का प्रयत्न करना चाहिए।

हमारे जीवनपर मौरूसी या वंशगत बातोंका भी बहुत-कुछ असर पड़ता है। इसे आगे चलकर मैं अच्छी तरह समझा-ऊँगा परन्तु यहाँ यह कह देना चाहता हूँ कि बहुतेरे मनुष्य जन्मते ही किसी ऐसे पैतृक या मौरूसी शारीरिक अथवा मानसिक

रोगके रोगी हो जाते है जिसका बुरा असर उनके जीवनपर पड़ता है और वे उसका सुधार कर ही नहीं सकते। ऐसे लोग अपवाद-रूप है और इनसे विशेष आशा नहीं की जा सकती, हालाँकि इस तरहके लोगोंमें भी कुछेक ऐसे हो गये है जिन्होंने अपनेको सुधार लेनेके लिए भीषण प्रयत्न किया। इनके कार्यको देखकर हमें अपने ऊपर शर्म आती है।

कुछ अन्धे व्यक्ति अपनेको शिक्षित बना लेते है और अपना जीवन-निर्वाह बड़ी खूबीसे करते है। कुछ ऐसे अन्धे व्यक्ति भी हैं जिनका ज्ञान केवल उठे और उभरे हुए अक्षरोंके पढ़नेतक ही सीमित नहीं है बल्कि वे उच्च शिक्षा भी प्राप्त करते है और किसी हिल्लेसे लग जाते है।

बहुतेरे अङ्ग-भङ्ग व्यक्ति धीरज और हिम्मत बाँधकर अपनी खोयी हुई शक्तियोंकी किसी-न-किसी प्रकार पूर्ति कर लेते हैं। समाचार-पत्रोंमें प्राय: हम उन लोगोंके विषयमें पढ़ते हैं जो हाथ न रहनेपर पैरोंसे लिखना सीख जाते है।

कुमारी हेलेन केलर जब इक्कीस मासकी थी तभी वह किसी कारणवश बहरी और गूंगी हो गयी थी। ये ऐसे दोष थे जिनके कारण उसका जीवन कभी सुखपूर्ण और उपयोगी नहीं हो सकता था। परन्तु अपनी अदम्य इच्छाशक्तिसे और अपने एक बीमार मित्रकी सहायतासे वह अपनी दिक्कतोंको दूर करनेमें समर्थ हुई। आज साठ वर्षकी उम्रमें वह एक सुसंस्कृत महिला है और कई पुस्तकोंकी प्रणेता है।

जब सारी शक्तियोंके रहते हुए भी मनुष्यके लिए सुशिक्षित होना कठिन होता है, तब अङ्गहीनता इत्यादि जैसी भयङ्कर असुविधाओंके रहनेकी तो बात ही क्या है।

कहनेका तात्पर्य यह है कि यदि हममें शुरू शुरूमें ही हमारे

जीवनको अयोग्य बनानेवाली कोई ऐसी भयङ्कर खराबी (अङ्ग-हीनता इत्यादि) नहीं पैदा हो गयी है तो यह हमारे ऊपर निर्भर है कि हम अपनेको किस साँचेमें ढालें।

यह सच है कि धनी होनेके कारण कुछ लोगोंको अपनी उन्नतिके अनेकों अवसर मिल जाते हैं क्योंकि संसारका कारबार बहुत-कुछ धनपर ही अवलम्बित है। अन्यान्य लोग ऐसे हैं जिनका काम जीवन-समस्याओंसे युद्ध करते रहना और नित्य कुआँ खोदना और नित्य पानी पानी है। यदि तुम पिछली कोटि-के व्यक्ति हो तो तुम्हें कठिनाइयोंका सामना करना पड़ेगा, परन्तु तुम्हें दृढ़ता और साहसके साथ उन्हें जीतना चाहिए।

इस बातको इस तरहकी उत्साह दिलानेवाली कोरी कहानी न समझो कि अखबार बेचनेवाला लड़का उन्नति करके कैसे करोड़पति बन गया। मेरे विचारसे अत्यधिक पैसा पैदा करना जीवनका उचित लक्ष्य नहीं है। गरीब घरमें जन्म लेकर भी कोई मनुष्य कठिन परिश्रम, आत्मत्याग या भाग्यके फेरसे बहुत बड़ी सम्पत्ति कमा सकता है और फिर भी वह सुखपूर्ण और यथार्थ परिपूर्ण जीवन व्यतीत नहीं कर सकता।

सच पूछा जाय तो मैं यहाँतक कहूँगा कि यदि कोई मनुष्य विपत्तियोंसे बचता हुआ अपनेको इस अवस्थातक ले आता है, तो उसका यह कार्य ही बतलाता है कि मनुष्य होनेके नाते उसकी सभी बातें ठीक नहीं है।

वास्तवमें ऐसा मनुष्य मानों संसारसे चिल्ला-चिल्लाकर कहता है कि उसके भीतरी सन्तोषने उसे धोखा दिया, जिसकी पूर्तिके लिए उसे अधिकसे अधिक धन-सम्पत्ति और शक्तिमत्ता खोजनी पड़ती है।

उचित विश्रामका उपयोग न करके बिना जरूरत हाड़-तोड़

मेहनत करना भी इस बातको बतलाता है कि मनके अन्दर असन्तोष है जिसे दूर करनेके लिए प्रबल इच्छा-शक्ति मेहनतके रूपमें काम करती है।

वास्तवमें जीवनका व्यावहारिक और उचित लक्ष्य तो है अपने सर्वस्वका विकास अर्थात् अपनी आत्माकी उन्नति। किताबी विद्यासे गढ़ा मगज, या पहलवानी ताकतसे भरा तन, या सफल व्यापारका गुण प्राप्त करके अपना काम चलाना, वास्तविक लक्ष्य नहीं है। ये बातें अपनी-अपनी जगह महत्वपूर्ण अवश्य है परन्तु मेरी समझसे इन सबसे बढ़कर महत्वपूर्ण बात कुछ और ही है। वह है—सच्चे अर्थोंमें मनुष्य बनना।

सुख, औपन्यासिक प्रेम या दुःसाहसपूर्ण काम भी ऐसी चीजें नहीं है जिनके पीछे हाथ धोकर पड़ा जाय। इनमें कोई भी चीज ऐसी ठोस नहीं है जिसपर जीवनकी इमारत खड़ी की जा सकती है। समय आनेपर ये सब चीजें अपने-आप बिना बुलाये आ जायेंगी बशर्ते कि वास्तवमें तुम जो कुछ हो वही बने रहो और बायस्कोपकी नायिका या उपन्यासके नायक बननेकी चेष्टा न करो।

यदि तुम अपने एक हिस्सेको अपनेसे अलग करके उसे काल्पनिक बड़े आदमीके रूपमें गढ़ोगे तो तुम फिर 'तुम' नहीं रहोगे, अपना आपा खो दोगे। तुम्हारा पूर्ण व्यक्तित्व अर्थात् तुम्हारा वास्तविक रूप तभी प्रकट होता है जब तुम अपनी असली हालतमें रहो और झूठा लिबास पहनकर कुछ और बननेकी चेष्टा न करो। व्यक्तित्वका सर्वोच्च विकास तब होता है जब उसे समाजवादके सिद्धान्तोंपर चलाया जाय अर्थात् दूसरोंकी भलाईके लिए अपने स्वार्थकी उपेक्षा की जाय।

किसीके बारेमें तुम अक्सर सुना करते हो—'वह लड़की

कैसी भली है, कैसे अच्छे स्वभावकी है, उसपर कोई बुरा असर नहीं पड़ा।' गरीबका भी व्यक्तित्व, यदि वह सच्चा है, तो झूठे या नकली व्यक्तित्वसे लाख दर्जे अच्छा है। यह हो सकता है कि अपनी चमक-दमकसे नकली या झूठा व्यक्तित्व तुम्हें अपनी ओर खींचता हो।

सुख, औपन्यासिक प्रेम, दुःसाहसपूर्ण काम और सफलता,— ये चीजें मनुष्य होनेके नाते तुम्हारे जीवनकी गौण उपजके रूपमें आएगी परन्तु उनका रूप होगा तुम्हारे स्वाभाविक गुणके अनुसार या उन गुणोंका तुम जिस तरह उपयोग करोगे उसके अनुसार।

चरित्र-दोष, अत्यधिक या अत्यल्प आत्म-विश्वास, घमण्ड, लोभ या सामयिक फैशन या रिवाजके मुताबिक अनावश्यक पोशाक पहनना ये ऐसी बातें हैं जिनसे तुम्हारे स्वाभाविक गुण नष्ट हो सकते हैं। जैसा कि मैं आगे चलकर बताऊंगा, फैशन या रिवाज दो तरहके होते हैं। एककी भित्ति है वास्तविकता। इसकी इज्जत करना उचित है, क्योंकि ऐसा न करनेसे तुम हंसोंमें कौआ बन जाओगे। दूसरा होता है मूर्खतापूर्ण फैशन। सच्चा व्यक्ति इसकी उपेक्षा करेगा। जो फैशन या रिवाज तुम्हें अपने असली रूपको त्यागकर कुछ और बनकर दिखानेके लिए उकसाता है वह मूर्खता-पूर्ण है और मैं नहीं समझता कि उसे अपनानेके लिए तुम क्यों परेशान हो।

इन भूलोंको यदि तुम करोगे तो इनका बुरा नतीजा तुम्हींको उठाना पड़ेगा। ऐसी भूलें न करके तुम्हें अपने स्वाभाविक गुणोंका अच्छेसे अच्छा उपयोग करना चाहिये और अपनेको तथा और लोगोंके व्यक्तित्वको समझनेकी चेष्टा करते हुए संतोष प्राप्त करना चाहिये।

अध्याय २

तुम्हारा आन्तरिक और बाह्य जीवन

जब बच्चा जन्मता है तब उसे केवल अपनी ही सुध रहती है। उसमें बाहरकी सब वस्तुएं उसे ऐसी जान पड़ती हैं मानों वे सब उसीके अंग है। वह खुदी और बेखुदीमें अर्थात् 'स्व' और 'पर' में कोई भेद नहीं मानता।

जब उसकी आवश्यकताएं नहीं पूरी की जाती तभी वह इस बातको बहुत जल्दी समझने लगता है कि उसके बाहर भी कुछ वस्तुएं हैं जो उसे फायदा या नुकसान पहुंचा सकती है। यहींसे वह प्रणाली आरम्भ होती है जिसके द्वारा हम संसारसे अपना व्यवहार बैठाते है। यह प्रणाली जीवनभर जारी रहती है।

व्यक्ति या सयाने होनेके विषयमें जो कुछ विचारणीय है वह यह है कि 'तुम क्या चीज हो और क्या चीज नहीं हो'—इन दोनों बातोंके भेदकी शिक्षा और फिर इन दोनों बातोंमें एक सा सामञ्जस्य बैठाना।

तत्त्वज्ञानी लोग, जो जीवन, मरण और अनादि अनन्त संसृति-की समस्याओंको हल करनेके प्रयत्नमें सारा जीवन बिता देते है, इस विषयमें और भी आगे बढ़ गये हैं। उनका तर्क है कि आत्म-विकास तबतक पूर्ण नहीं होता जबतक वह सारा चक्कर न काट ले, जबतक कोई व्यक्ति अपने निकट और दूरकी समस्त जीवन-धारासे पुनः तादात्म्य न स्थापित कर ले।

अच्छा तो, इस बातको दूसरे ढंगसे समझना चाहिए। बच्चेके लिए संसारकी सब वस्तुएँ उसके अपनेपनका एक अंग होती हैं। सच्चे अर्थोंमें सयाने और पूर्ण विकसित मनुष्यके लिए उसका 'आपा' संसारकी सब वस्तुओंका एक अंग होता है।

ये जटिल समस्याएँ हैं और फिलहाल हम उन्हें छोड़ देते हैं। आगे चलकर हम इनपर विचार करेंगे। इस समय केवल इतना ही अच्छी तरहसे समझ लेना चाहिये कि उम्रमें बड़े या सयाने होना एक तरहका ऐसा सिलसिला है जो सदा जारी रहता है। यह सोचनेकी भूल न करना कि तुमसे जो लोग उम्रमें बड़े या सयाने हैं वे साँचेमें ढल चुके हैं और आगे अब उनमें कोई परिवर्तन नहीं हो सकता या वे कुछ सीख नहीं सकते।

निःसन्देह ऐसा भी कभी कभी होता अवश्य है—यह मैं स्वीकार करता हूँ; परन्तु यह बात विरले ही लोगोंके लिए लागू है। उनकी यह अवस्था वास्तवमें दयनीय है। अधिकतर लोग जबतक जीते हैं बराबर कुछ न कुछ शिक्षा प्राप्त करते रहते हैं और संसारसे अपना व्योत उत्तरोत्तर बैठाते रहते हैं।

यह बात जिस तरह तुमपर लागू है उसी तरह तुम्हारे माता-पितापर भी लागू है। सम्भवतः उनसे भी अधिक शीघ्र तुम अपना व्यक्तिगत व्योंत जीवनके साथ बैठा सकते हो, क्योंकि स्कूली शिक्षासे लेकर कामकाजमें लगनेके समयतक नित्य बदलती हुई परिस्थितियोंसे तुम्हारा सामना होता है।

दूसरी ओर यह बात है कि तुम्हारे माता-पिता भी नयी-नयी परिस्थितियोंके अनुकूल अपनेको बनाते रहते हैं। क्या तुमने जरा देरके लिए इस बातपर गौर किया है कि उनका दम्पति-रूप माता-पिताके रूपमें परिणत हो जानेमें उनके जीवनमें कैसा आश्चर्यजनक परिवर्तन हो गया होगा।

कोई ताज्जुब नहीं है कि वे अपने आश्चर्य-चकित और उत्तर-दायित्वपूर्ण इस जीवनसे कुछ डर गये हों और कुछ गलती कर बैठे हों। आखिर उन्हें भी बहुत कुछ सीखना पड़ा है और इस तरहकी शिक्षामें भूल-चूक होना स्वाभाविक है।

उनकी अपेक्षा तुम्हारे लिए इस बातका अधिक सुभीता है कि तुम छोटी उम्रके हो इसलिए तुम्हारा तन और मन बड़ी आसानीसे किसी साँचेमें ढल सकता है। तुम्हारी अपेक्षा उन्हें यह सुभीता है कि उन्हें अपने बीते हुए जीवनका अनुभव प्राप्त है। इसलिए संसारकी जो बात वास्तवमें जैसी है उसे उसी रूपमें ग्रहण करना उन्होंने सीख लिया है और वे आवश्यकतानुसार अपनेको इस योग्य बना लेते है कि उनका द्योत संसारमें बैठ सके।

इन बातोंको जान लेनेसे तुम्हें परस्पर एक दूसरेके मनोभावों-को समझनेमें सहायता मिलेगी। मुझे मालूम है कि माता-पिता और बच्चोंमें प्रायः झगड़े खड़े हो जाते ह। यदि एक दूसरेके मनो-भावोंको समझनेकी चेष्टा दोनों ओरसे हो तो इन झगड़ोंकी उग्रता बहुत कुछ कम हो सकती है।

दूसरी बात जिससे तुम्हें न केवल अपने माता-पिताके मनो-भावोंको समझनेमें बल्कि तुम्हारे संसर्गमें आनेवाले प्रत्येक व्यक्ति-के मनोभावोंको समझनेमें सहायता मिल सकती है, यह है कि तुममें इस बातको जाननेकी अन्तर्दृष्टि होनी चाहिये कि तुम कौन और क्या हो। इस अन्तर्दृष्टितक पहुँचनेके लिए थोड़ा बहुत यह जान लेना आवश्यक है कि हमारा अस्तित्व कैसे हुआ और किन शक्तियोंने मिलकर हमें उत्पन्न किया।

'मनुष्य किसी घटनाकी तरह घटित नहीं होते।' इस कथनसे मेरा यह तात्पर्य नहीं है कि अन्य समस्त जीवधारियोंकी तरह

वे अपने माता-पिताके बीजसे पौधेके समान उगते और बड़े होते हैं। नहीं, बात सिर्फ इतनी ही नहीं है, बल्कि इससे भी बहुत कुछ आगे बढ़ी हुई है।

तुम अपने माता-पिताके अनुरूप क्यों होते हो? तुम्हारा न केवल चेहरा-मोहरा और शारीरिक गठन बल्कि सम्भवतः स्वभाव और चरित्र भी उनके ऊपर क्यों पड़ता है?

साथ ही, अपने माता-पिताकी सब बातोंका केवल एक मिश्रित-रूप न होकर तुम्हारा व्यक्तित्व एक जुदा और नये मनुष्यका रूप क्यों धारण करता है?

इन प्रश्नोंका उत्तर देनेके लिए, और संसारमें हममें हर एकको क्या-क्या पार्ट अदा करना पड़ता है—इस बातको बखूबी समझनेके लिए बहुत पहलेकी बीती बात उठानी पड़ेगी और संसारके ज्ञात इतिहासके आरम्भसे जीवनका क्रम-विकास कैसे हुआ, इसकी पूरी-पूरी छान-बीन करनी पड़ेगी।

चूंकि यह पुस्तक स्कूली पाठ्य-पुस्तक नहीं है, इसलिए इसमें जीवनके इतिहासकी पर्यालोचना केवल मोटे तौरपर ही दी जा सकती है।

यदि तुम इस सम्बन्धमें विस्तृत ज्ञान प्राप्त करना चाहते हो तो तुम्हें लाइब्रेरियोंमें इन दोनों विषयोंकी बड़ी दिलचस्प पुस्तकें मिल सकती हैं जिनसे जीवनकी उत्पत्तिके बहुतसे भेद समझमें आ जाते हैं।

ये बातें भूशास्त्र और प्राणिशास्त्रमें मिलेंगी। भूशास्त्र पृथ्वीके स्तरों, शिलाओं और धातुओंको छान-बीनके द्वारा जड़-जगत्का इतिहास बतलाता है और प्राणिशास्त्र समस्त जीवधारियोंकी उत्पत्ति, स्वभाव इत्यादिपर प्रकाश डालता है।

मैं जो कुछ तुम्हें यहाँ बतला सकता हूँ उसे अथवा उससे

अधिक जाननेवाले तुममें कुछ लोग अवश्य होंगे। यदि तुम भी उसी श्रेणीके हो तो यहाँ दो-चार पन्नोंमें मै जो कुछ लिख रहा हूँ उसे पढ़नेके लिए तुम्हें धैर्य्यसे काम लेना चाहिये। हो सकता है कि तुम्हें ये बाते मालूम हो परन्तु बहुतेरे अन्य बालकोंने इन विषयोका अध्ययन नही किया होगा और इन्हें नही जानते होंगे। अतएव इन विषयोंको यहाँ छोड़ देना अनुचित होगा।

संसारकी उत्पत्ति कैसे हुई

ज्योतिष-शास्त्रकी सहायता लेकर (जिसमे कि सूर्य, चन्द्र और नक्षत्रोंका विवेचन है) और भूशास्त्रके अध्ययनसे संसारके इतिहासकी खोज की गयी है।

विद्वानोंका विश्वास है कि लाखो-करोड़ों वर्ष पहले आकाशमें एक प्रकारकी हलचल मची थी जिसके फलस्वरूप सम्भवतः हमारा सूर्य और एक बहुत बड़ा नक्षत्र आपसमें करीब-करीब टकरा-से गये।

करीब-करीब टकरा-से गये—यह मैं इसलिए कहता हूँ कि यदि इतने विशाल शक्तिमय दो बड़े-बड़े गोले आपसमे आकर्षित होकर एक साथ सटकर शून्यमे गुजरें तो भी रगड़के कारण उनसे टुकड़े टूट-टूटकर अलग हो जायँगे। यह आकर्षण ठीक वैसा ही होता है जैसा चुम्बक और सुईमें, परन्तु नक्षत्रोंके विषयमें अन्तर यह है कि वे भिन्न प्रकारके और बहुत बड़े शक्तिशाली पदार्थ है।

इस प्रकार अग्निमय टुकड़ोके रूपमें नक्षत्रोंकी उत्पत्ति हुई। ये नक्षत्र उसी आकर्षणसे बँधे रहकर सूर्यके चारो ओर निश्चित

मार्गोंसे परिक्रमा करते रहते हैं। इन नक्षत्रोंमें एक नक्षत्र हमारी पृथ्वी है।

पहले पृथ्वी ज्वालामय गैसोंका समूह थी। जैसे-जैसे ये गैसें ठंडी होती गयीं वैसे वैसे पिघली हुई धातुएं ठोस हो होकर पृथ्वीके गर्भमें समाने लगीं। पृथ्वीकी सतहपर ठोस पपड़ी जम गयी।

तुम शायद जानते हो कि ताप पाकर चीजोंका आकार बढ़ या फैल जाता है। बहुत अवस्थाओंमें यह फैलाव इतना सूक्ष्म होता है कि आँखोंको दिखायी नहीं देता है। इसके विपरीत ठंड पाकर चीजें सिकुड़ जाती हैं।

रोजमर्राके जीवनमें हमें इस तथ्यका पता चलता है। उदाहरणके लिए रेलकी पटरियाँ बिना जोड़की लम्बी कतारमें नहीं बैठा दी जातीं। यदि ये इस तरह बैठायी जायं तो सूर्यके तापमें बढ़ या फैलकर टेढ़ी हो जायँगी और फिर उसका परिणाम बड़ा अनर्थकारी होगा।

रेलकी पटरियोंके लम्बे-लम्बे टुकड़े एक दूसरेसे जरा जरा फासलेपर करीनेसे बैठाये जाते है ताकि उन्हें फैलनेकी जगह मिले।

इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि जब पृथ्वीका हृदय ठंडा होने लगा तब यह सिकुड़ गयी। वैसी अवस्थामें उसके चारों ओरकी ठोस पपड़ीकी क्या हालत हुई?

इस बातका अन्दाजा हम हवासे भरे हुए गुब्बारेसे लगा सकते हैं। गुब्बारेके अन्दरकी हवा सिकुड़ जानेपर क्या नतीजा होगा? या ठीकसे समझनेके लिए यों कहो कि यदि गुब्बारेकी कुछ हवा निकल जाय तो क्या फल होगा?

कुछ हवाके बाहर निकल जानेपर या कम हो जानेपर जैसे

गुब्बारेके ऊपरी हिस्सेपर झुर्रियाँ पड़ जाती है उसी तरह पृथ्वी-का भीतरी भाग सिकुड़ जानेपर उसकी ऊपरी सतहपर झुर्रियाँ पड़ गयी।

ऐसी झुर्रियोंके उठे हुए हिस्से पर्वत बन गये। झुर्रियोंके निचले छोटे हिस्से घाटियाँ और समतल मैदान बन गये।

उस समयसे युगपर युग बीत गये परंतु ठण्डे होने और सिकुड़नेकी क्रिया बराबर जारी है। यह क्रिया इतनी धीरे-धीरे होती है कि एक छोटीसी शताब्दिमे यह कुछ जानी ही नही जाती।

समय-समयपर यह क्रिया बड़े या छोटे भूकम्प उत्पन्न करती है। भूकम्पोंसे पर्वतों और घाटियोंकी स्थितिमे परिवर्तन होता है। कभी-कभी कोई सारेका सारा महादेश समुद्रसात् हो जाता है और कभी-कभी नये महादेश समुद्रगर्भसे बाहर निकल आते है।

उदाहरणके लिए इङ्गलैण्डका द्वीप कभी किसी समय समुद्रके गर्भमें अवश्य डूब गया था। खड़िया मिट्टीका जमाव जो कि करोड़ों छोटे-छोटे जलजीवोंकी हड्डियोंका मिट्टीमे परिणत हुआ रूप है, इस बातको साफ तौरसे बतलाता है।

अटलांटिस महादेश आज अटलांटिक महासागरके गर्भमें है। ऐसे महादेशोंके विलुप्त होनेकी कहानियोंके और बाइबिल-में वर्णित बाढ़की कथाके आधार पृथ्वीकी उपर्युक्त प्रारम्भिक घटनाएं हैं।

आजकल अंटार्कटिक समुद्रमें डूबे हुए महादेशोंकी खोजका प्रयत्न होता है। लोगोंका विश्वास है कि ये महादेश कभी हिन्द महासागरमें स्थित थे और अपने मूल पार्थिव भागसे टूटकर समुद्रके अन्दर दक्षिणकी ओर खिसक गये हैं।

कहा जाता है कि इस प्रकारकी खोजोंकी मूल प्रेरणामें एटम

बम बनानेके लिए अप्राप्य और बहुमूल्य धातुओंकी खोज निकालनेका प्रयत्न छिपा हुआ है। यह बड़ी ही भयंकर बात है। एटमसम्बन्धी विज्ञानका यदि ठीक-ठीक उपयोग किया जाय तो संसारका महान् उपकार साधन हो सकता है। परन्तु वर्तमान-कालके मनुष्योंकी गलतीके कारण इस विज्ञानसे संसारके दण्डित होनेकी ही विशेष सम्भावना है। इस गलतीको सुधारना तुम्हारा काम होगा।

पृथ्वीका गर्भ अब भी अग्निमय है—इस बातका पता समय-समयपर ज्वालामुखी पर्वतोंके धधक उठनेसे चलता है। तुमने एटना, स्त्रोम्बोली और वेसुवियसके ज्वालामुखी पर्वतोंके विषयमें सुना होगा और 'पम्पाइके अन्तिम दिन'—की कहानी पढ़ी होगी। पम्पाइ नगर प्राचीन समयमें ज्वालामुखीकी दुर्घटनासे स्वाहा हो गया।

भूकम्प अब भी होते हैं। इनकी अधिकता गर्म देशोंमें ही होती है। समशीतोष्ण देशोंमें भी ये अक्सर हुआ करते हैं, परन्तु वहाँ इतने हल्के तौरपर होते हैं कि कुछ मालूम ही नहीं पड़ने और सिर्फ सीस्मोग्राफ नामक यंत्रसे ही इनका होना या न होना जाना जाता है।

पृथ्वी इतनी अधिक गहराई तक ठोस है कि अब बहुत बड़े पैमानेपर भूकम्पकी हलचलका होना सम्भव नहीं है। परन्तु भीतरी भाग और ऊपरी सतहमें ब्योंत बैठानेका क्रम बराबर धीरे-धीरे चलता रहता है।

पृथ्वीका सारा जीवन भीतरी और बाहरी भागोंमें तारतम्य बैठानेवाली एक गतिशील क्रिया है। हमलोगोंका जीवन भी ठीक वैसा ही है। जिस पृथ्वीके अस्तित्व और इतिहासमें हम

प्रत्येक व्यक्ति एक-एक जीवाणुमात्र है, इस मौलिक रूपमें भी उसके जीवनके समान ही हमारा जीवन है।

मौसम और आबहवा

हमारी पृथ्वीको सूर्यकी परिक्रमा करनेमें ३६५¼ दिन लगते हैं। परिक्रमा करनेके मार्गमें सूर्यसे पृथ्वीकी दूरी एक-सी न होकर भिन्न-भिन्न अवस्थाओंमें भिन्न-भिन्न रहती है। इस तरहकी जुदा जुदा दूरीसे मौसम बनते हैं। मौसमोंसे वर्ष बनता है। वर्षमें ३६५ दिन होते हैं और बचे हुए ¼ दिनका हिसाब बैठानेके लिए हर चौथा वर्ष ३६६ दिनका होता है।

पृथ्वीको अपनी धुरीपर एक बार घूमनेके लिए चौबीस घंटेका समय लगता है। इस घुमावमें जिस भागके सामने सूर्य होता है उसमें दिन होता है, और पिछले भागमें रात होती है।

सूर्यके सामने या आड़में रहनेकी स्थिति बदलती रहती है। इस स्थिति-परिवर्तनसे ही 'आबहवा' जलतत्वके बिना हो ही नहीं सकती थी।

देखनेसे तो नहीं मालूम पड़ता, पर वास्तवमें जल आक्सीजन और हाइड्रोजन नामक गैसोंका रासायनिक सम्मिश्रण है। दो भाग हाइड्रोजन और एक भाग आक्सीजन। हमारी पृथ्वीको जन्म देनेवाली आदिकालकी उस हलचलमें हाइड्रोजन और आक्सीजनके अत्यधिक परिमाण मिलकर मिश्रित हुए। इस तरहके मिश्रणसे पहले-पहल नदियों और समुद्रोंका आविर्भाव हुआ।

तुम जानते होगे कि गर्मीके दिनोंमें तालाब कैसे सूख जाते है। गाँवोंमें तुम देखते होगे कि सारीकी सारी जलधारा सूख जाती है। सिर्फ पहाड़ोंके सोते बन्द हो जानेसे ही ऐसा नहीं होता बल्कि इसका कारण यह भी है कि सूर्य जलको सोख लेता है।

क्या तुमने कभी सोचा है कि तालाबों और नदी-नालोंका जल क्या हो जाता है? तुम कहोगे वह सूख जाता है। ठीक है, परन्तु सूखकर जाता कहाँ है?

संसारको ताप पहुचाने वाले महान् अग्निपिण्ड सूर्यके तापसे गर्म हवा इसे गर्क कर लेती है। यदि पानी सिर्फ सूख ही जाता और फिर वापस न आता तो सारा संसार सहाराकी मरुभूमिसे भी बढ़कर सूख जाता। कोई जी ही नहीं सकता। वैसी ऋतुएं भी नहीं होती जैसी अब होती है। सिर्फ भयानक गर्मी और त्रासकारी सूखी सर्दी ही होती।

जैसे हम्मामम भाप निकलते हुए गरम पानीके कंडालसे भाप ऊपरको उठती है और ठंडी दीवारका सम्पर्क पाकर उसपर जमती है तथा पानीकी बूंदें बना देती है, उसी प्रकार सूर्यके तापसे ऊपरको उठता हुआ पानी पहले जमकर बादल बन जाता है और अन्तमें काफी ठंडा होकर वर्षाके रूपमें परिणत हो जाता है।

बरसात प्रायः पहाड़ोंकी तरफसे शुरू होती है, क्योंकि पहाड़ हम्मामकी दीवारका काम देते है। अटलांटिक महासागरकी सैकड़ों मीलोंको तय करनेपर जो पहला देश सामने आता है वह आयरलैण्ड है। पानीसे भरे हुए बादलोंको हवा उसके किनारेपर उड़ा ले आती है। वहाँ उन बादलोंका पहला जोर फूट पड़ता है। इसीलिए आयरलैंडमें बरसातोंका होना निश्चित है।

अतएव पृथ्वीके आरम्भ-कालसे ही यह चर्खा निश्चितरूपसे चल रहा है कि नदियाँ और समुद्र वर्षाके जलसे सदा भरते हैं और फिर वे स्वतः अपने जलसे बादलोंको भरा करते हैं। इस विषयपर विचार करनेसे तुम समझ जाओगे कि यदि ऐसा न होता तो पृथ्वीपर न तो किसी तरहके जीवनकी उत्पत्ति सम्भव हो सकती थी और न उसकी रक्षा हो सकती थी।

अध्याय ३

जीवनकी उत्पत्ति कैसे हुई

अब हम जिस घटनापर विचार करेंगे उसका खुलासा विवेचन मनुष्यका मस्तिष्क सन्तोषजनक रीतिसे नहीं कर सका। करोड़ों वर्ष पहले कहीं किसी समुद्रके विशाल रिक्त स्थानमें कोई जीवित परमाणु प्रकट हुआ था।

तुम पूछ सकते हो कि जमीनपर क्यों नहीं हुआ?

जीवनकी सृष्टि जलमें ही हुई होगी—इस तरहके विश्वासका यह कारण है कि बिना जलके किसी जीवाणु, पौधे या पशुका अस्तित्व सम्भव नहीं है। जलने ऐसे साधनोंको उत्पन्न करनेका बड़ा महत्वपूर्ण कार्य किया होगा जिनके कारण जीवनकी उत्पत्ति हो सकती है। सामान्य जीवधारियोंको इस बातकी बहुत बड़ी सहायता जलसे मिलती है कि वे भोजनकी खोजके लिए गतिशील बनें और अपनेको खतरोंसे बचा सकें। इस बातकी बहुत बड़ी सहायता जलसे मिलती है।*

दूसरी वस्तु, जो जीवनके लिए बहुत आवश्यक है वह है गर्मी या उष्णता। कुछ लोगोंका विश्वास है कि उस अत्यन्त प्राचीन कालमें संसारकी अत्यधिक उष्णता या गर्मीने बहुत बड़े

---

* 'जीवन' शब्दका एक अर्थ 'जल' भी है। इससे भी जीवन और जलका सम्बन्ध सूचित होता है।—अनुवादक

पैमानेपर बड़ी ही जटिल रासायनिक क्रियाएं घटित की थीं। इनके द्वारा जड़ पदार्थोंसे जीवनकी उत्पत्ति सम्भव हुई।

यदि ऐसा हुआ तो यह तो प्रत्यक्ष है कि अब फिर उन विशेष अवस्थाओंकी सृष्टि बहुत ही कठिन है। बहुत वर्षोंसे वैज्ञानिक लोग अप्राकृतिक रूपसे उन्हीं अवस्थाओंके निर्माणका और वैसे ही परिणाम उत्पन्न करनेका प्रयत्न कर रहे है।

उन्होंने अपने हुनरसे एकसे एक बढ़कर बुद्धिमत्ताके कार्य किये हैं। वे किसी मृत प्राणीका कोई अंग रसायनशालामें रखकर अपनी देखरेख तथा हिफाजतसे उसे जीवित रख सकते है। पौधों और पशुओंके शरीरमें भी वे परिवर्तन घटित कर सकते है। परन्तु अभीतक वे जीवनकी सृष्टि करनेकी तो बात ही क्या, जीवनके अत्यन्त सामान्य रूपको भी उत्पन्न करनेमें समर्थ नहीं हुए।

कौन जानता है कि किसी दिन उन्हें इस प्रयत्नमें सफलता मिल जाय।

जिस शक्ति या इच्छाने सर्वप्रथम शिला, गैस इत्यादि जड़ पदार्थोंका, जलमें सर्वप्रथम प्रकट होनेवाले उस सूक्ष्म जीवाणुमें भेद उत्पन्न किया—जिसके द्वारा आज प्रत्येक पौधेका और प्राणिजीवनका होना सम्भव हुआ—उस शक्तिको हम ईश्वर कह सकते है।

जीवनका क्षुद्रतम रूप

यदि तुम्हारे पास काफी जोरदार अनुवीक्षण यन्त्र हो तो तुम उसकी सहायतासे मौलिक जीवनका उदाहरण—जीवित अणु

अपने घरकी मोरी या परनालेमें देख सकते हो और उसकी परीक्षा कर सकते हो।

मैं इस जीवाणुको जीवनका हीनतम रूप कहता हूं। परन्तु शायद यह बात गलत है। बहुत अंशोंमें इसे जीवनका सर्वाधिक अभिमानपूर्ण रूप कहलानेका अधिकार प्राप्त है, क्योंकि इसकी उत्पत्तिसे ही समस्त जीवधारियोंकी उत्पत्ति सम्भव हुई है।

पहले हम इस बातपर विचार करें कि जीवाणु कहते किसे हैं।

जीवित पदार्थकी सूक्ष्मातिसूक्ष्म वह इकाई जो अपने आप अकेली जीवित रहती है (हालाँकि अक्सर वह अकेली जीवित नहीं रहती) जीवाणु कहलाती है।

परमाणु (एटम) का जो सम्बन्ध पदार्थसे है वही सम्बन्ध जीवाणुका जीवित अंगोंके स्वतः जीवित छोटेसे छोटे भागसे है।

(इस तुलनासे घबरा न जाना। यह उदाहरणमात्र है समझानेके लिए। जीवाणु भी परमाणुओंसे बने होते हैं—यह विश्लेषणसे जाना जाता है।)

जिस तरह एटम (परमाणु) का विभाजन हो सकता है उसी प्रकार जीवाणुका विभाजन भी हो सकता है। इस विभाजनसे यह जाना जाता है कि जीवाणु एक प्रकारके केन्द्रिय गूदे (Nucleus) से निर्मित होता है जिसके चारों ओर जलीय और अर्धठोस कण होते हैं।

सब जीवित पदार्थ (तुम्हारा अपना शरीर भी) जीवाणुओं-से बने हैं। बहुतसे प्राणी, यहाँतक कि छोटेसे छोटे जीव भी करोड़ों जीवाणुओंसे बने होते हैं। जिन जीवोंमें केवल एक ही जीवाणु होता है वे सिवाय बहुत तेज सूक्ष्म-दर्शक यन्त्रकी सहायताके और

किसी तरहसे दिखायी नहीं पड़ते। गन्दे पानीमें रहनेवाला एमीबा (Amœba) नामक जीव एक जीवाणुका प्राणी है।

तुम्हारे हाथ-पैर न होनेपर तुम जिस तरह चलोगे यह एमीबा भी उसी प्रकार अपनेको आगेकी ओर ढकेलता हुआ, हानिकारक प्रभावोंसे बचता हुआ और भोजनकी ओर बढ़ता हुआ पानीमें चलता है। इसका अस्तित्व बस इसीके लिए है, जिस तरह तुम्हारे पैदा होनेपर तुम्हारा अस्तित्व तुम्हारे ही लिए था. तुम्हारे आगेसे भिन्न जो कुछ था उससे तुम्हें कोई सरोकार न था। जबतक उसके मनकी गति ऐसी रहेगी तबतक उसका कुछ भी ऊंचा विकास नहीं हो सकता।

यह सूक्ष्म अकेला जीवाणु अपने लिए स्वतः रासायनिक कारखाना है। यह अत्यन्त छोटा है, पर चुस्त है और अपने जीवनकी छोटी-मोटी आवश्यकताओंके लिए स्वतः परिपूर्ण है। अपने चारों ओरके पानीसे यह पोषक पदार्थ ग्रहण करता है और अपने केन्द्रिय गूदे तथा जलीय और ठोस कणोंके द्वारा उन पोषक पदार्थोंका उपयोग अपने प्रतिपालनके लिए करता है। इसे चलने-की, हजम करनेकी और बढ़नेकी शक्ति प्राप्त है।

इसमें जनन-शक्ति भी है। यह अपनेको दो भागोंमें विभक्त कर देता है। जैसे वर्षाके पानीकी बूंद झिलमिलीमें टपककर दो ठीक वैसी ही बूंदोंमें बंट जाती है, उसी तरह एमीबा भी जब दो भागोंमें विभक्त होता है, तब वैसे ही दो जीवाणु बन जाते हैं।

वैज्ञानिक हमें यही बतलाते हैं। परन्तु इस विषयमें आगे बढ़ने-के पहले मैं इसपर अपना कुछ विचार प्रकट करना चाहता हूँ।

यद्यपि हम जीवन और उत्पत्तिके विषयमें बहुत कुछ जानते हैं परन्तु हमारे ज्ञानकी सीमा यही बतलाती है कि वास्तवमें हम कुछ नहीं जानते। जो सिद्धान्त हमारे मनमें जमकर हमें प्रिय बन

गये है भविष्यमें होनेवाले नये आविष्कार उनमें किसी दिन भी उलट-फेर कर सकते है ।

अतएव मै यहाँ जो कुछ कह रहा हूँ उसे तुम ब्रह्म-वाक्य न समझ लेना । इसका एक कारण यह भी है कि मैंने अपने कथनको साफ और संक्षिप्त करनेके लिए बहुत सरल बना दिया है ।

अबतक इस विषयमें जो कुछ ज्ञान प्राप्त हुआ है मै यहाँ केवल उसका सारांश ही दे सकता हूँ और सिर्फ इतना कह सकता हूँ कि 'हमारा विश्वास है कि ऐसा ही हुआ होगा क्योंकि प्रमाण इसी तरहका पाया जाता है ।" यदि तुम्हें इस विषयमें दिलचस्पी हो तो सम्भव है तुम्ही आगे चलकर कोई ऐसा क्रान्तिकारी आविष्कार कर दो जो वर्तमान सिद्धान्तोंको उलट-पलट दे ।

इस समय जो ज्ञान प्राप्त है उसे ग्रहण करो और ज्यों ज्यों बड़े हो त्यों त्यों अपने मनको इतना सरल और लचीला बनाये रहो कि यदि पूर्वज्ञात सिद्धान्तोंके विरुद्ध किसी 'सत्य' तथ्यके दर्शन हो तो पहलेके सिद्धान्तोंको मनसे उतार फेकनेमें समर्थ हो ।

वैज्ञानिक चाहें कुछ भी कहते हों, मेरा अपना विश्वास है कि क्षुद्रसे क्षुद्र एमीबा भी किसी दूसरे एमीबासे सम्भवतः कुछ न कुछ भिन्न रूपका अवश्य है । यह दूसरी बात है कि यह भिन्नता इतनी सूक्ष्म है कि हमें इसका पता नहीं चलता । परन्तु यह मेरा व्यक्तिगत विचार है और इसे मै प्रमाणित नहीं कर सकता । जो हो, इससे उन दलीलोंकी सचाईमें कोई अन्तर नहीं पड़ता जिन्हें प्राणिशास्त्रविदोंने एमीबाके अस्तित्वपर कायम किया है ।

विकासका पहला कदम

हमारी मेरियों और परनालोंके एमीबा सदा एमीबा ही बने रहते हैं क्योंकि उनके कायिक विकासकी क्रमिक अवस्थाएँ और साधन प्राप्त नहीं है। परन्तु पृथ्वीके प्रारम्भ-कालकी अवस्थाएँ भिन्न प्रकारकी थीं।

उस कालमें जो विशेष अवस्थाएं और अन्यान्य तत्व विद्यमान थे, वे एकसे अधिक जीवाणुवाले जीवके क्रम-विकासमें सहायक थे।

अब यह समझनेकी बात है कि आपसकी भलाईके लिए कुछ जीवाणुओंके परस्पर सम्मिलित हो जानेसे उनके जीवनकी अवधि और उत्तमता जैसी बढ़ सकती है वैसी एक अकेले जीवाणुके द्वारा सम्भव नहीं है तुम्हें यह विदित हो जायगा कि यही सिद्धान्त सारे जीवनपर—वैवाहिक, पारिवारिक और सामाजिक जीवनपर—लागू है।

बहुत तरहकी आजमाइश और भूल-चूक करनेके बाद प्रकृतिने ही इस सिद्धान्तको खोज निकाला है और इसमें उसे बहुत समय लगा। बहुत धीरे धीरे और बहुत समयके पश्चात् जीवाणुओंके जटिल और पेचीदा संगठनका अभ्युदय हुआ।

यह याद रखना चाहिये कि प्रत्येक जीवाणु स्वतः परिपूर्ण है। गति, पाचनशक्ति, बढ़ना, जननशक्ति—ये सब बातें उसमें मौजूद हैं। ऐसे जीवाणुओंका समूह आपसमें सम्मिलित हो जाय तो इससे कुछ भलाई अवश्य हो सकती है। परन्तु जबतक वे सहयोगका मर्म ठीक-ठीक समझ न लें तबतक उनके गठित समूहसे सिर्फ बड़े आकारसे जितनी भलाई होगी उतनी ही बुराई भी।

कोई जीव, जिसमें अनेक असहयोगी जीवाणु है, भोजनकी ओर सरलतासे नहीं झुकेगा और उसका खतरेसे दूर भागना भी बड़े भद्दे ढंगका होगा। उसमें जितने जीवाणु होंगे उतने ही भागोंमें उसकी पाचनशक्ति और जननशक्ति बंट जायगी। वास्तवमें ऐसा जीव किसी प्रकारकी पूर्णता या ऐक्य प्राप्त नहीं कर सकता।

परन्तु सर्वप्रथम जिस जीवके अन्दरके जीवाणुओंमें परस्पर सहायक रूपमें कार्य करनेका सहयोग हुआ होगा उस जीवको अपने समकक्ष जीवोंकी अपेक्षा अवश्य ही अनेक सुविधाएं प्राप्त हुई होंगी।

प्रत्येक जीवाणुको अलग-अलग अपने-अपने जीवनका सारा काम करना पड़ता था, इसलिए यह काम सिर्फ मोटे और सादे तौरपर ही हो सकता था। जब कई जीवाणु मिलकर पारिवारिक जीवन व्यतीत करते थे तब गति, पाचन, शरीर-वृद्धि और वंश-वृद्धिके काम वे आपसमें बाँट लेते थे।

ऐसी अवस्थामें अपने-अपने विषयके विशेषज्ञ जीवाणु अलग अलग अपना सारा ध्यान अपने-अपने कामपर लगाते थे। इस प्रकार जीवाणुओंसे बने हुए जीवका जीवन अधिक जटिल और पेचीदा हो गया, पर साथ ही, वह अधिक योग्य भी बन गया।

इन बातोंको जान लेनेपर यह महत्वपूर्ण सिद्धान्त स्वीकार करना पड़ता है कि जीवनको—विशेषकर संसारकी आजकी परिस्थितिमें—भले प्रकारसे व्यतीत करनेके लिए पारस्परिक सहायता और कामोंका बटवारा अत्यन्त आवश्यक है।

क्रम-विकासके द्वारा एमीबासे ऊंची सतहका जीव बन जानेके लिए जिन प्राकृतिक अवस्थाओं और साधनोंकी आवश्यकता होती है, वे सब अवस्थाएं और साधन अत्यन्त प्राचीन कालमें पृथ्वी-पर वर्तमान थे।

खतरेसे बचनेके लिए एक साथ मिलकर चरनेकी जो स्वाभाविक बुद्धि पशुओंमें होती है, सम्भव है, वैसी ही किसी स्वतः उत्पन्न बुद्धिसे प्रेरित होकर भिन्न-भिन्न जीवाणु अपनी-अपनी रक्षाके लिए एक साथ मिलकर काम करने लगे हों। अथवा यह भी हो सकता है कि इस प्रकार जीवाणुओंके मेल-जोलके उत्तम फलसे ही पशुओंने मिलकर चरनेकी बुद्धि उत्तरोत्तर अधिकाधिक रूपमें पायी है।

अन्तिम बात यह है कि संगठित जीवाणुओंका एक ढाँचा अपनी योग्यतासे अधिक कालतक जीवित रह सकता था, परन्तु अलग-अलग रहनेवाले जीवाणु जीवनकी विपत्तियोंसे शीघ्र मर-मिटते थे।

ऊपर लिखी सब बातोंके होनेमें बहुत लम्बा अर्सा लगा और इन बातोंका कभी आगे बढ़ना और कभी पीछे हटना भी जारी रहा। परन्तु फल यह हुआ कि उत्तरोत्तर जीवनका कुछ न कुछ क्रमशः उन्नत रूप ही प्रकट होता रहा।

अत्यन्त प्राचीन कालमें बहुत ही धीर गतिसे होनेवाली इन सारी बातोंका सम्बन्ध हमारे आजके जीवनसे है।

करोड़ों और अरबों मनुष्योंसे भरे हुए इस संसारमें प्रत्येक मनुष्यका केवल अपने बल-बूतेपर जीवित रहना सम्भव नहीं है। आजके जटिल जीवनमें सफर, खाद्य पदार्थ, रक्षा, सन्तानोत्पत्ति—इत्यादि बातोंको बिना दूसरेकी सहायताके हम अकेले नहीं साध सकते। अकेले ये बातें कैसे सध सकती है यदि हम बहुत दूरकी सफर करना चाहते है, या बागोंके फलोंपर गुजर-बसर न करके हम कुछ और खाना चाहते हैं, अथवा सर्दी-गर्मीसे बचना और गुंडे-बदमाशोंसे अपनी रक्षा करना चाहते है।

हमारा जीवन दूसरोंके जीवनपर निर्भर है। हम उनके

कामोंने जीवित रहते हैं और वे हमारे कामोंसे जीवित रहते है। बच्चेका सामाजिक जीवनके योग्य बनना इसीलिए बहुत आवश्यक है।

सामाजिक जीवनके लिए कुछ व्यक्तिगत स्वार्थ-त्याग आवश्यक है, परन्तु सम्मिलित प्रयत्नकी सारी भलाइयाँ भी इसमें भरी है।

एक बात यह भी देखो कि प्रकृति गन्दे काम करनेवाले जीवाणुओंमें और ऊंचे काम करनेवाले जीवाणुओंमें कोई भेद नहीं मानती। तुलना करनेपर, मस्तिष्कके जीवाणु, मूत्र-ग्रंथिकी गन्दगी साफ करनेवाले जीवाणुओंसे ऊंचे नहीं कहे जा सकते।

समूचे शरीरका कार्य ठीक ठीक हो—इसके लिए प्रत्येक जीवाणु अपने-अपने स्थानपर आवश्यक है, और इसकी अच्छाई या बुराईकी जाँच इसी बातसे हो सकती है कि यह अपना काम कितनी योग्यतासे करता है।

इसी तरह हमारा जीवन-कार्य कुछ भी हो, हममें प्रत्येक व्यक्ति समूचे समाजकी भलाईके लिए समान रूपसे आवश्यक है और उसकी उत्तमता या निकृष्टताकी जाँच यही देखकर हो सकती है कि वह अपना कार्य कितनी योग्यतासे करता है।

जलसे स्थलपर

समुद्रमें जीवनके एकसे एक बढ़कर जटिल रूप उत्पन्न होते गये। याद रखो कि हम अभी लाखों करोड़ों वर्ष पहलेके आदि-जीवनके रूपोंका ही उल्लेख कर रहे है।

कौड़ी वाले जन्तु, समुद्रफेन, लिबलिबी मछली इत्यादि इन सभी रूपोंमें जीवनका विकास हुआ। फिर हड्डियोंके ढाँचेवाली मछली उत्पन्न हुई।

जीवन तब एक कदम आगे बढ़ गया था क्योंकि ऐसी मछली अपने प्रतिद्वन्द्वियोंसे अधिक मजबूत और चुस्त थी और अपनी हिफाजत कर सकती थी। परन्तु याद रखो कि ऐसी मछली भी भिन्न-भिन्न जीवाणुओंका जटिल संगठन-मात्र थी जिसमें प्रत्येक जीवाणुका अलग-अलग जीवन और अलग-अलग कार्य था।

समुद्रमें जीवनका जो विकास हो रहा था, आखिर उसकी भी एक सीमा थी। जमीनपर जीवोंके लिए पोषणकी नयी सामग्रियाँ हो गयी थीं और नयी परिस्थितियाँ हो गयी थीं। जीव उन सामग्रियोंको प्राप्त कर सकते थे और उन परिस्थितियोंके अनुकूल अपनेको बना सकते थे।

जन्तुओंकी इस तरहकी श्रेणियाँ अधिकांश नष्ट हो गयी। पृथ्वीके गर्भमें खड़िया-मिट्टीके रूपमें परिणत हुए उनके अस्थि-पंजर पाये जाते हैं और यह पता चलता है कि प्राचीन कालमें ऐसे जीव-जन्तु होते थे। उस प्रकारकी कुछ जन्तुश्रेणियाँ अब भी हैं। इन्हींमें मेंढ़क है। इसे तुम भलीभाँति जानते हो।

तुम सबने सम्भवतः मेढ़कका उत्पन्न होना देखा, सुना या पढ़ा होगा। कैसे अंडेसे टैडपोल (Tadpole) (मेढ़कका पूर्व रूप) प्रकट होता है और फिर कैसे धीरे-धीरे भिन्न-भिन्न अवस्थाओंको पार करता हुआ केवल जल-जन्तु ही न रहकर पेचीदा अंगोंको प्राप्त करता है और अन्तमें फुदकता हुआ जमीनपर आ जाता है—यह तुम जानते होगे।

विकासके इस साधारण उदाहरणको ध्यानमें रखना चाहिये क्योंकि जैसा आगे बताया जायगा, टैडपोलकी अवस्थामें मेढ़कका

बच्चा जो कुछ करता है वह सब क्रियाएं तुम अपनी माताकी कोखमें रहते हुए ही कर लेते हो।

माताके शरीरके अन्दर कोख वह अंग है जिसमें मानव-बीज बढ़ता है और बच्चेका इतना पूरा और मजबूत आकार बन जाता है कि वह संसारमें जन्म ले सकता है।

निम्न जीवनके रूपसे विकसित होती हुई जिन अवस्थाओंको पार करके मानव-जाति उत्पन्न हुई, कोखमें रहता हुआ मानव-बीज भी विकसित होता हुआ उन अवस्थाओंसे गुजरता है। कोखमें कुछ समयतक बच्चेके गलफड़े-जैसी चीजें भी होती हैं और बादको इनका स्थान फेफड़े ग्रहण कर लेते हैं। ये गलफड़े मछलीकी अवस्थामें साँस लेनेके यंत्र हैं। इस प्रकार गर्भमें बच्चेका विकास होता रहता है।

मानव-जातिके विकासको आईनेकी तरह झलकानेवाले इन परिवर्तनोंमें कुछ तो ऐसे हैं जो तुम्हारे जन्म लेनेके पहले ही हो सकते हैं। परन्तु मेंढ़क जब जन्म लेता है तब उसके शरीरका आधा विकास हो चुकता है और केवल अपने ही बल-बूतेपर वह टैडपोलकी अवस्थाको पहुच जाता है। मेंढ़कके पूर्वजोंको पहले पहल टैडपोलकी अवस्थातक पहुचनेके लिए हजारों वर्ष और न जाने कितनी पीढ़ियाँ लगी थीं।

मानसिक और जननेन्द्रिय सम्बन्धी शारीरिक विकासकी कुछ ऐसी अवस्थाएं भी हैं जिनमे होकर मनुष्यको, जन्म लेनेके पश्चात्, अवश्य गुजरना पड़ता है।

इनमें कुछ परिवर्तन तुममें इस समय भी हो रहे होंगे। इन परिवर्तनोंमें तुम्हारी कुछ सहायता कर सकूं—इसी उद्देश्यसे मैं यह पुस्तक लिख रहा हूँ।

अगले विकासकी अवस्थाएँ

जब जीव स्थलके जीवनके योग्य अपनेको बनाने लगे तब गलफड़े, जो समुद्रसे आक्सीजन खींचते हैं और जल-जन्तुओंके साँस लेनेका काम करते हैं, धीरे-धीरे फेफड़ेके रूपमें आ गये।

यह परिवर्तन बहुत आवश्यक था क्योंकि फेफड़ोंमें आक्सीजनको उपयोगमें लानेकी बड़ी ताकत होती है और जैसे इंजन कोयला जलाता है, उसी तरह हमारा शरीर हमें शक्ति प्रदान करनेके लिए आक्सीजनको इंधनकी तरह जलाता है।

गतिशीलताके लिए अवयव आवश्यक हो गये। पहले पहल स्थलके जीव केवल कुलबुलाते थे या डगमगाते थे, या फुदकते थे। अतएव विशेष अवयवोंकी आवश्यकता पड़ी और आखिरकार वे उत्पन्न हो गये। गति इत्यादि विशेष कार्य विशेषत्व-प्राप्त जीवाणुओंपर पड़े। (इस विषयका सविस्तार वर्णन अगले अध्यायमें दिया गया है।) नीचे लिखे उदाहरणसे यह बात ठीक-ठीक समझमें आ जायगी।

मान लो तुम बूमेबाज (Boxer) होना चाहते हो परन्तु तुम्हारी बाहोंकी मांस-पेशियाँ ढीली और कमजोर हैं, इसलिए पूरी-पूरी इच्छाके रहते हुए भी तुम कद और वजनमें अपने ही समान किसी दूसरे लड़केका मुकाबला नहीं कर सकते।

अपनी प्रबल इच्छाको पूरी करनेके लिए तुम क्या करोगे?

तुम इस कलाको सीखोगे। परन्तु वास्तवमें ढीली और कमजोर मांस-पेशियोंकी कसरत ही तुम्हारी शिक्षा होगी। तुम नित्य गेंद-खानेमें (Gymkhana) जाकर गेंदको घूंसे मारोगे और इस तरह तुम्हारी मांस-पेशियोंमें ताकत आ जायगी और

बटी हुई गठीली रस्सियोंकी तरह मांस-पेशियाँ तुम्हारी बाँहोंमें उभर आयेंगी।

इन मांसपेशियोंमें इतनी ताकत आ जाती है कि तुम अपने प्रतिद्वन्द्वीके लिए भयानक बन जाते हो। ये मांस-पेशियाँ कहाँसे आ गयीं?

क्या तुम्हारी इच्छा-शक्तिसे ही ये उत्पन्न हो गयीं? हाँ, बहुत कुछ यही बात है। तुम्हारी इच्छा-शक्तिने ही तुम्हें प्रयत्नशील बनाया। इसी तरह यह सोचो कि यदि तुम्हारे जीवनकी कुछ आवश्यकताएँ इसी बातपर निर्भर हैं कि तुम उन्हें पूरी करनेके योग्य बनो, तो प्रयत्न करनेपर कैसी कुछ योग्यता अपनेमें पैदा कर सकते हो! जीवनके मौलिक रूपोंको ठीक ये ही काम करने पड़े थे।

परन्तु तुम्हारी बाँहकी उभारदार मांस-पेशी आयी कहाँसे?

यह कहनेसे काम नहीं चलेगा कि मांस-पेशी तो पहलेसे ही थी। पहले वह कुछ और थी और अब कुछ और है। इसका कारण यह है कि बारम्बारके व्यवहारसे तुमने इस मांस-पेशीमें बढ़ने और विकसित होनेकी प्राकृतिक शक्तिको क्रियाशील बना दिया। यही प्राकृतिक शक्ति समस्त जीवनका आधार है।

यह इस बातका उदाहरण है कि मनुष्य थोड़ेसे समयमें कितना कुछ कर सकता है। अब हमें प्रारम्भिक अवस्थाओंके जीवोंके विकासके सम्बन्धमें यह मान लेना चाहिये कि उनकी जरूरतोंने ही उन्हें क्रियाशीलताकी प्रेरणा दी। जरूरतें थीं—खाद्य, सुरक्षा और गतिसम्बन्धी। तुम्हारी उसी इच्छा-शक्तिका स्थान इस प्रेरणाने ग्रहण किया था।

यद्यपि उन जीवोंकी विकासकी प्रेरणा तुम्हारी इच्छा-शक्तिसे

भिन्न थी परन्तु विकासका उपाय एक-सा ही था, अर्थात् बार-बार नई चेष्टा और प्रयत्न।

उत्तरोत्तर उन्नतिशील जीवनके जटिल और श्रेयतम रूपोंका क्रम-विकास ही उन जीवोंका लक्ष्य था। उनका लक्ष्य तुम्हारे लक्ष्यसे बहुत ही बड़ा था इसलिए उनके प्रयत्न भी तुम्हारी चेष्टाओंसे महान् थे। इन प्रयत्नोंमें हजारों वर्ष लगे और हजारों-लाखों जीव बारम्बार प्रयत्न करते रहे। तब कहीं जाकर उनका अनवरत अभ्यास उनके वंशजोंका स्वभाव बना।

स्थलपर जीवन

इस प्रकार जीवन अग्रसर होता गया।

साँप, कीड़े-मकोड़े, पक्षी, स्तनपायी पशु इत्यादि हर तरहके जीवोंकी श्रेणियाँ एक ही जड़से पैदा जीवन-रूपी पेड़की अलग-अलग डाल हैं। प्रत्येक श्रेणीका प्रत्येक जीव उस श्रेणीकी डालका फूल है और उसके बालबच्चे फल हैं।

ये जीवनकी अलग-अलग श्रेणियाँ इतनी अधिक और इतनी विभिन्न हैं कि एकाएक यह महसूस करना या समझना कठिन हो जाता है कि उनका आपसमें किसी तरहका लगाव है। परन्तु वर्तमानकालके जीवोंके ढाँचोंके अध्ययनसे और प्राचीनकालके नूतनावृद जीवोंके गड़े हुए ढाँचोंकी ज्ञान-वृद्धिसे यह बात विश्वस्त रूपसे समझमें आ जाती है कि सब प्रकारके जीव एक दूसरेसे सम्बन्धित हैं।

इस प्रकारके विकासकार्यमें बहुत बड़ा समय लगा,—इतना

बड़ा कि इसकी तुलनामें केवल मनुष्य-जातिके इतिहासका आरम्भ जिस समयसे माना जाता है, वह बहुत ही छोटा हो जाता है।

इस बातसे भविष्य बड़ा आशाजनक प्रतीत होता है। यदि इतना लम्बा समय और इतना बड़ा विकास हमारे पीछे है, तो कमसे कम इतना ही लम्बा समय और इतना ही बड़ा विकास हमारे आगे भी क्यों न होगा?

यदि हम महसूस करने लगें कि हम उत्तरोत्तर विकसित जीवनकी जंजीरकी आवश्यक कड़ियाँ हैं, तो हमारे अस्तित्वका एक मौलिक अर्थ—एक महान् और प्रेरणात्मक अर्थ होगा।

जिस जीव-परिवारसे, अथवा समस्त जीवन-परिवारकी जिस शाखासे, मनुष्य-जातिका सीधा सम्बन्ध है, वह है स्तनपायी जीवोंकी जाति। इस जातिके मादा जीवोंमें अपने बच्चोंको दूध पिलानेके लिए स्तन विकसित हो जाते हैं। इस तरहके कुछ जानवर, जैसे सिंह, सुअर, गाय, बन्दर और कंगारू—स्तनपायी जीव-परिवारकी निम्न-श्रेणीके अन्तर्गत हैं।

शारीरिक और आत्मिक—दोनों ही दृष्टियोंसे समस्त जीवन हमसे सम्बन्धित है और हम समस्त जीवनसे सम्बन्धित है।

हमारे सबसे अधिक सगे सम्बन्धी हैं बन्दर-परिवारकी कुछ श्रेणियाँ। यह स्मरण रहे कि 'सम्बन्ध' शब्द यहाँ बहुत बड़े व्यापक अर्थमें व्यवहृत हुआ है, क्योंकि हमें अपने महान् विकासके मार्गमें उनकी श्रेणीसे अलग हुए करोड़ों वर्ष बीत चुके हैं।

हाथ, जो कि बड़े कामका अंग है, हमने उन्हींसे पाया है। गर्म देशोंके जंगलोंमें युगों जीवन व्यतीत करनेपर मुड़नेवाले अंगूठेके साथ हाथका विकास बन्दरोंमें ही हुआ था। जब विकास-मार्गमें हम उनसे बहुत आगे बढ़ गये तब हम सीधे खड़े होकर चलने-फिरने लगे। दूसरी ओर यह हुआ कि अन्य अंगोंकी

अपेक्षा हमारे हाथका अधिक विकास रुक गया और उसकी लम्बाई चौड़ाई इत्यादि जहाँतक होकर रह गयी, वहीं हमारी आँखोंको भली मालूम पड़ने लगी।

अब हमें हाथके बल झूलनेका काम नहीं पड़ता। हाथका विकास रुक जानेका यही कारण है।

जीवनके इतिहाससे हमें सबसे बड़ी शिक्षा यह मिलती है कि जिस शक्तिका उपयोग नहीं किया जाता वह नष्ट हो जाती है, और जिसका समुचित उपयोग होता है, वह बढ़ती और विकसित होती जाती है।

अध्याय ४

पैतृक प्रभाव

यह प्रत्यक्ष है कि कोई भी जीव अपने छोटेसे जीवनमें किसी तरहकी बहुत थोड़ी-सी ही उन्नति साधन कर सकता है।

ऐसी अवस्थामें जीवनकी शक्तियाँ उत्तरोत्तर समुन्नत जीवोंके विकासके पथपर बड़ी तेजीके साथ कैसे बढ़ गयी ?

इसका उत्तर है—पैतृक प्रभावके द्वारा।

हम यह जान चुके है कि प्रारम्भिक अवस्थामें जीव दो टुकड़ों-में बट जाता था और इस प्रकार सन्तानोत्पत्ति होती थी।

परन्तु इस क्रियाकी खराबी यह है कि ठीक एक ही तरहके दो जीव पैदा होते है जिसमे उनकी श्रेणीविशेषकी उन्नति नहीं हो सकती।

इस तरहकी सन्तानोत्पत्तिका सारा कार्य एक अकेले जीवाणुके लिए बहुत बड़ा बोझ होता होगा। इसलिए जब सहयोग करने-वाले जीवाणुओंने जीवनके कार्य आपसमें बाँटे होंगे तब कुछ जीवाणुओंने केवल जनन-कार्यमें ही विशेषता प्राप्त की होगी।

प्रकृतिने बहुत ज्यादा और अलग-अलग ढंगसे आजमाइशें कीं तब कहीं जाकर सन्तानोत्पत्तिकी आदर्श प्रणालीका एक प्राकृतिक नियम बना।

साधारणतया जिस सिद्धान्तका अनुसरण हुआ वह यह कि सन्तानोत्पत्तिके पूर्व दो जीवोंके जनन-कार्य-पटु जीवाणुओंका

आपसमें मिलकर एक होना जरूरी था। इसके बाद ही वे टुकड़ोंमें बंटते थे

इसका कारण समझना बहुत सहज है।

इन्द्रियजन्य सन्तानोत्पत्ति

यदि दो जीव, जिनका शारीरिक गठन विभिन्न प्रकारका हो, अपना-अपना कुछ हिस्सा देकर बच्चा उत्पन्न करें तो वह बच्चा उन दोनों जीवोंसे भिन्न होगा, हालाँकि बहुतेरी बातोंमें उनसे मिलता-जुलता हुआ होगा।

पीढ़ी-दर-पीढ़ी इस प्रकारके जोड़ोंसे सन्तान उत्पन्न होनेकी कल्पना करके तुम समझ जाओगे कि प्रत्येक जोड़ेका बच्चा बराबर विभिन्न प्रकारका होता जायगा। वस्तुतः आजकल अपनी पसन्दके मुताबिक जीवन-संगिनी या जीवन-साथी चुननेका विस्तृत क्षेत्र है। जैसा तुम्हारा चुनाव होगा उसीके अनुसार तुम्हारी सन्तान होगी।

परन्तु इस अवस्थातक पहुँचनेके पहले प्रकृतिने अनेकों प्रकारसे सन्तानोत्पत्तिकी आजमाइशें की थीं।

कुछ जीव उभयलिङ्गी हुए अर्थात् खुद ही नर और मादा दोनों थे। वे आप ही सन्तानोत्पत्ति करते थे। कुछ ऐसे जीव भी हुए जिनका लिङ्ग जीवनकी विभिन्न अवस्थाओंमें बदल जाता था। इस तरहके जीवोंका एक उदाहरण ओयस्टर (Oyster एक प्रकारकी सीप) अब भी है। विभिन्न समयमें सन्तानोत्पत्तिके विभिन्न तौर-तरीके थे।

इन्द्रियजन्य सन्तानोत्पत्तिकी प्रणालीका जिसमें दो विभिन्न माता-पिताका होना जरूरी है, यह बहुत बड़ा लाभ है कि विभिन्न प्रकारकी सन्तान उत्पन्न होती है और वह अपने माता-पिताके उत्तम गुणों और आकार-प्रकारको ग्रहण करती है।

यदि मनुष्य भी एमीबाकी तरह पैदा होते तो तुम सभी बातोंमें कम या अधिक अपनी माताकी ही नकल होते। सबलोग प्रायः एक ही तरहके होते। अवस्था शोचनीय होती, जिसका यह भी अर्थ होता कि मनुष्य-जातिके विकासकी इतिश्री हो गयी।

अपने अनुभवसे अब तुम समझ गये होगे कि तुमने अपनी सूरत-शक्ल और चरित्रका चाहे जितना बड़ा हिस्सा अपने माता-पितासे पाया हो, फिर भी तुम उनसे विभिन्न व्यक्ति हो तथा तुम्हारा जीवन और चरित्र उन लोगोंसे जुदा है।

इसके लिए तुम्हें इन्द्रिय-द्वारा जननक्रिया-प्रणालीका कृतज्ञ होना चाहिये जिसने दो विभिन्न वंशके व्यक्तियोंकी आकृति और गुणोंका एकीकरण तुममें किया।

बुद्धिमान माता-पिता इस बातको जानते हैं और अपने बच्चोंके साथ व्यवहार-बर्तावमें इसे मद्देनजर रखते हैं। इसी तरह बुद्धिमान् बच्चे भी यह समझते हैं कि उनके माता-पिताका जीवन-सम्बन्धी लम्बा अनुभव विपत्तिमें उनके लिए पथ-प्रदर्शकका काम दे सकता है।

परन्तु जो माता-पिता यह नहीं समझ सकते हैं कि उनका बच्चा हूबहू उन्हींका संस्करण नहीं है, वे प्रायः व्यर्थकी आफत मोल लेते हैं। केवल जरासे व्यापक दृष्टिकोणसे काम लेनेसे ही इस आफतसे बचा जा सकता है।

तुम समझ गये होगे कि नर और मादाका भेद और विकास युगोंमें अत्यन्त प्राकृतिक और उपयोगी ढंगसे हुआ। परन्तु

इसके विषयमें जितनी मूर्खतापूर्ण बातोंका प्रचार हुआ उतना हमारे जीवनके किसी अन्य अंगके बारेमें नहीं हुआ।

स्त्री या पुरुष (नर या मादा) जीवनके उच्च या नीच भेद नहीं है। ये जीवनके दो जुदा-जुदा और पूरक रूप है, अर्थात् एक दूसरेकी कमीको पूरा करता है और एककी पूर्तिके लिए दूसरेका होना आवश्यक है।

स्त्री और पुरुषकी बनावट ऐसी होती है कि सन्तानोत्पत्तिके लिए पुरुषके विशेष जीवाणु स्त्रीके विशेष जीवाणुओंको उपजाऊ बनाते है।

आश्चर्यकी बात है कि शहरकी हवामें पले बालक 'उपजाऊ' होनेका ठीक-ठीक अर्थ नहीं समझते। उदाहरणके लिए, मुर्गीके अण्डेमें बच्चा पैदा हो ही नहीं सकता यदि पहले मुर्गीके पेटमें जो अण्डेका बीज था उससे मुर्गेके बीजका मेल न होता।

देहातके बालकोंको इस बातका काफी अनुभव होता है और इसलिए वे सोचेंगे कि भला ऐसा भी कोई आदमी है जो इस सीधी-सी बातको न जानता हो। परन्तु वास्तवमें अधिकांश शहरी बालक इस तरहकी बहुतेरी बातोंसे अनभिज्ञ होते है।

पैतृक प्रभावकी कार्य-शैली

विकासके परिवर्तनकी गति पीढ़ी-दर-पीढ़ी कैसे अग्रसर होती है—इस विषयपर जीवशास्त्रविदोंमें मतभेद है।

बहुतेरे जीवशास्त्रविदोंके मतसे लोगोंके व्यक्तिगत अभ्यास उनके वंशजोंको अपने आप प्राप्त नहीं हो सकते। उनका कहना है

कि ऐसा होनेके पहले उनके बच्चा उपजाने वाले बीजमें भी कुछ परिवर्तन होना आवश्यक है।

जीवशास्त्रविदोंके दूसरे दलकी दलील है कि यदि लोगोंकी काफी पीढ़ियाँ किसी प्रकारके विशेष अभ्यास करती चली आ रही है तो उनके बीजमें अपने आप आवश्यक परिवर्तन हो जायगा जिससे वे अभ्यास आगे होनेवाले बच्चोंकी प्रकृति या स्वभाव बन जायँगे।

इन दोनों विचारोंके मुखिया क्रमशः डारविन और लामार्क है। व्यक्तिगत रूपसे मुझे लामार्कका मत मान्य है।

ये बातें तुम्हें साफ तौरसे समझानेके लिए एक पुराना उदाहरण देना सबसे अच्छा उपाय है। उदाहरण इतना पुराना है कि इसके रचयिताका नाम बताना कठिन है।

डारविनके अनुयायी कहेंगे कि जिराफ (Jiraffe) के बड़ी लम्बी गर्दन इसलिए होती है कि छोटी गर्दनवाले जिराफ खाद्य-पदार्थ पानेमें असमर्थ होकर मर-खप गये। इसीलिए लम्बी गर्दन-वाले जिराफोंकी सन्तान जिन्दा रही। चूंकि लम्बी गर्दनोंका होना उनकी प्रकृतिमें शामिल था और वह प्रकृति उनके बीजमें थी इसलिए उनकी यह आकृति अनेक बच्चोंमें भी आ गयी।

लामार्कके अनुयायी कहेंगे कि खाद्य पदार्थ पानेके लिए लम्बी गर्दनका होना जरूरी था इसलिए जिराफोंकी पीढ़ी-दर-पीढ़ी लम्बी गर्दन पानेके लिए अज्ञात भावसे प्रबल इच्छा करती रही। यह इच्छा वैसी ही थी जैसी कि तुममें अपनी बाँहोंकी मांस-पेशियाँ मजबूत करनेके लिए हुई थी। इस तरह कितनी ही पीढ़ियोंके बाद जिराफोंके बीजमें कुछ परिवर्तन हुआ और उनके लम्बी गर्दनवाले बच्चे पैदा हुए। उन बच्चोंके पूर्वजोंने आवश्य-कता और अभ्यासके कारण लम्बी गर्दनें प्राप्त की थी।

इन दोनों विचारोंमेंसे कौन-सा मत ठीक है, इसे प्रमाणित करना कठिन है। यदि तुम्हें इस विषयमें दिलचस्पी है तो यह भी एक प्रश्न है जिसे, सम्भव है, तुम अपने जीवनमें आगे चलकर हल कर सको।

ऊपर लिखे दोनों ही मत ठीक हो सकते है और सम्भव है दोनों ही तरहकी बातोंके मेलसे ऐसे विकास हुए हों।

पैतृक आकृति और गुणोंकी प्राप्ति

अब हम इस मूल प्रश्नपर विचार करें कि माता-पिताकी आकृति और गुण उनके बच्चोंमें कैसे आ जाते हैं।

जैसा कि हम पहले बतला चुके हैं, जीवाणुओंमें—किसी भी जीवाणु-कोष्ठ (Cell) में जो अकेले जीवका आधारभूत होता है—एक न्यूक्लियस (Nucleus) और तरल पदार्थमें लटकते हुए बहुतेरे कण होते है।

न्यूक्लियस (Nucleus) क्या करता है और इसके कणों और तरल पदार्थमें क्या क्या रासायनिक द्रव्य है—यह जीवाणु-कोष्ठके उस कामपर निर्भर होता है जो उसे अपने अंगी जीवके शरीरके अन्दर रहकर करना पड़ता है। जीवाणु-कोष्ठ उस जीवका एक भाग है।

उदाहरणके लिए, यकृत (Liver) के जीवाणु कोष्ठ (Cells) स्नायु-तन्तुओंके जीवाणु-कोष्ठोंसे भिन्न प्रकारके होते हैं क्योंकि उन्हें भिन्न प्रकारके काम करने पड़ते है। जनन-कार्य करने वाले जीवाणु-कोष्ठ बिलकुल अन्य प्रकारके होते हैं। इसके अलावा स्त्री

और पुरुषके शरीरमें रहनेवाले सन्तानोत्पादक जीवाणु भी एकसे नहीं होते। स्त्री और पुरुषके भेदसे वे भी भिन्न प्रकारके होते हैं।

जैसे कि कुछ विस्तारके साथ आगे चलकर वर्णन किया जायगा, पुरुष और स्त्री—दोनोंकी जननेन्द्रियाँ एक विशेष प्रकार के जीवाणु उत्पन्न करती हैं। खुलासा तौरपर समझानेके लिए हम उस विशेष प्रकारके जीवाणुओंका नाम 'बीज' रखेंगे।

स्त्री जिस बीजको उत्पन्न करती है उसे ओवम (Ovum) कहते हैं और पुरुष द्वारा उत्पन्न बीजको स्पर्म (Sperm) कहते हैं।

ये बीज—ओवम या स्पर्म—अलग अलग उत्पत्ति-कार्य नहीं कर सकते। स्त्रीका बीज पुरुषके बीजसे मिलकर उपजाऊ बनता है और दोनोंके मेलसे जो बीज बनता है वही सन्तान उत्पन्न करता है।

तुम्हारे शरीरके प्रत्येक जीवाणु-कोष्ठके न्यूक्लियस (Nucleus) में अड़तालिस छोटे छोटे कण होते हैं जिन्हें क्रोमोसोम (Chromosom) कहते हैं। इनके आकार-प्रकारसे ही तुम्हारा आकार-प्रकार निश्चित होता है।

वंशजात शारीरिक और मानसिक गठनकी ओर जो झुकाव (प्रवृत्ति) होता है उसीके कीट क्रोमोसोमों (Chromosoms) में होते हैं। मैं 'झुकाव' शब्दका प्रयोग इसलिए कर रहा हूँ कि तुम वंशजात या पैतृक आकृति स्वभाव इत्यादिसे एकदम बंधे और जकड़े हुए नहीं हो।

जब तुम गर्भमें रहते हो उस समय और जन्म लेनेके बाद भी तुम्हारे जीवनमें ऐसी बहुतेरी घटनाएं घटित होती हैं जो किसी न किसी तरह उस क्रोमोसोम-समूहकी प्रकृतिके मौलिक प्रभावमें हेर-फेर कर सकती हैं।

तुम स्वयं अपने मनोबल और इच्छाशक्तिसे गर्भजात उस

मौलिक प्रभावकी सम्भावनाओंको किसी अंशतक बदलकर अच्छे या बुरे बन सकते हो।

तुम लम्बे होगे या नाटे, काले होगे या गोरे, बुद्धिमान् होगे या कुंद-जेहन. शान्त स्वभावके होगे या अशान्त चित्तके. पुरुष होगे या स्त्री—ये सारी बातें क्रोमोसोम-गणकी प्रकृतिमें रहती हैं, जिन्हें तुम अपने माता-पितासे प्राप्त करते हो।

शरीरके अन्यान्य समस्त जीवाणु-कोष्ठोंके न्यूक्लियसमें अड़तालिस-अड़तालिस क्रोमोसोम होते है. परन्तु बीज-रूपमें रहनेवाले जीवाणुकोष्ठों (Seed Cells) में चाहे वे नर हों या मादा केवल चौबीस क्रोमोसोम होते है।

जब स्पर्म (Sperm) ओवम (Ovum) से मिल-जुल जाता है तब उस मिश्रणसे अड़तालिस क्रोमोसोम हो जाते हैं। ये माता-पिताके शरीरके अन्यान्य भागोंमें रहनेवाले क्रोमोसोमसे भिन्न प्रकारके होते है, फिर भी उनमें कुछ समानता होती ही है।

जब स्पर्म और ओवम मिलकर एक हो जाते हैं तब वह मिश्रित रूप एमीबाकी तरह विभक्त होने लगता है। स्पर्ममें ४८ क्रोमोसोम और ४८ टुकड़ोंमें विभक्त ओवम मिलकर कितने ही 'सेट' (Set) बनाते है, जिनकी संख्या लाखोंकी हो जाती है।

इस प्रकार जो जीवाणु बनते है वे माताके गर्भमें बच्चेको बनानेके लिए अपने-अपने हिस्सेका काम करते है। कोई कुछ काम करता है और कोई कुछ। इस प्रकार जन्म लेनेके लिए एक सम्पूर्णतः नवीन प्राणीकी रचना होती है।

यह प्राणी कैसा होगा—इस बातकी अनन्त सम्भावनाएं हैं क्योंकि इसके पूर्वजोंके वंशगत प्रभावका बड़ा लम्बा सिलसिला है। माताके दिये हुए २४ क्रोमोसोम एक दूसरेसे भिन्न प्रकारके होते है। तुम्हारे शरीरके विभिन्न भाग और मस्तिष्क कैसे होंगे ?

यह बात इनमें लक्षित होती है। इनमें प्रत्येक क्रोमोसोमका उपयुक्त साथी तुम्हारे पिताके दिये हुए २४ क्रोमोसोमोंमें रहता है।

प्रत्येक क्रोमोसोम बीजोंकी लड़ी-सा होता है। इसके कितने ही छोटे-छोटे सेक्शन या विभाग होते हैं जिन्हें जेने (Genes) कहते हैं। विश्वास किया जाता है कि प्रत्येक जेने (Gene) में एक शक्ति होती है जो बच्चोंके आकार-प्रकारको जन्म देती है. जैसे आँखोंका काली या भूरी होना, कदका लम्बा या नाटा होना, इत्यादि।

यदि किसीके सभी निकटवर्ती पूर्वज नाटे हुए हों तो कद देनेवाला जेने (Gene) उसे नाटापन देगा।

यदि पूर्वज नाटे भी हों और लम्बे भी हों, तो कद देनेवाला जेने लम्बाई देगा। जहाँ लम्बे और नाटेकी प्रतिद्वन्द्विता होगी वहाँ लम्बा ही जीतेगा।

यदि पूर्वजोंमें नाटे मनुष्य अधिक हों और लम्बे कम, तो बीज-कोष्ठोंमें कुछ लम्बाई देनेवाले जेने होंगे और कुछ नाटापन देनेवाले जेने होंगे।

माता और पिता अपने-अपने निकटवर्ती पूर्वजोंसे प्राप्त कद देनेवाले जेनेका प्रभाव गर्भावस्थामें अपने बच्चेको प्रदान करते हैं।

इसका निम्नलिखित परिणाम होता है:—

१—यदि माता-पिता लम्बे होंगे तो बच्चे लम्बे होंगे।

२—यदि माता-पिता नाटे होंगे तो बच्चे नाटे होंगे।

३—यदि माता-पितामें कोई लम्बा और कोई नाटा होगा तो बच्चे लम्बे होंगे।

४—यदि नम्बर ३ में कथित जोड़ेकी सन्तान किसी नाटे कदके व्यक्तिसे विवाह करे तो बच्चे लम्बे भी हो सकते हैं

और नाटे भी। लम्बे कदके पिता या माताके बीज मिश्रित होंगे—कुछ बीज लम्बाईके होंगे और कुछ नाटेपनके। यह तो मौकेकी बात है कि दो तरहके बीजोंमें किस तरहका बीज व्यवहारमें आयगा।

५—यदि नम्बर ३ या ४ में कथित जोड़ोंकी सन्तान आपसमें विवाह करे तो अधिक सम्भावना यही है कि उनके बच्चे लम्बे होंगे क्योंकि लम्बाई नाटेपनपर हावी होती है।

लम्बाई और नाटेपनके विषयमें जो कुछ ऊपर बताया गया है उसका सम्बन्ध केवल कदसे ही नहीं है बल्कि पूर्वजोंके शारीरिक और मानसिक गठनसे भी है।

बच्चा जब बड़ा होने लगता है तब उसके ग्लैण्ड (Glands) के विकाससे ही उसकी लम्बाई या नाटेपनपर असर पड़ता है। ऊपर जो बात हमने बतायी है उससे सूचित होता है कि वंशका प्रभाव बच्चेको किस ओर झुकाता है।

जो नियम ऊपर दिये गये है वे आँखोंपर भी लागू हैं। यदि जोड़ा बेमेल आखोंका है तो भूरी आँखें काली आखोंपर विजय प्राप्त करेंगी।

इस प्रकार तुम्हारी आँखों और बालोंके रंग, तुम्हारे शारीरिक गठन, तुम्हारे चरित्रकी बुनियाद इत्यादिका निर्णय होता है।

यह याद रखना चाहिये कि विरासत या वंशके प्रभावसे तुम्हें जो कुछ मिलता है वह तद्विषयक एक झुकाव या लगाव भर होता है। बहुत विषयोंमें तुम्हें अब भी इतनी सामर्थ्य प्राप्त है कि अपने जीवनको बना लो या बिगाड़ लो।

तुम लड़के या लड़की क्यों हो ?

वंशजात प्रभावकी ओर जो झुकाव (प्रवृत्ति) होता है उसका वर्णन किया जा चुका है। उससे यह निष्कर्ष निकलता है कि एक अर्थमें तुम पिता और माता, अर्थात् पुरुष और स्त्री—दोनोंके ही रूप, गुण, चरित्र इत्यादि प्राप्त करते हो।

मानवजातिके पूर्वजोंके अन्धकारमय अतीत कालमें उभय-लिङ्गी जीव भी होते थे।

अतएव एक विशेष प्रणालीसे यह निर्धारित होता है कि सन्तान लिङ्गके विषयमें अपने पिताके अनुरूप होगी या माताके।

बच्चेके शरीरके प्रत्येक जीवाणु-कोष्ठमें लिङ्ग-सम्बन्धी क्रोमोसोम माता-पिताके क्रोमोसोमोंसे किस प्रकार मिश्रित हुए हैं—इसीपर बच्चेका लड़का या लड़की होना अवलम्बित है।

स्त्रीके शरीरके प्रत्येक जीवाणु-कोष्ठमें लिङ्ग-सम्बन्धी दो बड़े क्रोमोसोम होते हैं। ये ही उसे स्त्रीत्वका रूप प्रदान करते हैं अर्थात् इन्हींके होनेसे स्त्री, "स्त्री" है।

पुरुषके प्रत्येक जीवाणुकोष्ठमें लिङ्ग-सम्बन्धी एक बड़ा और एक छोटा क्रोमोसोम होता है। इस मिश्रणसे उसे पुरुषत्व प्राप्त होता है।

परन्तु जैसा कि हम पहले बता चुके हैं, जब पुरुष और स्त्रीके सन्तानोत्पादक अंगोंसे बीज बनते हैं तब प्रत्येक बीजको कुल २४ क्रोमोसोम ही प्राप्त होते हैं। स्त्रीके प्रत्येक बीजमें लिङ्ग-सम्बन्धी एक बड़ा क्रोमोसोम रहता है। दूसरी ओर पुरुषके बीजमें लिङ्ग-सम्बन्धी या तो एक बड़ा या एक छोटा क्रोमोसोम होता है।

इसलिए जब ओवम (Ovum) और स्पर्म (Sperm) मिलेंगे और मिलकर एक हो जायेंगे तब उस मिश्रित पदार्थमें या

तो दो बड़े-बड़े या एक बड़ा और एक छोटा लिङ्ग-सम्बन्धी क्रोमोसोम होंगे।

अतएव स्त्रीके ओवम (Ovum) में पुरुषके स्पर्म (Sperm) ने बड़ा क्रोमोसोम डाला है या छोटा—इसीके अनुसार क्रमशः लड़की या लड़का होगा। अर्थात् यदि बड़ा क्रोमोसोम डाला है तो लड़की होगी, और छोटा डाला है तो लड़का होगा।

जब प्रकृति स्वयं गलती करती है

कोई भी व्यक्ति सम्पूर्ण रूपसे न तो पुरुष है और न स्त्री। हमारा शरीर ही इस बातका साक्षी है कि पुरुष और स्त्री सदासे एक दूसरेसे भिन्न नहीं रहे। व्यर्थ ही पुरुषोंकी छातीपर ढिपनियाँ अब भी होती है। स्त्रियोंके गुप्त अंगका एक भाग एक छोटी फुनगी है जो कि पुरुषके गुप्तांगका अविकसित रूप-मात्र है।

हममें बहुतोंके लक्षण 'खिचड़ी' होते हैं, अर्थात् कुछ बातें स्त्रियों-जैसी और कुछ पुरुषों-जैसी होती हैं। यह सच है कि अधिकतर हममें या तो नारीत्वके लक्षणोंका प्रभुत्व है या पुरुषके लक्षणोंका। इन्हींके अनुसार हम नारी या पुरुष होते हैं।

जिन परिवारोंके मातृ-पितृ-वंशमें कुछ अस्वाभाविक बातें हो गयी रहती है, उनमें कभी-कभी कुछ खराबी आ जाती है।

तुम्हें याद होगा, क्योंकि हम बता चुके है, कि वर्तमान समय की प्रचलित जनन-क्रियाकी प्रणालीको आमतौरसे निर्धारित करनेके पूर्व प्रकृतिने इस क्रियाकी आजमाइश (परीक्षा) दूसरे-दूसरे तरीकोंसे की थी। इनमेंसे कुछ तरीके अब भी मनुष्येतर प्राणियोंमें प्रचलित हैं।

जब गर्भमें बच्चा बनता रहता है उस समय उसे मनुष्य-जातिके विकासके पूर्व इतिहासकी समस्त अवस्थाओंसे होकर गुजरना पड़ता है, अर्थात् उसे उन समस्त अवस्थाओंको भुगतकर बच्चेके पूरे-पूरे रूपमें आना पड़ता है, जैसे टैडपोल (Tadpole) क्रमशः मेढ़क बन जाता है। कभी-कभी (हालाँकि ऐसा बहुत कम होता है) बच्चेका किसी दिशामें विकास होता होता रुक जाता है या ठीकसे नहीं हो पाता। यही कारण है कि कुछ लोगोंके खरगोशकी तरह फटे हुए ओंठ होते है, जोड़दार तालू होते है अथवा इनसे भी बढ़कर खराबियाँ होती है। ऐसे ही वे लोग भी होते है जो पूरे तौरसे न तो मर्द हैं और न औरत, बल्कि इन दोनोंकी 'खिचड़ी' हैं। इन्हें 'हिजड़े' कहा जाता है।

ऐसी खराबियाँ बहुत कम होती हैं, पर होती तो है। यदि इन खराबियोंके कारणोंको हम जान लेते हैं, तो हममें उन अभागोंके प्रति दयाभाव होना चाहिये जिनमें ऐसी खराबियाँ है।

प्रत्येक पुरुषमें स्त्रीके और प्रत्येक स्त्रीमें पुरुषके कुछ लक्षण सूक्ष्म रूपसे विद्यमान होते है। ऐसा जान पड़ता है कि कतिपय मनुष्य-परिवारोंके लिङ्ग-सम्बन्धी क्रोमोसोम लिङ्ग-विकासकी प्रागैतिहासिक प्रारम्भिक अवस्थाको लौट जाना चाहते है।

यदि माता और पिता—दोनोंके ही लिङ्ग-सम्बन्धी क्रोमोसोमोंमें ऐसी छिपी हुई प्रवृत्ति या सम्भावना होती है तो उन लोगोंके बीजसे उत्पन्न सन्तानमें भी बहुत-कुछ असाधारणता या अस्वाभाविकता हो सकती है। यह बात ठीक उसी तरह होती है जैसे यदि स्त्री और पुरुष—दोनोंके पूर्वज जोड़ा बच्चा पैदा करते रहे हों तो उनके भी जोड़ा बच्चा होनेकी ही अधिक सम्भावना रहती है।

ऊपर लिखी असाधारणता या अस्वाभाविकताके फलस्वरूप

जो हिजड़े होते है उनमे एक साथ पुरुषत्व और स्त्रीत्व—दोनों ही भाव रहते है अर्थात् वे मर्दानगी और जनानापनके मिश्रण होते है। हिजड़ोंका जीवन और खासकर दाम्पत्य जीवन दुरूह हो जाता है।

अनजान लोग हिजड़ोंसे घृणा करते है और उनकी हसी उड़ाते है। हमलोग जानकार है और भाग्यशाली है कि हममें वैसी हीनता नही है, इसलिए हमें उन अभागोंसे घृणा नहीं करनी चाहिये। किसीकी पीठपर कूबड़ निकल आता है या किसीका पैर टेढ़ा होता है तो क्या हम उससे घृणा करते है?

स्वाभाविक मर्द या औरतके समान न होनेके कारण हिजड़ोंको कैसी-कुछ मानसिक पीड़ा होती है यह वे ही जानते है। इस मानसिक पीड़ाके द्वारा वे हमलोगोंकी ओरसे उन जीवन-शक्तियोंका ऋण चुकाते है जो हमारी मनुष्य-जातिको दुर्गम मार्ग तय कराती हुई जन्म देनेमें समर्थ हुई है।

वे हिजड़े मानों हमारे ही एवजमें कष्ट भोग कर रहे हैं। प्रकृतिने स्वाभाविक पुरुषत्व या स्त्रीत्वका दान हमे दिया है। अतः हमें हिजड़ोंका अनुकरण या अनुसरण करनेकी कोई आवश्यकता नहीं। परन्तु हमें उनकी कठिनाइयोंको समझते हुए उनके प्रति दयालु होना चाहिये और साथ ही अपने सौभाग्यके लिए हममें कृतज्ञताका भाव होना चाहिये।

भूत और भविष्यका सम्बन्ध

तुम्हें आश्चर्य होगा कि इस पुस्तकका उद्देश्य तो है उपयोगी जीवन व्यतीत करनेमें तुम्हारी सहायता करना और इसमें इतना

कुछ लिखा गया है भूतकाल और पैतृक प्रभावके विषयमें।

सच तो यह है कि बाध्य होकर मुझे इस विषयकी कितनी बातें छोड़ देनी पड़ी हैं, परन्तु यदि तुम्हें इस विषयसे दिलचस्पी हो तो बड़ी अच्छी-अच्छी पुस्तकें तुम्हें मिल सकती हैं जिन्हें पढ़कर तुम इस सम्बन्धमें विस्तृत ज्ञान प्राप्त कर सकते हो।

यहाँ मेरा उद्देश्य केवल तुम्हारी सहायता करना है। मैं समझता हूँ कि तुम्हारे जीवनको उपयुक्त बनानेके लिए तुम्हारी सहायता तभी की जा सकती है जब तुम पहले यह समझ लो कि जीवनमें तुम्हारा क्या स्थान है।

तुम ऐसे खाली स्थानपर खड़े हो जिसके पीछे भूतकाल और सामने भविष्य-काल है।

तुम्हारे पीछे तुम्हारे पूर्वजोंकी वे पीढ़ियाँ हैं जिनके जीवन-संघर्ष, दुःख-सुख, कर्म इत्यादिने मिलकर तुम्हारी सृष्टि की है और बहुत अंशोंमें तुम्हें वर्तमान आकार-प्रकार प्रदान किया है।

परन्तु जीवनका अन्त तुम्हींसे नहीं हो जाता।

न तो हमें केवल उन शक्तियोंके विषयमें जिनसे हमारा निर्माण हुआ है ज्यादा मगजपच्ची करनी चाहिये और न सम्मुखकी अनन्त आशाओंकी प्रतीक्षासे घबराना चाहिये।

यदि कोई बात निश्चित रूपसे कही जा सकती है तो वह यही कि हम जीवनके सिलसिलेवार मार्गके ऐसे भागमें खड़े हैं जो पीछेकी ओर प्रथम एमीबातक चला गया है और आगेकी ओर जीवनके किसी मानव-कल्पनातीत बृहत् रूपतक फैला हुआ है।

अधिकतर यही सम्भव है। यदि मानव-जाति असफल होगी तो कोई कारण नहीं है कि प्रकृति इसे मरने न दे या अपनेको ही नष्ट न कर डाले। फल यह होगा कि यह भी उसी तरह नेस्तनाबूद हो जायगी जिस तरह प्राचीन कालके कुछ जीवोंका एकदम नाश

हो गया है। वे संसारमें रह नहीं गये हैं और उनके अस्थिपंजर मात्र ही खोद निकाले गये है।

इसमें सन्देह नहीं कि हम बीच-मार्गमें खड़े है। हम कहाँ जा निकलेंगे—यह बहुत कुछ तुमपर अवलम्बित है।

बचपनकी स्वार्थपरताके बाद पारिवारिक मार्गसे सामाजिक जीवनका विकास होता है। तुम्हें इस मार्गका अनुसरण क्यों करना चाहिये—यह यदि तुम जानना चाहते हो तो इस बातपर विचार करो कि तुम्हारे पहले जो लोग हो गये है उनके तुम कितने ऋणी हो

अंग, शक्ति, चेतना—इन सब वस्तुओंका विकास बड़ी ही कष्ट-पूर्ण रीतिसे लाखों करोड़ों वर्षोंमें हुआ। ये ही तुम्हारी विरासतें हैं, ये ही तुम्हें पूर्वजोंके दान है। अब यह तुम्हारा काम है कि जितना तुमने पाया है उतना या सम्भव हो तो उससे भी कुछ अधिक आगे होनेवाले लोगोंको प्रदान करो।

क्या पूर्वके समस्त जीवनका दान तुम ग्रहण कर लोगे और यह नहीं महसूस करोगे कि उसके प्रति-दानका कुछ उत्तरदायित्व भी तुमपर है?

प्रकृतिसे युद्ध करनेके बजाय हमें उसका सहायक बनना चाहिये। ऐसा करनेमें हम न केवल जीवनकी परिस्थितिको ही भविष्यके लिए आजसे अधिक उन्नत बनावें, बल्कि ऐसी चेष्टा करें कि जो विरासत हमें मिली है, उससे कहीं अच्छी विरासत हम भविष्यके लिए बनावें।

उपयोगी और सार्थक जीवन व्यतीत करनेके लिए यह बड़ी गम्भीर बात है, और इसीपर तुम्हारी व्यक्तिगत कुशल भी निर्भर है।

अध्याय ५

मैं कौन हूँ

"मैं क्या हूँ ?"—अर्थात् मनुष्यका आकार-प्रकार कैसा है—इस प्रश्नका थोड़ा-बहुत उत्तर पिछले अध्यायोंमें मिल चुका है और हम समझ चुके हैं कि कैसे धीरे-धीरे युगों और कल्पोंमें जीवनकी सबसे अधिक जटिल मूर्ति—मनुष्य-जातिका आविर्भाव हुआ।

"मैं कौन हूँ ?"—यह दूसरा गम्भीर प्रश्न है क्योंकि हममें प्रत्येक व्यक्ति का "मैं" कई वस्तुओंसे बना है।

साधारणतया मनुष्यके विषयमें यही खयाल किया जाता है कि उसका निर्माण दो ही वस्तुओंसे हुआ है—शरीर और मन। हमारे शरीर है—इस विषयमें तो किसीका मतभेद है नहीं। शरीरको हम देख सकते है, अनुभव कर सकते है और स्पर्श कर सकते हैं। मनके सम्बन्धमें यह बात नहीं कही जा सकती।

मन कहते किसे है, मनकी परिभाषा क्या है—यह बताना भी बड़ा कठिन है। 'मन' कहनेसे हमारा मतलब क्या मस्तिष्क और नाड़ियोंके उस यंत्र-समुदायसे है जो किसी वस्तुके रूप, प्रभाव या छापको ग्रहण करता है और हमको उसे व्यक्त करनेकी शक्ति देता है ? कुछ वैज्ञानिकोंका मत है कि यह और कुछ नहीं, बस मनुष्यके अन्दर एक तरहकी अत्यन्त जटिल टेलीफोन और टेलीग्राफकी प्रणाली है।

बहुत लोग 'मन', 'व्यक्तित्व' या 'आत्मा'को शरीर और मस्तिष्कसे पृथक् एक तीसरी वस्तु मानते हैं। उन लोगोंके अनुसार 'मन', 'व्यक्तित्व' या 'आत्मा'के विकासके लिए शरीर और मस्तिष्क यंत्र मात्र है।

इस समय इस सम्बन्धमें तत्वज्ञान-सम्बन्धी विवेचनाको दूर रखना ही उचित है। तर्क और विचार करनेके लिए यह उत्तम विषय अवश्य है। आगे चलकर मै इस विषयपर अपना मत-प्रकाश करूंगा और इसतक पहुंचनेके लिए कुछ तरीके भी बताऊँगा।

इस समय तो मेरी रायमे इस विषयका व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त कर लेना ही यथेष्ट है और इसलिए हम मान लें कि हममे शरीर, मस्तिष्क और मन—ये तीनों वस्तुए है। मस्तिष्कका निवास हमारी खोपड़ीमें है और वह नाड़ियोंके द्वारा अपने सन्देशवाहकों और सेवकोंसे काम लेता है। मनके विषयमें हम यह अनुभव करते है कि उसमें स्वतंत्र रूपसे उचित, अनुचित इत्यादिकी विवेचना करनेकी योग्यता है।

उत्तमोत्तम प्रयत्नके साथ जीवनका उपभोग करनेके लिए यदि हम यह अनुभव करें कि हममे तर्कबुद्धि और भले-बुरेकी विवेचना करनेकी शक्ति है, तो बड़ा लाभ होगा; अन्यथा वैसा लाभ नहीं हो सकता।

अतएव पहले हम शरीरकी कार्य-प्रणालीकी जाँच करें। इसमें मस्तिष्क और केन्द्रिय नाड़ी प्रणाली और मन—सब कुछ शामिल है।

ऐसा करनेके लिए हमें शरीर और मनको अलग-अलग लेना पड़ेगा। मानों ये अपना-अपना काम करनेमें एक दूसरेसे अलग हैं। व्यावहारिक रूपमें वे वस्तुतः एक दूसरेसे बंधे हुए है।

विचारोंसे शारीरिक परिवर्तन हो सकते हैं और शारीरिक अवस्थाओंका असर मनपर हो सकता है।

यदि मनुष्यके शरीरमें पीड़ा है तो वह मनपर प्रतिबिम्बित होती है। फलस्वरूप वह मनुष्य दुःखी होता है और प्रसन्नता खो देता है और यदि आत्मनियंत्रण करनेमें असमर्थ हुआ, तो उसकी बदमिजाजी इतनी बढ़ जाती है कि औरोंके लिए उसे संभालना कठिन हो जाता है।

दूसरी ओर यह बात है कि चिन्ताका शरीरपर बुरा असर पड़ता है और स्वास्थ्यको हानि पहुंची है।

हमारी मानसिक परिस्थितिके अनुसार ही हमारे शारीरिक कार्य भी होते हैं।

यदि तुम फुटबाल खेलना चाहते हो और खेलमें सफल होनेका तुम्हारे मनमें पक्का इरादा है तो तुम्हारा खेल अवश्य अच्छा होगा। बे-मनसे खेला गया खेल वैसा अच्छा नहीं होगा।

विपरीत दृष्टिसे यह बात भी है कि यदि तुम्हारे शरीरका कोई अंग कमजोर हो, तो उसका असर तुम्हारे मनपर पड़ेगा और वह उस सम्बन्धमें एक क्षुद्रता अनुभव करेगा।

एक विशेष मस्तिष्ककी मध्यस्थतामें एक विशेष शरीर और एक विशेष मनके पारस्परिक सम्बन्धित कार्यका रूप हो "तुम"। शरीर और मनकी कार्यप्रणालीको व्यावहारिक रूपसे जाँचनेके लिए हमें इन दोनों विषयोंपर अलग-अलग विचार करना होगा। सम्भवतः पुस्तकके अन्तमें हम फिर इन दोनोंको एकमें मिला देंगे।

अच्छा तो अब हम शरीरका विषय लें।

यहाँ न तो मैं शरीरके कल-पुर्जोंकी व्योरेवार व्याख्या करूंगा और न रेखाङ्कन अथवा चित्राङ्कन द्वारा कुछ वर्णन करूंगा क्योंकि पुस्तक समाप्त करनेके पहले मुझे अभी बहुत कुछ लिखना है।

मैं तुम्हें केवल यह सलाह दे सकता हूँ कि आगे चलकर तुम अपनी उम्र और शिक्षाके अनुसार इस विषयका अध्ययन करना। पुस्तकालयोंमें सैकड़ों पुस्तकें इस विषयकी तुम्हें मिलेंगी।

विशेषज्ञोंपर निर्भर होनेकी अपेक्षा तुम्हारे लिए यह अच्छा होगा कि शरीरकी कार्यप्रणालीको तुम स्वयं कुछ समझ लो।

जीवन भर तुम्हारा और तुम्हारे शरीरका साथ है। कभी तुम इसके कष्टोंको सहोगे और कभी इसके आनन्दका उपभोग करोगे। अतएव इसके विषयमें तुम जितना ज्ञान प्राप्त कर सको उतना ही अच्छा है।

तुम्हारे शरीरका चमत्कार

चाहे वृक्ष हो, या पशु हो, या मनुष्य हो,—सभीके शरीर जीवन-रूपी वृक्षकी परस्पर सम्बन्धित शाखाओंके पुष्प हैं। ये सब आपसमें सम्बन्धित हैं और फिर भी इनमें विभिन्नता है। इन सबका पूर्वज एक था—वही एक कोष्ठवाला जीवाणु।

जरा इसपर विचार करो कि तुम्हारे शरीरके कितने भाग हैं। हाड़, माँस, बाल, चर्बी, नसें, हृदय, रक्तकोष्ठ, फेफड़े, वृक्क, आमाशय, जनन-अंग, गिल्टियाँ, इत्यादि नाना प्रकारके अनेकानेक भाग-विभाग अपने-अपने अलग-अलग काम करते हैं।

लाखों करोड़ों जीवाणुओंसे तुम बने हुए हो। ये जीवाणु नाना प्रकारके विभिन्न कार्योंमें गुंथे रहते हैं। यह सब होनेपर भी कोई यह नहीं कहता कि तुम एक व्यक्ति नहीं हो। तुम्हारे ढाँचे और आचरणसे भी तुम्हारे एकत्वके—एक होनेके—विषयमें कोई सन्देह नहीं रहता।

जब हम मनुष्य-परिचालित संसारके झगड़े-फसाद और गड़-बड़ीकी बात सोचते है और तुम्हारे शरीरको देखते है, तब हमें यही लगता है कि तुम्हारे शरीरका संगठन वास्तवमें एक चमत्कार है।

इसमें सन्देह नहीं कि कुछ लोग जन्मसे ही हीनाङ्ग (लगड़े, लूले इत्यादि) होते है परन्तु ऐसे लोगोंकी संख्या इतनी नगण्य होती है कि इस बातको देखकर भी हम प्रकृतिके सर्वाङ्ग सुन्दर कार्यकी प्रशंसा किये बिना नहीं रह सकते।

आदर्श समाज

अपने शरीरको तुम एक आदर्श समाज समझो। इसकी नींव और आधार हड्डियोंका ढाँचा है। इसीपर और सब चीजें बनी हुई है। इस ढाँचेमें ही रहकर नाना परिवार और मण्डलियाँ सबकी समान भलाईके लिए सहयोगपूर्ण काम करती है।

अस्थि-पंजरके ढाँचेमें मुख्यतः छः मण्डलियाँ कार्य करती है :—

पाचन और शुद्धीकरण मण्डली
श्वास-प्रच्छ्वास मण्डली
रक्त-प्रवाह मण्डली
स्नायु मण्डली
ग्रंथि या गिल्टी मण्डली
जनन मण्डली

शरीरकी भलाईके लिए ये गिरोह मिलजुलकर काम करते है।

ऐसे प्रत्येक गिरोहमे जीवाणुओंका एक एक गिरोह होता है और प्रत्येक जीवाणु अपना-अपना विशेष कार्य करता है।

मनुष्य-समाजकी तरह तुम्हारे शरीर-समाजमे भी भंगी, टेलीफोन-आपरेटर, संवाद-वाहक इत्यादि होते है।

इस विषयपर विचार करनेपर विदित होगा कि हम जिस संसारके एक अंग है उसमें और हमारे शरीरमें बहुत-कुछ समता है।

यों तो शरीरके लिए सभी अंग आवश्यक है परन्तु कुछ अंग इतने शक्तिशाली और महत्वपूर्ण है कि शरीरका कुशलत्व बहुत कुछ उन्हींपर निर्भर है।

जैसे संसारमे बड़े-बड़े और शक्तिशाली देश है और साथ ही छोटे-छोटे देश भी है, वैसे ही शरीरमें हृदय, फेफड़े और मस्तिष्क बड़े-बड़े शक्तिशाली राष्ट्र हैं। इनका अपना-अपना अलग-अलग प्रभाव-विस्तार है।

जबतक ये मिलजुलसे काम करते है और किसीका पलड़ा भारी और किसीका हल्का नही होता, तबतक सब-कुछ ठीक रहता है। इस बातकी कल्पना भी नहीं की जा सकती कि मस्तिष्क, हृदय और फेफड़ेमे कभी परस्पर प्रतिद्वन्द्विता छिड़ जायगी और एकके राज्य-पर कब्जा करनेके लिए दूसरा युद्ध करेगा।

इस तुलनासे तो संसारमे युद्ध असम्भव प्रतीत होगा।

इस तुलनाको कुछ और आगे बढ़ाया जा सकता है। आधुनिक संसारमे यह तथ्य निर्विवाद है कि यदि छोटेसे छोटे देश भी अन्दरूनी विद्रोह और खाद्याभावमें पीड़ित हो, तो उसका असर हम सभी लोगोंपर पड़ेगा चाहे वह प्रत्यक्षरूपसे पड़े, चाहे परोक्षरूपसे।

इसी प्रकार यदि हमारा छोटेसे छोटा और अदनेसे अदना अंग भी रोग-ग्रस्त हो जाता है, तो हमारी मृत्यु भले ही न हो या

हमें अत्यधिक कष्ट भी न भोगना पड़े, परन्तु उस रोगसे हमारा सारा शरीर बेचैन हो जाता है।

ऐसी आफतोंके लिए प्रकृतिने पहलेहीसे बड़ी अक्लमन्दीकी तदबीरें बना रखी हैं।

पहली बात यह है कि हमारा प्रत्येक अंग इस तरहका बनाया गया है कि मामूली तौरसे उसपर परिश्रमका जितना दबाव पड़ता है वह उससे कुछ अधिक सहन कर सकता है। कहनेका तात्पर्य यह है कि हम अपने शरीरके इंजन इस कदर पूरी तेजीसे नहीं दौड़ाते हैं कि उनकी सारी शक्ति समाप्त हो जाय। उदाहरणके लिए, यदि तुम मोटरकारके विषयमें कुछ जानते हो तो समझ सकोगे कि सदा पूरी तेजीसे इञ्जन चलानेसे वह शीघ्र तड़क जायगा।

मोटरकारका स्वामी बुद्धिमानीसे काम लेता है। मोटरकारमें जितनी तेजीसे दौड़नेकी क्षमता होती है वह उतनी पूरी तेजीसे उसे नहीं चलाया करता बल्कि उसकी शक्तिको संचित रखता है। तेज या लम्बी दौड़का मौका आनेपर वह कार खूब काम देती है। सदा पूरी तेजीसे दौड़ते रहनेसे जिस कारके अंजर-पंजर ढीले हो जाते हैं वह मौकेपर वैसा काम नहीं दे सकती।

यही बात हमलोगोंपर भी लागू है। अपनी प्रिय कार या या इञ्जनका जितना खयाल हम रखते हैं हमें अपने अंगोंका उससे कम ध्यान नहीं होना चाहिए। हम उन्हें काहिल न बनाएं, पर साथ ही उनकी कद्र करें।

यदि देरसे पचनेवाली गरिष्ठ या भारी चीजें हिसाबसे खायी जाय तो कोई नुकसान न होगा। परन्तु यदि पाचन क्रिया करनेवाली हमारी आँतोंपर सदा भारी बोझा लादा जायगा और उन्हें लगातार अत्यधिक परिश्रम करना पड़ेगा, तो वे उसे सहन नहीं

कर सकेगी और ऐसा समय आयेगा कि वे बेकाम हो जायगी।

आवश्यक अवसरोंके लिए प्रकृतिने दूसरा उपाय यह रचा है कि जैसे फौजमें रसद रहती है वैसे हमारे शरीरमें शक्ति सुरक्षित रहती है। यदि हम बुद्धिमानीसे काम ले और किसी काममें अति करके अपने बलका अपव्यय न कर, तो हमारे किसी अंगके रुग्ण होनेपर वह रक्षित शक्ति हमारे काम आयेगी।

किसी दुर्घटना या रोगका आक्रमण होते ही शरीरके श्वेत अणु (White corpuscles) मोर्चेपर सबसे पहले आ डटते है। ये श्वेत अणु हमारे शरीरमें एक प्रकारके अन्तरीष्ट्रीय रक्षीदल या पुलिस है जो किसी आक्रमणकारीसे भिड़नेके लिए सदा तैयार रहते हैं।

यदि तुम्हारे कहीं चोट लग जाय या शरीरका कोई स्थान कट जाय तो घावपर धूल बैठनेसे वह पक जाता है। उससे पीली मवाद निकलती है। बचपनमें ऐसा घाव तुम्हारे हुआ हो तो तुम्हें याद होगा कि तुम्हारे लिए दौड़-धूप मची होगी, पीप निकालकर घाव साफ किया गया होगा और उसे अच्छा करनेके लिए उसमें हाइड्रोजन पेरोक्साइड या टिंचर आइडिन लगाया गया होगा। यह सब देख-सुनकर उस समय तुम्हें अपने ऊपर कुछ अभिमान भी हुआ होगा।

पीली पीप और कुछ नहीं, रक्त प्रवाहके मृत श्वेत अणु है जो घाव या रोगसे युद्ध करनेके लिए तुरन्त मोर्चेपर आ जाते है। इनके अधिक संख्यामें मरनेसे घाव या रोगकी प्रबलता सूचित होती है।

यदि घाव या रोग अधिक संगीन होता है तो मृत श्वेत अणुओंके स्थानकी पूर्तिके लिए शरीर नये 'सिपाही' (श्वेत अणु) बनानेमें असमर्थ होता है। ऐसी अवस्थामें उचित

चिकित्सा न करनेसे उस घाव या रोगकी जीत होती है और वह मनुष्य मर सकता है या उसके अंग विशेषको काटकर अलग करना पड़ता है।

अतएव तुम समझ गये होगे कि तुम्हारा शरीर बड़े उच्चकोटि-का सुसंगठित समाज है। इसके कुछ सभ्य अपने-अपने स्थानपर स्थायी रूपसे रहते हैं और अपना-अपना कार्य करते हैं। अन्य सभ्य जो मानो अन्तर्राष्ट्रीय सेवा-विभागसे सम्बद्ध हैं, आवश्य-कतानुसार तुरन्त मौकेपर दौड़ पड़नेके लिए तैनात रहते हैं।

क्या प्रकृतिके संगठनके इस चमत्कारसे मनुष्य-जाति कुछ शिक्षा ग्रहण नहीं कर सकती है? मानव-शरीरके विकासमें करोड़ों वर्षोंका जैसा लम्बा समय लगा, क्या यह आवश्यक है कि उतना ही दीर्घकाल इस जातिको एक योग्य विश्व-समाजका रूप प्राप्त करनेमें लगेगा?

सामाजिक जीवनमें प्रवेश करनेके बाद और जिम्मेदार नाग-रिक बननेके बाद तुम्हें इन प्रश्नोंका सामना करना है।

मेरे विचारसे इस निष्कर्षपर पहुचना अनुचित न होगा कि यदि मनुष्य-जाति प्रकृतिसे उचित शिक्षा ग्रहण करेगी तो हम यह महसूस करने लगेंगे कि संसारमें प्रत्येक मनुष्यका जीवन कितना कुछ परस्पर एक दूसरेपर अवलम्बित है।

परस्पर सहयोगके इस आधारपर आजसे कहीं उत्तम और सुख-शान्ति मय जगत्की स्थापना हो सकती है। उस जगत्में समस्त छोटी और बड़ी जातियोंको मिलजुलके साथ रहना और काम करना होगा और यह महसूस करना होगा कि यदि विशाल मानव समाजका एक भी अंग अस्वस्थ है अथवा कोई अंग किसी अन्य अंगके प्रति विद्रोही है तो वह मानव-समाज रूपी शरीर कभी स्वस्थ नहीं रह सकता।

अध्याय ६

पाचन और शुद्धीकरण मण्डली

जिस प्रकार संसारमें जीवनका आधार शरीर है उसी प्रकार शरीरमें जीवनका आधार भोजन, पाचन और मल-मूत्रादि त्यागकी क्रियाएं हैं।

कहनेका तात्पर्य यह है कि हमारे जीनेके लिए भोजन आवश्यक है। भोजनसे हमारा पोषण होता है और जीवित रहनेमें जो शक्ति खर्च होती है उसकी पूर्ति हो जाती है। साथ ही शरीरके भीतरका गलीज निकल जाना भी आवश्यक है अन्यथा शरीर विषाक्त हो जायगा।

हम अपने शरीरके जीवनकी तुलना अपने देशके जीवनसे कर सकते है। यदि देशमें आवश्यक खाद्य पदार्थ मौजूद न हों और उनके वितरणका समुचित प्रबन्ध न हो तो अन्यान्य सुख और विलासकी सामग्रियोंका रहना न रहना बराबर है।

यही कारण है कि युद्धकालमें आवश्यक वस्तुओंपर नियंत्रण रखना और राशन-प्रबन्ध जारी करना जरूरी होता है। यद्यपि आज युद्धका अन्त हो गया है, तो भी इसके कारण संसारकी व्यवस्था इतनी अस्त-व्यस्त हो गयी है कि खाद्य-पदार्थका उत्पादन और वितरण संसारके बड़े-बड़े राष्ट्र-कर्णधारोंके लिए एक जटिल समस्या बन गया है। पूर्वके शत्रु-देशोंको खाद्य पदार्थकी कमी न होने पाये इसकी व्यवस्था करना भी आवश्यक और न्याय संगत है क्योंकि उन देशोंकी दुर्दशाकी प्रतिक्रिया सारे संसारपर होगी।

दावतोंकी मिठाई और चटपटी चाट इत्यादि चाहे कितनी ही अच्छी क्यों न लगें पर ऐसी चीजोंको मुख्य आहार बना लेनेमें कोई लाभ नहीं। ये चीजें थोड़ी और कभी-कभी खायी जाती हैं, इसीलिए अच्छी लगती हैं। परन्तु जीवनोपयोगी नित्यप्रतिके भोजनके लिए तुम्हें तत्वगर्भित पौष्टिक खाद्यकी आवश्यकता है।

क्या तुमने कभी यह सोचा है कि एक दिनमें तुम अपनी कितनी शक्ति खर्च कर डालते हो? यह शक्ति क्या है और कहाँसे आती है?

छुट्टियोंके दिनोंमें तुम अक्सर दौड़ते-धूपते हो, कूद-फाँद मचाते हो, साइसिकिलपर चढ़ते हो, या सम्भवतः पहाड़ियों, टीलों या पेड़ोंपर चढ़ते हो। स्कूलमें ड्रिल इत्यादि तो करते ही हो, साथ ही पढ़ते-लिखते भी हो। यह भी शक्तिसे ही काम लेना है। ऐसे भी अवसर होते हैं जब तुम कोई खास काम नहीं करते हो। इस तरह निठल्ले रहनेपर भी चाहे तुम चुपचाप बैठे रहो, या धूप तापते रहो या बिछौनेपर सोते रहो, तुम्हारी कुछ न कुछ शक्ति खर्च होती रहती है; अधिक न सही साँस लेनेकी शक्ति तो खर्च होती ही है।

क्या तुमने कभी सोचा है कि तुम्हारे शरीरके अन्दर क्या-क्या कारखाइयाँ होती रहती हैं जिनकी तुम्हें खबर भी नहीं होती? यदि इनमें कहीं कोई खराबी आ जाती है तो तुम्हारे दर्द होता है और तब तुम्हारा ध्यान उस ओर जाता है।

तुम्हारे भोजन करनेके बाद बहुत देरतक आमाशय और आँतें उस भोजनको पचानेकी क्रिया करती रहती हैं परन्तु तुम्हें कुछ मालूम नहीं होता। यह क्रिया खाये हुए पदार्थके विकृत रूपसे पोषक सार वस्तुको खींचकर रक्तमें उत्तमता लाती है और बचे हुए निरर्थक पदार्थको बाहर निकालनेकी तैयारी करती है।

रक्तकी यह उत्तमता सारे शरीरमें फैलकर उसका निर्माण-कार्य

करती है। निरर्थक पदार्थ जो जमा होता रहता है, उसे निकालनेकी जब हाजत होती है तब टट्टी या पेशाबसे वह निकल जाता है।

शरीरमें ये क्रियाएं होती रहती हैं परन्तु तुम्हें कुछ मालूम नहीं होता। हाँ जब तुम्हारा शरीर तुमसे भोजन माँगता है या निरर्थक पदार्थको बाहर निकालनेका तकाजा करता है अर्थात् जब तुम्हें भूख लगती है या टट्टी पेशाबकी हाजत होती है अथवा इस सम्बन्धमें कहीं कुछ खराबी पैदा हो जाती है, तभी तुम्हारा ध्यान इस ओर जाता है। पाचन और मल मूत्र त्यागकी क्रियाएं तुम्हारी जो सेवाएं करती हैं वे वास्तवमें बड़ी उपयोगी हैं।

इन क्रियाओंको तुम अपने शरीरके भीतरकी सेनाका 'सेवा और रसद-विभाग' कह सकते हो। इसके द्वारा पोषक पदार्थ लाया जाता है, उसका उत्तम उपयोग होता है और निरर्थक पदार्थ निकाल फेंका जाता है।

अथवा दूसरी तुलना यह हो सकती है कि तुम्हारे शरीरकी कलमें ईंधन डाला जाता है और उसके जलनेमें कल चलती है; बची हुई राख फेंक दी जाती है।

एक अर्थमें तुम्हारा शरीर भापसे चलनेवाले इंजनके समान है। खाद्य पदार्थके रूपमें जो कोयला उसमें जलता है उससे उसके पहियोंमें घूमनेकी शक्ति आती है। तुम्हारी शारीरिक शक्ति भी ठीक उसी तरहकी एक शक्ति है।

अतएव तुम समझ गये होगे कि तुम्हारे शरीरको सुव्यवस्थित रूपसे ठीक-ठीक पोषक पदार्थ मिलना कितना आवश्यक है। साथ ही यह भी जान गये होगे कि शरीरकी कद्र करनी चाहिए।

कुछ खाने-पीनेकी चीजें इतनी स्वादिष्ट होती हैं कि उन्हें खानेमें

बड़ा मजा आता है। यदि ऐसी चीजें तुम्हें अच्छी लगती हैं और वे हानिकर न हों तो तुम उन्हें शौकसे खा सकते हो। परन्तु जिन वस्तुओंमें जीवन-दायिनी शक्ति है उन्हें खाना तुम्हारे लिए नितान्त आवश्यक है—जैसे दूध, जल, रोटी, फल, शाक-सब्जी अथवा और जो कुछ जीवन-धारणके लिए तुम्हारा मुख्य भोजन हो।

मुझे विश्वास है कि तुम्हारा सामान्य विवेक भी तुमसे यही कहता होगा। स्वादिष्ट परन्तु तुच्छ वस्तुओंका कभी-कभी स्वाद चखना भले ही अच्छा हो परन्तु और सब हितकर वस्तुओंको त्याग-कर केवल उन्हींपर जीवन धारण करनेका विचार भी मनमें लाना बड़ा विचित्र होगा।

पोषक और हितकर पदार्थ भी सुव्यवस्थित रूपसे खाना चाहिए क्योंकि ऐसा करनेसे ही पाचन-क्रियाको सहायता मिल सकती है। जब तुम्हारी माता कहती हैं कि ठीकसे सीधे बैठकर भोजन करो, चबाकर खाओ, जल्दी-जल्दी निगलो मत और भोजनके बाद कुछ देर आराम करो—तब वे ये आदेश तुम्हारी भलाईके लिए ही देती हैं।

माताके ऐसे आदेश कुछ इसलिए नहीं होते कि वे तुमपर अपनी हुकूमत और रोब जताकर व्यर्थकी रोकथाम करती हों और यह दिखाना चाहती हों कि इस घरकी स्वामिनी मैं हूँ और मेरे कहे मुताबिक ही सारी बातें होनी चाहिए।

जहाँ अन्य बातोंमें तुम अस्त कर बैठते हो वहाँ अपने शरीरकी हिफाजत करनेमें आवश्यकतासे अधिक सावधानी दिखा सकते हो। परन्तु शरीर-रक्षाके लिए बहुत बड़ी-चढ़ी साव-धानी या उतावलेपनकी आवश्यकता नहीं है। शरीरपर उतनी ही निगरानीकी आवश्यकता है जितनी कि तुम अपनी बाइसिकिलपर रखते हो जिसमें वह ठीक रहे और आसानीसे चले।

पाचन और मलमूत्र-त्याग इत्यादिकी क्रियाओंका वर्णन करनेके पहले यह बताना आवश्यक प्रतीत होता है कि तुम्हें अपने शरीर रूपी इंजनके प्रति कहाँतक सावधान रहना चाहिए।

जैसा कि पहले कहा जा चुका है, इन क्रियाओंका आधा भाग गलीजको बाहर निकालनेके पहले उसे अलग-अलग करने और यथास्थान भरनेमें लगता है। इसमें परेशानीकी कोई बात नहीं है। यह जो कुछ होता है स्वाभाविक है और आसानीसे समझमें आ जाता है। इसलिए तुम्हें ठीक समयपर मल-मूत्र त्यागनेकी आदत डालनी चाहिए।

रातको जो गलीज तुम्हारे पेटमें इकट्ठा हुआ है उसे नित्य सबेरे मल-मूत्र त्यागके द्वारा निकाल देना चाहिए। चाहे कैसा ही मौका क्यों न हो यदि तुम्हें टट्टी या पेशाबकी हाजत हो तो शर्मके मारे या बेहूदा बननेके डरसे उसे रोको मत। टट्टी या पेशाब मारना बुरा है।

यह शर्म झूठी और बेमतलब है। मनुष्यमात्रके लिए जो काम जरूरी है और जिसे सभी करते हैं तथा स्वस्थ जीवनके लिए जो बड़ी महत्वपूर्ण वस्तु है उसके विषयमें परेशानी या शर्मिन्दगी क्यों महसूस करते हो?

तुम जानते हो यदि किसी मोरी या नालेका मुह बन्द हो जाय तो क्या होगा। उसमें जमा गलीज रास्ता न पाकर उमड़ने और फैलने लगेगा और साथ ही चारों ओरकी हवाको विषैला बना देगा। ठीक उसी तरहसे यदि तुम वक्तकी पाबन्दीकी आदत न डालनेकी वजहसे जान-बूझकर अपने तनके अन्दरके गलीजकी नालियोंके मुँह बन्द कर देते हो, तो तुम अपनी ही गन्दगीसे अपने शरीरको विषैला बना लेते हो।

यदि तुम टट्टी और पेशाबके लिए वक्तकी पाबन्दीकी आदत

डालोगे, तो तुम देखोगे कि प्रकृति तुम्हारे प्रयत्नके अनुकूल चलेगी, अर्थात् तुम्हें वक्तपर ही टट्टी या पेशाब लगेगा।

अतएव हमें यह देखना चाहिए कि तुम्हारा खाया हुआ भोजन जब तुम्हारे शरीरमें अपनी यात्रा आरम्भ करता है, उसके बाद क्या क्या होता है। मुँहमें प्रवेश करनेके बाद भोजनको बड़ा लम्बा रास्ता तै करना पड़ता है।

पहली बात तो यह है कि खाने-पीनेकी चीज देखने या सूँघनेसे ही शरीरके किसी अंगमें कुछ घटना घटित होती है—यह शायद तुम्हें मालूम हो या न भी मालूम हो।

हमें खाने-पीनेकी जो वस्तु दी जाती है वह यदि हमें अच्छी लगती है तो हमारा भूख बढ़ जायगी और यदि अच्छी नहीं लगती है, तो भूख कम हो जायगी। जो चीज अच्छी लगती है उसे देखते ही मुँहमें पानी आ जाता है। यह पानी मुँहकी लार है जो खाना पचानेमें पहला काम करती है। आमाशय भी लारकी तरह अपने विशेष प्रकारके रस तैयार करने लगता है।

मुँहमें ग्रास या कौर डालनेके बाद हम उसे दाँतोंसे चबाते है, और कुचल-कुचलकर उसके छोटे छोटे कण बना देते हैं जो कि लारसे लिपटकर गिलगिले हो जाते हैं और आसानीसे गलेके नीचे उतरनेके लायक गोल टिकियासे बन जाते हैं।

क्या तुमने कभी यह महसूस किया है कि किसी विशेष आकारकी वस्तु ही सरलतासे निगली जा सकती है? उदाहरणके लिए, पचकोने सितारेके आकारकी गोली निगलनेमें बड़ी कठनाई होगी। दवाकी गोलीको गोल बनानेमें हम प्रकृतिके इस नियमका अनुकरण करते हैं जिसके कारण हमारा खाना दाँतोंसे कुचला जाकर और लारसे मिलकर निगल जानेके पहले गोल आकार धारण करता है।

भोजन पचानेके लिए मुँहमें लार आमाशय और अन्यान्य अंगोंमें तरह तरहके रस बनते हैं। इनका काम है खायी हुई वस्तुको पीसकर ऐसा बना देना कि वह रक्त-प्रवाहमें घुल-मिल जाय और उसका फायदा सारे शरीरमें पहुँच जाय

चबाया हुआ खाना जब निगल लिया जाता है तब वह एक नलीसे होकर आमाशयमें उतर जाता है। यह नली धुलाईकी उस कलकी तरह है जो कपड़ेको निचोड़कर उसकी मैल निकाल देती है। आमाशयवाली यह नली खायी हुई वस्तुको निचोड़कर उसका पोषक सार-पदार्थ निकाल लेती है।

इस तरह निचोड़े जानेके बाद जो निष्प्रयोजन पदार्थ (गलीज) बच जाता है वह अलग रख दिया जाता है।

जिस तरह धुलाईकी कलमें साबुन काम करता है उसी तरह आमाशय भी अपने ही कारखानेमें बनाया हुआ एक विशेष शक्तिशाली तेजाबी रस (Gastric Juice) से काम लेता है। यह रस खायी हुई वस्तुकी प्रत्येक बूँदसे उसका सार-तत्व खींच निकालता है।

आशा है तुम यह जानते होगे कि तुम्हारा आमाशय (मेदा) बच्चोंकी दूध पीनेकी शक्लकी एक छोटी-सी वस्तु है और वह तुम्हारे पेटकी बायीं ओर ऊपरको है।

तुम्हारे शरीरके जिस भागका नाम पेट है, वह आमाशय या मेदा नहीं है; बल्कि पसलियों और कमरके बीचका समूचा भाग है। पेटमें आमाशयके अलावा पाचन-किया-प्रणालीके अन्यान्य सभी अंग हैं।

आमाशयके नीचे बड़ी और छोटी अँतड़ियाँ हैं। ये पानीका छिड़काव करनेवाली किरमिचकी नलीकी शक्लकी होती हैं। ये गराड़ी-सी मुड़ी रहती हैं और गजों लम्बी होती हैं।

आधा पचा हुआ भोजन पहले छोटी अँतड़ीमें उतरता है। यहाँ दो अन्य प्रकारके रस जो अग्न्याशय (Pancreas) यकृत (Liver) और पित्तकी थैली (Gall-Bladder) के कारखानोंमें बनते हैं, अपनी कारवाई उस भोजनपर करते हैं और उसका अधिकांश सारतत्व रक्त-प्रवाहमें भर देते हैं।

अब भोजनका बचा हुआ अंश, जो अधिकतर गलीज होता है बड़ी अँतड़ीमें आता है; इसकी नलीसे होकर पेड़ूकी दाहिनी ओर और वहींसे बायीं ओर नीचेको जाकर मलके रूपमें मल-छिद्रसे निकल जाता है।

यह पाचन-प्रणाली प्रायः तीस फीट लम्बी है और एक समय किये गये भोजनको इस लम्बी यात्रामें तीससे चालीस घण्टे लगते हैं।

छोटी और बड़ी अँतड़ियाँ इसलिए कहलाती हैं कि छोटी अँतड़ी बड़ी अँतड़ीसे अधिक लम्बी होनेपर भी संकुचित होती है और छोटी-सी जगहमें गराड़ीकी तरह लपेटी हुई रहती है। बड़ी अँतड़ी चौड़ी होती है और पेटमें दाहिनी ओरसे बायीं ओर तक फैली हुई होती है। इसे कोठा (Bowel) भी कहते हैं।

आमाशयकी तरह अँतड़ियोंमें भी धुलाईकी मशीन जैसी क्रिया होती है। इस कारण भोजन दो तरहसे पचता है, एक तो निचुड़कर और दूसरे आमाशय, यकृत, अग्न्याशय (Pancreas) और पित्तकी थैलीमें जो रस बनते हैं उनकी रासायनिक क्रिया द्वारा।

यहाँतक मेरे कथनको समझ लेनेके बाद तुम्हें आश्चर्य हो रहा होगा कि शरीरके अन्दरसे जो ठोस गलीज (मल) निकलता है केवल उसीकी गवेषणा क्यों हो रही है, और जो

उसे ठीक रखनेके लिए हमें मुनासिब तौरपर सावधान रहना चाहिए: पर साथ ही यह भी ध्यान रहे कि इसकी हमपर कोई सनक या स्वप्न न सवार हो जाय।

अपने पथ-प्रदर्शनके लिए हमें कुछ मुख्य बातोंपर ध्यान रखना चाहिए।

१—भूखसे अधिक भोजन नहीं करना चाहिए।

तुम्हारे शरीरके अन्दरके कल-पुर्जोंकी बनावट ही कुछ ऐसी है कि उनपर कामका जितना बोझ सदा पड़ा करता है, उससे अधिक बोझ सम्हालनेकी शक्ति उनमें होती है। इसलिए यदि भूखसे कुछ अधिक भोजन तुम कभी कर लोगे तो वे उसका बोझ संभाल लेंगे। परन्तु यदि ऐसा बोझ उनपर सदा पड़ता रहेगा तो तुम्हें पेटकी शिकायत होगी।

भोजनमें और विशेषतः स्वादिष्ट भोजनमें किसे आनन्द नहीं आता? परन्तु यदि तुम कुछ भूख रखकर खाओगे और इस बातका आसरा नहीं देखोगे कि प्रकृति' जब "बस" कह दे, तभी हाथ रोकें, तो तुम्हें भोजनमें सचमुच बड़ा आनन्द आयेगा।

एक भोजन ही नहीं, जीवनकी प्रायः सभी वस्तुओंका मजा किरकिरा हो जाता है यदि उन्हें पुनः प्राप्त करनेकी आशा या कामना न बनी रहे।

दूसरी बात यह है कि अधिक भोजनसे सुस्ती और झपकी आने लगती है। मानसिक शिथिलता या दिमागमें सुस्ती इसलिए आती है कि आँतोंपर जो अधिक बोझा लादा गया है उसके लिए रक्त-प्रवाहकी अधिक आवश्यकता होती है और मस्तिष्कके कामके लिए रक्तकी कमी हो जाती है।

चुस्त और फुर्तीला बननेके लिए तुम्हें ये बातें याद रखनी चाहिएं।

२—मिष्टान्न, पकान्न, चटपटी चाट इत्यादि गरिष्ठ वस्तुओंको विशेष अवसरोंके लिए छोड़ देना चाहिए।

यदि और कुछ न खाकर केवल इन्हीं वस्तुओंसे रोज पेट भरा जाय तो इनसे जी ऊब उठेगा और ये बे-सवाद भी मालूम पड़ने लगेंगी। प्रकृतिने जीवनोपयोगी ऐसे मुख्य खाद्य पदार्थ तैयार किये हैं जिन्हें नित्य-प्रति खाते रहनेसे न तो जी ऊबता है और न जबानका स्वाद बिगड़ता है।

३—पाचन प्रणालीके कामोंमें कठनाइयाँ नहीं खड़ी करनी चाहिएँ।

पाचन प्रणालीको सहायता पहुँचानेके लिए हमें अपना भोजन ठीकसे चबाकर खाना चाहिए जिसमें साबुत टुकड़ोंको पीसनेके लिए आँतोंको दाँतोंका काम न करना पड़े।

पाचन-क्रिया-प्रणालीको दूसरी सहायता हम यह पहुँचा सकते हैं कि चिन्ता और फिक्र करनेकी आदत न डाल लें। चिन्ता और फिक्रसे कोई फायदा तो होता नहीं, उलटे पाचन-क्रियापर उसका बुरा असर पड़ता है।

सीधे बैठकर और बिना हड़बड़ाहटके धीरे-धीरे भोजन करनेसे पाचन क्रियाको सहूलियत होती है।

४—मल-मूत्र त्याग करनेकी क्रिया ठीक तौरसे होनी चाहिए।

यह तभी सम्भव है जब तुम ठीक वक्तसे टट्टी-पेशाब जानेकी आदत अख्तियार करो।

इस शारीरिक क्रियाका भी सम्बन्ध मनसे है। पाखाना साफ न होनेकी जिन्हें शिकायत रहती है वे सुस्त, चिन्तित और प्रायः चिड़चिड़े होते हैं।

तुम्हारा अन्दर साफ और स्वच्छ रहेगा तो तुम्हें बाहरका संसार भी अधिक उज्जवल और आशामय दिखायी देगा।

अध्याय ७

श्वासोच्छ्वास मण्डली

यदि आगकी चिनगारी चूल्हेसे उड़कर तुम्हारे कम्बलपर आ गिरे तो तुम क्या करोगे ? हो सका तो उसे चिमटेसे उठाकर फिर चूल्हेमें डाल दोगे। मान लो कि कम्बल जलने लगे, तब क्या करोगे ?

तुम कहोगे—उसपर पानी डाल देंगे। हाँ, यदि पास ही पानी हुआ तो ऐसा भी कर सकते हो, परन्तु हड़बड़ाहट या जोशमें तुम सारा कम्बल ही भिगोकर धर दोगे।

एक दूसरा उपाय भी है, जो इससे अच्छा और सहूलियतका है। वह यह है कि जलती हुई आगको किसी कपड़ेसे दबाकर बुझा देना। किसी कदर कपड़ा भी वही काम करता है जो पानी करता है।

आग पानीसे बुझायी जाय या कपड़ेसे, बात एक ही है। हम जलती हुई वस्तुको इस तरह चारों ओरसे ढक देते हैं कि उसतक हवा नहीं पहुचने पाती।

हवामें आक्सीजन रहता है और बिना आक्सीजनके आग जलती नहीं।

आगकी लपट वास्तवमें ऐसा तत्व है जो जलनेवाली वस्तु और उसके चारों ओर हवामें फैले हुए आक्सीजनके रासायनिक सम्मिश्रणसे पैदा होता है। यही कारण है कि आग जलनेके लिए तुम्हारे चूल्हेपर हवाका होना बहुत जरूरी है। यदि लपट

आक्सीजनके सम्पर्कमें नहीं आएगी तो वह झिलमिलाकर बुत जायगी।

शरीरको शक्ति प्रदान करनेवाली क्रियाकी उपमा हम इंजनके कल-पुर्जोंकी उस क्रियासे दे चुके हैं जो ईंधनके जलनेसे शक्ति प्राप्त करती है। हमारे शरीरके जो करोड़ों जीवाणु-कोष्ठ (Cells) रासायनिक क्रियाएँ करते रहते हैं, उनके लिए भी उसी तरह भोजन रूपी ईंधन जलनेकी जरूरत है जिसमें वे अपने-अपने काम करते रहें।

चूल्हे या इंजनकी आगके समान ही हमारे शरीरके अन्दर ईंधन जलानेके लिए भी आक्सीजनके बिना शरीरका काम कुछ क्षणसे अधिक नहीं चल सकता।

हमारे वायुमण्डलमें अनेक प्रकारकी गैसें हैं। आक्सीजन उन्हींमें एक है। यह प्राणदायक गैस इतनी आवश्यक और महत्व-पूर्ण है कि जिस क्रिया द्वारा हम इसे वायुसे खींचते हैं वह अज्ञात रूपसे हमारी प्रकृति बन गयी है।

यह श्वासोच्छ्वासकी क्रिया है।

चाहे हम सोते रहें या जागते रहें, यह साँस लेनेकी क्रिया सदा चलती रहती है। मन हमारे जानतेमें शरीरको इस क्रियाके लिए कोई आदेश भी नहीं देता है। जब हम इस विषयपर सोचते हैं तब हमें बड़ा ताज्जुब होता है और हमारे लिए यह समझना कठिन हो जाता है कि अनजानतेमें ही कैसे हम करोड़ों साँसें खींचा करते हैं।

मैं समझता हूँ कि तुम सबलोगोंने कभी न कभी यह देखनेकी चेष्टा की होगी कि तुम कितनी देरतक साँस रोके रह सकते हो। मेरे खयालसे साँस ज्यादा देरतक नहीं रोक सके होगे। साँस रोकनेकी बहुत अधिक चेष्टा करनेपर तुम्हारा मुह

लाल हो जायगा, दम घुटने लगेगा और लाचार होकर तुम्हें यह चेष्टा छोड़कर फिर साँस लेनी ही होगी।

इसमें सन्देह नहीं कि बहुत समयतक कठिन अभ्यास करते-करते कुछ खास लोग, जैसे समुद्रमें मोती निकालनेवाले गोताखोर या उनसे भी बढ़कर भारतवर्षके योगी हमलोगोंकी अपेक्षा कहीं अधिक देरतक साँस रोके रह सकते हैं। परन्तु उनके साँस रोकनेकी भी सीमा होती है और अन्तमें जब वे अपनी सीमापर पहुंच जाते हैं तब उन्हें भी साँस लेनी पड़ती है।

यदि साँस नहीं लोगे तो तुम्हारे जीवनकी अग्नि-ज्योति टिमटिमाकर चटपट बुत जायगी।

जीवनका मोह सभीको है। हम सबमें जीनेकी बड़ी बलवती इच्छा है। बुरीसे बुरी हालत हमारी क्यों न हो, फिर भी हम जीवन-रक्षाके लिए कुछ करते रहते हैं। यह स्वाभाविक और उचित ही है क्योंकि तुम्हें यह सोचना चाहिये कि कितने करोड़ वर्षोंसे जीवन "कुछ नहीं"—की अवस्थासे युद्ध करता आ रहा है और जरा-जरासे सहारेसे चिमड़ता हुआ और अपनेको परिस्थितियोंके अनुकूल बनाता हुआ प्रत्येक प्रकारकी कठिनाई और खतरेके मुकाबलेमें अपना रक्षाके लिए अड़ता चला आ रहा है। यह जीनेकी इच्छा हमारा सबसे प्रबल मूलगत (बुनियादी) स्वभाव है।

मानव शरीरके क्रम-विकासकी अनेकानेक आश्चर्यजनक अवस्थाओंको पार करती हुई यह साँस लेनेकी क्रिया इतनी गहराईके साथ एक अत्यावश्यक अभ्यासके रूपमें परिणत हो गयी है कि हम चाहें तो भी इसे अधिक देरतक नहीं रोक सकते।

हमारा शरीर जटिल रसायनशालाओंका एक समूह है।

अच्छा तो इन रसायन-शालाओंके कल-पुर्जे वास्तवमें आक्सीजन-को किस तरह जलाते है ?

सबसे पहले हवा नाकके अन्दर जाती है। आशा तो यही है कि तुम सभी लोग नाकसे साँस लेते हो, क्योंकि यदि मुँहसे साँस लेते हो तो प्रकृतिने वायुके दूषित पदार्थोंमें कुछेकको छान डालने-के लिए जो पहला तरीका (Filter process) बनाया है, उससे तुम फायदा नहीं उठाते।

तुमने शायद देखा होगा कि जब गहरा कुहासा पड़ता है तब तुम्हारी नाकका भीतरी हिस्सा बिलकुल काला पड़ जाता है। इसका कारण यह है कि नाकके अन्दर छोटे छोटे रोएँ हवामें भरी हुई कालिखके कणोंको अटका रखते हैं।

यदि सारीकी सारी कालिख साँसके जरिये खींच ली जाती और अन्दर जानेसे रोकी नहीं जाती तो सोचो तुम्हारी साँस लेनेकी नली अर्थात् श्वासोच्छ्वास-प्रणाली अबतक कितनी काली हो जाती और रुकावटोंसे भर जाती।

कुछ दूषित पदार्थ वायुमें सदा विद्यमान रहते हैं। ये कुहासे-की कालिखकी तरह छने नहीं होते। नाकके भीतर कुछ ऐसे उपाय रचे गये हैं जो किसी भी तरहके दूषित पदार्थको अन्दर नहीं जाने देते हैं।

नाकमें प्रवेश करनेके बाद वायु कुछ हदतक रोओंसे छन जाती है। फिर वह नाकके भीतरी मार्गसे साँसकी नलीमें होती हुई फेफड़ोंमें पहुंच जाती है। इन सभी मार्गोंकी सतह कुछ खास तौरसे नम या गीली होती है जिसमें वायुके बचे हुए दूषित पदार्थ चिपक जाते हैं। फल यह होता है कि फेफड़ोंतक पहुंचते-पहुंचते वायु शुद्ध होकर इस योग्य हो जाती है कि वह हमारे शरीरकी अग्निको जला सके।

वह खास तौरकी नमी तुम्हें साधारणतया मालूम नहीं होती। हाँ सर्दी या जुखाम होनेपर जब साँस लेनेमें दिक्कत या रुकावट होती है तब तुम्हें ऊपर कही हुई नमीका कुछ बोध हो सकता है।

परन्तु तुम पूछ सकते हो कि वह कौन-सी शक्ति है जो वायुको नाकसे खींचती हुई साँसकी नलीके जरिये अन्दरतक ले जाती है?

इस प्रश्नका उत्तर तुम्हें धौंकनीकी बनावटपर गौर करनेसे मिल जायगा।

यदि धौंकनी पहले दबायी जाती है तो फैली हुई हवा इसमें खिच आती है, क्योंकि तुम शायद जानते होगे, प्रकृतिको खाली जगहसे चिढ़ है।

यदि कोई जगह खाली हो जाती है तो उसे भरनेके लिए, पृथ्वीकी अवस्थाके अनुसार कोई न कोई चीज दौड़ पड़ती है, फिर वह चाहे समुद्र हो जो भूकम्पके कारण धरतीके धस जानेपर दौड़ पड़ता है, या हवा हो जो खाली जगहमें दौड़ पड़ती है।

फेफड़े तुम्हारे शरीरमें धौंकनीका काम करते हैं।

अँतड़ियों तथा वैसे ही अन्यान्य अवयवोंकी तरह फेफड़े भी इतने लम्बे-चौड़े होते हैं कि तुम उनका अनुमान नहीं कर सकते। यदि फेफड़ोंके नन्हें-नन्हें कोष्ठ और मकड़ीके जालेकी-सी दीवारें खोलकर जमीनपर बिछा दी जायें तो उससे एक सौ वर्ग गजकी जगह छिक जायगी।

परन्तु फेफड़ोंका समस्त भाग गुथा हुआ होता है, इसीलिए वे हृदयके साथ बहुत छोटी-सी जगहमें पसलियोंके घेरेमें सुरक्षित रहते हैं। पसलियों और रीढ़के सिरेके घेरेमें हमारे फेफड़े दो गुब्बारोंकी तरह रखे हुए हैं।

फेफड़ोंकी सूरत-शक्लको देखते हुए उन्हें गुब्बारे कहना ठीक नहीं है। इसी तरह उन्हें धौंकनीके समान बताना भी उचित नहीं है। हाँ, फेफड़ोंके और इन चीजोंके कामोंमें बहुत कुछ समता है।

मेरे विचारसे यदि फेफड़ोंको गोभीके फूलके समान कहा जाय तो उनकी सूरत-शक्लका कुछ अन्दाजा लग सकता है।

तुम्हें मालूम है कि फूल-गोभीके ऊपरके पत्ते तोड़कर अलग कर देनेपर एक मोटासा डंठल दिखायी पड़ता है। उस डंठलसे छोटे और पतले डठलोंकी शाखाएँ निकली रहती हैं। उन शाखाओंसे निकली हुई और भी अधिक शाखाएँ रहती हैं। इस तरह शाखा-प्रशाखाएँ एक दूसरीसे निकलती हुई पतली होती जाती हैं और अन्तमें उनके सिरेपर बहुत छोटी-छोटी सफेद फुनगियाँ होती हैं जिनका समूह 'फूल' कहलाता है।

गोभीके फूलको उलट दो तो तुम फेफड़ोंकी शक्लका अन्दाजा लगा सकोगे। साँसकी नलीका मोटा डंठल उत्तरोत्तर पतली नलियोंके अनेक भाग-विभागोंमें विभक्त होता है। क्रमशः पतली होती हुई नलियोंकी शाखा-प्रशाखाओंके सिरोंपर गोभीके फूलके सदृश बहुत छोटे-छोटे वायु-कोष्ठ होते हैं।

बस इतना ही याद रहना चाहिए कि फेफड़े ऐसे दो गोभीके फूल हैं जो मुख्य नली रूपी एक तनेसे दायीं-बायीं दो ओरको निकले है। ये हमारे दाहने और बायें फेफड़े हैं।

इन नलियोंकी दीवारोंमें रक्तकी थैलियाँ (Blood vessels) होती है। ज्यों ज्यों नलियाँ पतली होती जाती हैं त्यों त्यों इन थैलियोंका आकार भी पतला और सूक्ष्म होता जाता है, यहाँ-

तक कि जब ये वायु-कोष्ठोंतक पहुँचती हैं तब बहुत ही नाजुक हो जाती हैं।

जब वायु-कोष्ठ धौंकनीकी तरह दबते हैं तब हम साँस बाहर फेंकते हैं। इस क्रियाकी स्वाभाविक प्रतिक्रियाका रूप होता है साँस खींचना। इससे वायु-कोष्ठ फिर प्राणवायु (Oxygen) से भर जाते हैं।

इन छोटे-छोटे वायु कोष्ठोंमें प्रत्येक अपनेमें आप एक छोटीसी रसायनशाला है। इनका मुख्य काम है हवासे आक्सीजन खींचकर उसे अपनी सुकुमार रक्तकी थैलियोंके रास्ते मुख्य रक्तकी धारामें ले जाना, और गंदी हवाको कारबन डायक्साइड (Dioxide) नामक गैस (Gas) के रूपमें बदलकर उसे बाहर फेंकना।

पृथ्वीमें सभी जीव एक दूसरेपर किस प्रकार निर्भर हैं, यह इसीपर ध्यान देनेसे सूचित होता है कि मनुष्य और पशु तो अपने शरीरमें आक्सीजनको भस्म करके और शरीरसे कारबन डायक्साइडको बाहर निकालकर जीवित रहते हैं, परन्तु पेड़-पौधोंके जीवनके लिए ठीक इसकी उल्टी बात होती है, अर्थात् वे कारबन डायक्साइडको अपनेमें भस्म करके और आक्सीजनको अपने अन्दरसे निकालकर जीवित रहते हैं।

इस प्रकार वनस्पति और पशुके जीवन एक दूसरेकी सहायता करते हैं और हमारी पारस्परिक भलाईके लिए हमारे वायु-मण्डलसे लेन-देनका हिसाब बराबर रखते है।

समस्त जीवोंके सहयोग और एकत्वकी यह दूसरी शिक्षा हमें प्रकृतिसे मिलती है जिससे मनुष्य-जाति अपने पारस्परिक कार्य-संचालनके लिए बहुत कुछ बातें सीख सकती है।

इसी प्रकार नलियों और वायुकोष्ठोंके कारखानोंके साथ

श्वासोच्छ्वास प्रणालीकी जटिल व्यवस्था तभीतक ठीक ठीक काम कर सकती है जबतक इसके सभी भाग-विभाग अच्छी हालतमें हों और परस्पर सहयोग करते रहें। तुम्हें यह जानना चाहिए कि आपसका उनका सहयोग ही यथेष्ट नहीं है बल्कि जिस शरीरकी वे सेवा करते हैं उसके प्रत्येक अंगसे भी उनका सहयोग अवश्य होना चाहिए

पसलियाँ, छातीकी हड्डियाँ, रीढ़का सिरा और छाती और पेटके बीचकी एक मोटी और मजबूत नसकी पेटी—इन सबके घेरेमें जो एक खाना बन जाता है उसीमें हमारे फेफड़े सुरक्षित रहते हैं। यह खाना जैसा कि तुम जानते हो, कोई बहुत कसा हुआ कड़ा पिंजड़ा नहीं है और न उसे वैसा होना ही चाहिए।

श्वासोच्छ्वासकी धौंकनी जिस प्रकार फूलती-पचकती है उसी प्रकार इस खानेको भी फूलने पचकनेवाला होना चाहिए ताकि साँस छोड़ने और लेनेकी क्रियामें अड़चन न हो।

इस सम्बन्धमें विचार करनेपर तुम यह महसूस कर सकोगे कि श्वासोच्छ्वासकी क्रियाका ठीक ठीक संचालन तभी हो सकता है जब छातीमें हवा बिलकुल न हो और उसके आनेका कोई भी मार्ग न हो। धौंकनीमें यदि छेद हो गया तो वह ठीक ठीक काम नहीं करेगी।

यदि साँस अन्दर खींचनेके समय फेफड़े फूलते हैं तो इसका यही अर्थ है कि भीतर जानेवाली हवाका दबाव, उसके चारों ओरके स्थानके दबावसे अधिक है।

यदि फेफड़े हवासे खाली हो जाते और हवा छातीमें इस तरह घुस जाती कि फेफड़ोंके बाहर और छातीके अन्दरके स्थानका दबाव फेफड़ोंके अन्दरके दबावसे अधिक हो जाता तो फिर दूसरी बार साँस खींचना असम्भव हो जाता।

जिन लोगोंके फेफड़ोंमें कुछ खराबी आ जाती है उनकी चिकित्सा करनेमें डाक्टर-वैद्य इस तथ्यका उपयोग करते है।

दाहना या बायाँ जो भी फेफड़ा खराब हो उसे छातीकी दीवारसे हवा घुसाकर, संकुचित कर दिया जाता है। इस फेफड़ेका काम बन्द हो जाता है और इसे आराम करनेके लिए छोड़ दिया जाता है ताकि रोगसे लड़नेवाली प्राकृतिक शक्तिको रोगपर विजय पानेका मौका मिले। रोगी दूसरे फेफड़ेसे बराबर साँस लेता रहता है। बादको जब वह फेफड़ा दुरुस्त हो जाता है तब छातीकी दीवारमें भरी हुई हवाको धीरे-धीरे जज्ब किया जाता है जिससे वह फिर फूल उठता है और अपना काम करने लगता है।

श्वासोच्छ्वास-प्रणाली इतनी पेचीदा और नाजुक है कि उसमें कभी किसी तरहकी खराबीका न होना बड़े ही ताज्जुबकी बात होगी। खासकर शहरोंके सभ्य जीवनकी जो अवस्था है उसमें तो ऐसी खराबियाँ अवश्य होती हैं।

यह सच है कि यदि हमारा शरीर भला-चंगा है, हम स्वस्थ जीवन व्यतीत करते हैं और सब प्रकारसे सावधान रहते हैं, तो कुछ दूषित वस्तुएँ शरीरमें प्रवेश करके भी नष्ट हो जायँगी और हमारा कुछ बिगाड़ न सकेंगी।

अवस्थाके अनुसार अपनी व्यवस्था कर लेनेकी भी एक शक्ति हमारे शरीरको प्राप्त है जो निरन्तर काम करती रहती है।

जब कोई अस्वास्थ्यकर दूषित वस्तु साँसके जरिये प्रवेश करती है तब, अन्यान्य अङ्गोंकी भाँति, हमारे फेफड़े भी उस अवस्थासे मुकाबला करनेकी व्यवस्था कर लेते हैं। यदि दूषित वस्तुका बुरा असर बहुत ही कड़ा न हो अथवा हमारी तन्दुरुस्ती बिगड़ी हुई न हो तो हमारे फेफड़ोंमें उस दूषित वस्तुसे लड़नेकी एक शक्ति पैदा हो जाती है और इस कारण हमारा स्वास्थ्य ठीक रहता है।

इसी सिद्धान्तके आधारपर टीका दिया जाता है। किसी रोगके कुछ कीटाणु शरीरमें प्रवेश करा देनेसे शरीरकी स्वाभाविक संरक्षण शक्तिको उत्तेजना मिलती है और वह उस रोगके विरुद्ध बड़ी तेजीसे काम करती है। अब तुम समझ गये होगे कि जिस प्रकार मनुष्य अपने व्यक्तिगत और व्यावसायिक जीवनमें अवस्थाके अनुसार अपनी व्यवस्था कर लेते हैं, उसी प्रकार हमारे अंग-प्रत्यंग भी जब जैसी अवस्था होती है तब अपनी वैसी ही व्यवस्था कर लेते हैं।

हानि पहुंचानेवाले कुप्रभावोंके विरुद्ध हमारे शरीरमें निरन्तर युद्ध होता रहता है और अधिकतर हमारी ही जीत होती है, परन्तु इन बातोंकी हमें कुछ खबर नहीं होती।

यदि हम अस्वास्थ्यकर धुएंसे भरी ऐसी घनी बस्तियोंमें रहें जहाँ आक्सीजन प्रदान करके हवाको तरोताजा बनानेवाले पेड़ पौधे न हों, तो हमारे शरीरकी संचित शक्ति इस योग्य नहीं रहती कि वह शरीर-संहारक रोगोंके कीटाणुओंसे मोर्चा ले सके और ऐसी अवस्थामें साँसकी या खासकर फेफड़ेकी बीमारियोंका होना कठिन नहीं होता।

अब तुम इस बातको गप न समझकर सच समझोगे कि गाँवकी हवा और गाँवका जीवन स्वास्थ्यके लिए बहुत ही लाभदायक है।

जब कभी मौका मिले हमें खुली हवामें व्यायाम करके और लम्बी साँसें खींच कर अपने फेफड़ोंका उपचार करते रहना चाहिए। साथ ही हमें इस बातकी दृढ़ प्रतिज्ञा करनी चाहिए कि सामाजिक परिस्थितियोंके कारण जो विचार आज स्वास्थ्यकर जीवन व्यतीत करनेसे वंचित हैं उनकी अवस्था सुधारनेके लिए हम एक जिम्मेदार नागरिककी हैसियतसे कोई बात उठा नहीं रखेंगे।

अध्याय ८

रक्त प्रवाह—प्रणाली

जो क्रियाएँ आपसमें एक दूसरीसे सम्बद्ध होती हैं उनका श्रेणीबद्ध वर्णन करनेमें लेखकको कितनी कठनाइयोंका सामना करना पड़ता है, मैं समझता हूँ इसे थोड़ा-बहुत तुमने पिछला अध्याय पढ़ते समय महसूस किया होगा।

तुम्हें याद होगा, मैंने तुम्हें चिता दिया था कि शरीर और मनको दो विभिन्न वस्तुएं मान लेनेकी गलती न करना, हालाँकि इन दोनोंका अलग-अलग वर्णन करना मेरे लिए आवश्यक हो गया था। ठीक इसी तरह तुम्हें यह सत्य भी अपनी दृष्टिसे ओझल न कर देना चाहिए कि शरीरकी छः मुख्य क्रिया-प्रणालियाँ आपसमें एक दूसरीपर निर्भर हैं और समूचे शरीरकी स्वस्थतापर अवलम्बित हैं।

उदाहरणके लिए, पिछले अध्यायमें हमने यह संकेत किया था कि फेफड़ोंके वायु-कोष्ठोंकी दीवारोंमें छोटे-छोटे रक्त-कोष किस प्रकार रक्त-धारामें आक्सीजन ले जाते हैं और वहाँसे कार-बन-डायक्साइडको निकाल बाहर कर देनेका प्रबन्ध करते हैं।

इसे पढ़ते हुए तुम्हें आश्चर्य हुआ होगा कि इस प्रकरणमें हृदयकी क्रियाकी बात कहाँ चली गयी। यह तो तुम जानते ही हो कि हृदय एक केन्द्रिय पम्प (Pump) का काम करता है। इसमेंसे निकलकर रक्त सारे शरीरमें जाता है और फिर इसीमें लौट आता है।

आकार और मापमें हृदय तुम्हारी बँधी हुई मुट्ठीके समान है। पसलियोंके पीछेकी ओर बायें हिस्सेमें फेफड़ोंके साथ हृदय बहुत ही सुरक्षित स्थानमें अवस्थित है।

यद्यपि हम हृदयको एक ही समझते हैं पर वास्तवमें इसमें दो कोठरियाँ (Chamber) होती हैं और दोनों अपना-अपना काम अलग-अलग करती हैं। परन्तु जिस तरहका काम उनके जिम्मे है उसके लिहाजसे इन दोनोंका आपसमें घनिष्ठ सम्बन्ध है। ये दोनों कोठरियाँ भी किसी विशेष प्रयोजनसे दो दो हिस्सोंमें बँटी हैं।

हृदयके दाहिने हिस्सेका सम्बन्ध फेफड़ोंमें भ्रमण करनेवाले रक्तसे है। बायें हिस्सेका सम्बन्ध सारे शरीरमें भ्रमण करनेवाले रक्तसे है।

गर्भमें जब बच्चा आता है उसके कई महीने बादतक उसके रक्तका परिभ्रमण मातासे भिन्न स्वतन्त्र रूपसे नहीं होता और तबतक बच्चेका अस्तित्व माताके अस्तित्वसे बँधा रहता है।

उसके बाद माताको उत्सुक बनानेवाला वह अवसर आता है जब बच्चा पेटमें हिलता-डुलता है, करवट बदलता है और उसके नन्हे-से हृदयमें धड़कन शुरू होती है। गर्भिणी स्त्रीके पेटमें कान लगाकर सुननेसे बच्चेके हृदयकी यह धड़कन साफ सुनायी देती है।

इसके बाद भी बच्चा जबतक पेट में रहता है तबतक उसका पोषण एक नाड़ेके जरियेसे होता है जिसका एक सिरा उससे और दूसरा उसकी मातासे जुड़ा रहता है। जब नाड़ा काट दिया जाता है तब बच्चेका स्वतन्त्र जीवन होता है क्योंकि उस समयसे उसके रक्तका परिभ्रमण, पाचन-क्रिया और साँस लेनेकी क्रिया स्वतन्त्र रूपसे होने लगती है।

हृदयकी धड़कनकी तुलना किसी शक्तिशाली पम्पकी धड़-धड़ाहटसे दी जा सकती है और वह है भी वास्तवमें वही। पम्प-वाली शक्ति ही आक्सीजनसे ताजा और लाल खून फेफड़ोंसे खींचकर हृदयके बायें हिस्सेमें लाती है।

वहाँसे खून एक बड़ी नससे गुजरता हुआ पतली-पतली नसों-की शाखाओं और उपशाखाओंमे जाता है और इस तरह सारे शरीरमें उसका दौरान होता है।

खूनकी पहुँच एक एक छोरतक कैसे हो जाती है, सका अनुमान तुम्हें किसी प्रान्तकी रेलवे लाइनके नक्शेको देखकर हो सकता है। किसी बड़े स्टेशनसे रेलवे लाइन शुरू होती है। आगे चलकर उसकी शाखाएँ भिन्न भिन्न ओरको जाती हैं। उन शाखाओंसे भी अनेक प्रशाखाएँ निकलती हैं। इस प्रकार प्रान्तके समस्त बड़े-छोटे स्टेशनोंतक रेल पहुँचती है।

तुम्हारे रक्तप्रवाहका नक्शा भी इसी तरहका है। इस रक्त-प्रवाहकी यात्रा बड़ी ही लम्बी और पेचीदा है क्योंकि इसे प्रत्येक छोटेसे छोटे स्टेशनतक जाना पड़ता है और फिर लौटना पड़ता है। एकबार आने-जानेकी इस पूरी यात्रामें प्रायः एक मिनटका समय लगता है।

जब रक्त अपने स्थानसे यात्रा करता है तब वह मालगाड़ीकी तरह आक्सीजनसे लदा रहता है। कोष्ठोंके कारखानोंमे जलानेके लिए वह आक्सीजन रूपी ईंधन उतार देता है और उन कार-खानोंकी रद्दी चीजें याने कारबन-डायक्साइड लाद लेता है।

इस क्रियामें रक्त अपना चमकीला लाल रंग खो देता है और उसमें नीली झलक आ जाती है। इससे यह सूचित होता है कि तब उसने दूसरी किस्मका बोझ लाद लिया है।

मैं समझता हूँ कि तुम फिर एकबार प्रकृतिके लोकतंत्र-सिद्धान्त-

को ओर दृष्टिपात करोगे। हम सभी लोगोंकी नसोंमें लाल और नीला दोनों ही प्रकारका रक्त रहता है।

जब रक्त अपने स्थानसे चलकर बहिर्गमनकी यात्रा समाप्त कर लेता है तब वह सूक्ष्म और छोटी छोटी शिराओं और नसोंसे होकर बड़ी बड़ी नसोंमें होता हुआ अपने मूल-स्थानपर लौट आता है।

लौटनेकी यात्रा समाप्त करके रक्त हृदयके दाहिने हिस्सेतक आता है और उसमेंसे गुजरकर फेफड़ोंमें जाता है। वहाँ वह अपना कारबन डायक्साइडका बोझ उतार देता है। यही बोझ साँसके द्वारा बाहर फेंक दिया जाता है। इसीको 'साँस छोड़ना' या 'उच्छ्वास' कहते हैं।

उसके बाद आक्सीजनका नया बोझ साँसके द्वारा अन्दर खींचा जाता है। इस बोझसे लदा हुआ रक्त फिर अपनी लम्बी यात्रा शुरू करता है। इसे हमलोग 'साँस लेना' या 'श्वास' कहते हैं।

तुम सोच सकते हो, रक्तको कितनी कठोर पारिस्थिति है कि उसे कुछ भी विश्राम नहीं मिलता। रक्त हृदयके बायें हिस्सेसे 'पम्प' किया जाता है, वह सारे शरीरका चक्कर लगाता है और लौटकर हृदयके दाहिने हिस्सेमें आता है और फेफड़ोंसे होता हुआ फिर हृदयके बायें हिस्सेमें आता है और फिर उसकी नयी यात्रा आरम्भ होती है। इस प्रकार उसके चक्कर लगानेका क्रम बना रहता है।

अन्ततः हमारे लोहे और इस्पातके बने हुए मजबूतसे मजबूत इंजन भी बराबर मरम्मत माँगते हैं और उनकी लगातार पूरी मरम्मत करते रहनेसे ही वे ठीक ठीक काम देते हैं।

इसी प्रकार रक्तकी मरम्मतके लिए या उसे नूतनत्व प्रदान

करनेके लिए बड़ा सुन्दर चमत्कार-पूर्ण प्रबन्ध किया गया है। जिन सामग्रियोंसे रक्त बना है उनका क्षतिग्रस्त होना बड़ा ही कठोर व्यापार है। अतएव उनकी क्षतिपूर्ति करके उन्हें सदा नूतनत्व प्रदान करनेके लिए विशेष प्रबन्ध किया गया है।

रक्त स्वतः एक जटिल तत्व है। इसका आधा भाग तरल-पदार्थ-मय होता है जिसमें जलकी ही अधिकता होती है। दूसरे भागमें करोड़ों और अरबों छोटे छोटे कोष, जिन्हें रुधिर अणु (Corpuscles) कहते हैं, उस तरल पदार्थमें इस तरह तैरते रहते हैं जैसे नीबूके रसमें उसके गूदेके छोटे छोटे टुकड़े तैरा करते हैं।

ये रक्त अणु दो प्रकारके होते हैं।

श्वेत अणुओंके विषयमें पहले ही बताया जा चुका है कि ये शरीरके रक्षी दल हैं और शरीरपर किसी प्रकारका संक्रामक प्रभाव पड़ते ही ये युद्धके लिए मोर्चेपर आ डटते हैं।

दूसरे प्रकारके अणु लाल होते हैं। ये लाल अणु भी कम महत्वपूर्ण नहीं है। ये रक्तरूपी मालगाड़ीके डब्बे हैं। जब रक्त-रूपी मालगाड़ी सारे शरीरका चक्कर लगाती है तब ये ही डिब्बे आक्सीजन और कारबन डायक्साइडको उतारते चढ़ाते है।

प्रत्येक लाल अणु प्रायः एक महीनेतक काम करता और जीवित रहता है। इसके बाद वह खारिज और निकम्मा होकर तिल्लीमें जा लगता है। तिल्ली पेटके पीछेकी ओर होती है। फिल-हाल खारिज किया हुआ लाल अणु वक्त जरूरतपर काम आनेके लिए वहाँ जमा रहता है। जिस तरह युद्धके समय गाड़ियोंका अभाव होनेपर पुराने और निकम्मे डिब्बे काममें लाये जाते हैं, उसी तरह इनसे भी काम लिया जाता है।

लाल अणुओंकी अत्यधिक मृत्युसंख्याके विषयमें तुम्हें

चिन्तित होनेकी कोई जरूरत नहीं क्योंकि तुम्हारी हड्डियोंका लाल मग्ज उनकी खाली जगहोंको सदा भरता रहता है। प्रत्येक सेकडमें वह दस लाख लाल अणु तैयार करता है।

श्वेत अणुओंकी संख्या लाल अणुओंसे बहुत कम होती है। वास्तवमें प्रत्येक ५०० लाल अणुओंपर एक श्वेत अणु होता है। इनकी मृत्यु संख्या भी अधिक होती है। यह बात अवश्य है कि जिस प्रकारके संक्रामक प्रभावको दूर करनेके लिए इनकी जितनी शक्तिकी आवश्यकता होती है उसीके अनुसार इनकी मृत्यु संख्या कम या बेशी हुआ करती है। लाल अणुओंकी तरह स्वाभाविक अवस्थामें इनके स्थानकी पूर्ति भी तुरन्त हो जाती है।

शरीरके समस्त कोष्ठोंमें आक्सीजन ले जाने और वहाँसे कारबन डायक्साइडके ले आनेके अलावा रक्तका यह भी काम है कि वह शरीरकी स्वाभाविक गर्मी बनाये रखे। यह गर्मी 'फारेनहीट' नामक तापमानकी ९८ डिग्रीके लगभग सदा बनी रहती है।

अतएव अब तुम समझ सकते हो कि जब तुम्हारे शरीरका ताप बढ़ जाता है तब तुम्हारे लिए दौड़-धूप क्यों की जाती है। यदि शरीरका ताप स्वाभाविक अवस्थासे बहुत अधिक है तो कोई न कोई खराबी अवश्य है।

औसत अवस्थाके मनुष्यकी नसोंमें चक्कर लगानेवाले रक्तकी तादाद १० से १२ पाइंट तक होती है। इतनी जल्दी और खूबीके साथ नये रक्तकी सप्लाई (Supply) या आमदनी होती है कि जबतक इस तादादका आधा हिस्सा हमारे शरीरसे न निकल जाय तबतक डरकी कोई बात नहीं। हाँ आधा रक्त निकल जानेपर खतरा जरूर है।

यदि शरीरके अन्दरूनी या बाहरी हिस्सेसे इतनी बड़ी

तादादमें रक्त निकल जाय तो इस कमीको कहीं बाहरसे रक्त लेकर पूरी करना चाहिए। शरीरमें रक्त बनानेवाले बड़े बढ़िया कारखाने हैं अवश्य परन्तु वे इतने बड़े कामको पूरा नहीं कर सकते।

रक्तकी कमीको पूरा करनेके लिए रक्त प्रवेश करानेका प्रयत्न मनुष्य जातिके सारे इतिहासमें पाया जाता है परन्तु इसकी वास्तविक उपयोगी प्रणालियोंका आविष्कार बहुत हालहीमे (१९१४ से १९१८ तकके) प्रथम महायुद्धके समयमें हुआ है।

इन प्रणालियोंकी लगातार उन्नति हुई और आज रक्त-दान करनेवाले व्यक्तियों (Blood Donor) और रक्त संचय करनेवाली संस्थाओं (Blood Bank) का होना एक निश्चित बात समझी जाती है।

कोई व्यक्ति अपना रक्त किसी अपने ही समतुल्य श्रेणीके व्यक्तिको दान कर सकता है। सारे संसारमें रक्तकी मुख्य चार श्रेणियाँ पायी जाती हैं। शरीरमे प्रवेश करानेके लिए जो रक्त-दान दिया जाता है उसको श्रेणी निर्धारित कर लेना बहुत आवश्यक है जिसमें उसका प्रयोग उपयुक्त व्यक्तिपर ही किया जा सके।

किसी व्यक्तिका रक्त किसी अन्य प्रकारके रक्तवाले दूसरे मनुष्यके शरीरमें प्रवेश करानेका अर्थ यह होगा कि दो विभिन्न श्रेणीके रक्त मिश्रित नहीं होंगे और इससे कोई फायदा न होगा। कई प्रकारके रक्त कई अन्य प्रकारके रक्तोंमें घुल मिलकर एक हो जाते हैं परन्तु कितने ही प्रकारके रक्तोंसे उनका मेल नहीं भी मिलता है।

रक्त संचय करनेवाली संस्थाका जन्म एक विचित्र अविष्कारसे सम्भव हुआ। यह देखा गया है कि शरीरसे रक्तकी अत्यधिक कमी हो जानेपर उसकी पूर्ति श्वेत और रक्त अणुओं (Corpuscles) से करनेकी आवश्यकता नहीं है बल्कि नसोंमें रक्तका जलीय भाग

(Fluid) भरना चाहिए। रक्तका जलीय भाग यदि एक बार रोगीकी नसोंमें बढ़ा दिया जाता है तो उसके शरीरके अणु बनानेवाले कारखाने तेजीसे काम करने लगते हैं और अणुओंके ढेर लगा देते हैं।

अतएव यह विचार निर्धारित हुआ कि यदि किसी रक्त देनेवाले व्यक्तिके रक्तके अणु खींच लिये जाते हैं तो जलीय भाग सुखाकर बुकनी (Powder) बनाया जा सकता है। यह बुकनी वैसी ही समझो जैसी टीनके डिब्बेमें दूधकी बुकनी बिकती है। वास्तवमें यदि रक्तको इस तरह न सुखाया जाय तो वह बड़ी जल्दी जम जायगा, खराब हो जायगा और किसी कामका न रहेगा।

विगत महायुद्धके समय दूर-दूरके असम्बद्ध स्थानोंमें सिपाहियोंके संकटमय प्राणोंकी रक्षाके लिए रक्तके जलीय अंशको सुखानेका और सूखे हुए रक्तको उनतक पहुँचानेका प्रबन्ध बहुत बड़े पैमानेपर किया गया था।

रक्तका सुखाया हुआ जलीय भाग पानीमें घोलकर जिस सिपाहीके शरीरसे बहुत ज्यादा रक्त निकल जाता था उसकी नसमें सुईके जरिये पेवस्त करा दिया जाता था। इस प्रकार उस सिपाहीके शरीरके अणु बनानेवाले कारखानोंको उत्साह और उत्तेजना मिलती थी और वे नये जलीय भागमें अणु बना-बनाकर भरने लगते थे। इसके फलस्वरूप सिपाहीकी बहुत बड़ी जरूरतके वक्त रक्त प्रवाह-रूपी मालगाड़ी फिर काम करने लगती थी।

तुमने रक्त-हीनता (Anaemia) नामक रोगके विषयमें सुना होगा। इस रोगमें शरीरके रक्तकी कमी हो जाती है। यह कमी किसी तरहकी चोट लगनेसे नहीं होती बल्कि लाल अणु बनानेवाली कलकी कमजोरीसे हो जाती है। इस कमजोरीका कारण है रक्तके कारखानोंमें आवश्यक माल-मसालेका अभाव

होना। रोगीको लौहकी अधिकतावाले खाद्य-पदार्थ देकर और लिवर एक्सट्रैक्ट (Liver extract) जैसी दवाएँ देकर इस अभावकी पूर्ति की जाती है।

यदि श्वेत अणु बनानेवाली कल कमजोर पड़ जाती है तो शरीरमें इस श्वेत रक्षी-दलकी कमी हो जाती है। ऐसी अवस्थामें शरीरमें कहीं किसी जगहका जरा-सा भी कट जाना खतरनाक होता है क्योंकि खूनकी पपड़ी या खुरंड नहीं जमता और खूनका निकलना बन्द नहीं होता।

सौभाग्यका विषय है कि ऐसी अवस्था शायद ही कभी होती है। परन्तु दुर्भाग्यवश कुछ परिवारोंमें यह भी एक पैतृक रोग होता है।

रक्त-प्रवाहके विषयमें प्राप्त ज्ञानके उपयोगसे औषधोपचारकी विशेष उन्नति हुई है। रक्तकी नाड़ियोंमें सीरम (Serum) या वैक्सीन (Vaccine) का इन्जेक्शन देकर बहुतेरे रोगोंको अच्छा किया गया है।

जो जानवर किसी विशेष रोगसे पीड़ित हो चुकते हैं उनके रक्तसे उस रोगका सीरम (Serum) बनाया जाता है। इस सीरममें उस रोगसे लड़नेवाले नये बने हुए रक्षीदल रहते हैं। जब सीरम एक बार किसी मनुष्यके शरीरमें इंजेक्ट कर दिया जाता है तब उसमें भरे हुए रक्षीदल मानों एक नये स्थानमें स्थानान्तरित कर दिये जाते हैं। यहाँ वे नया क्षेत्र पाते हैं और शत्रुको हरानेमें बहुत सहायक होते हैं। अतएव केवल पौधे ही बागोंमें बढ़नेके लिए स्थानान्तरित करके दुबारा नहीं बोये जाते बल्कि अन्यान्य अणु इत्यादि भी स्थानान्तरित करके बढ़ाये जाते हैं।

परन्तु वैक्सीन (Vaccine) में वास्तवमें उसी रोगके

कीटाणु होते हैं जिससे हम बचना चाहते हैं। ये कीटाणु जब हमारे शरीरमें इंजेक्शनके द्वारा प्रवेश करते हैं तब हमारे शरीरके रक्षीदलको दिक करते हैं और फिर रक्षी-दल बड़ी तादादमें इकट्ठे होकर इन्हें मार भगाते हैं।

इन्हीं सिद्धान्तोंपर टीका (Inoculation and vaccination) दिया जाता है।

अब तुम समझ गये होगे कि रक्त-प्रवाह-प्रणालीकी बनावट, उसकी क्रिया-प्रणाली और अणुओंके कार्योंका पूरा-पूरा ज्ञान प्राप्त किये बिना कुछ भयंकर मारात्मक रोगोंसे बचनेका उपाय हो ही नहीं सकता था।

यदि तुम इस बातपर गौर करोगे कि अबसे प्रायः तीन सौ वर्ष पूर्व प्रत्येक दो व्यक्तिमें एक व्यक्तिके मुँहपर चेचकके दाग रहा करते थे, तो तुम्हें यह समझनेमें देर न लगेगी कि सिर्फ चेचकको ही रोकनेमें इन उपायोंने कितना बड़ा काम किया है।

रक्त-प्रवाह-प्रणालीमें जो दोष अधिकतर हो जाते हैं उनसे विशेषतः हृदयके रोग उत्पन्न हो जाते हैं। इन रोगोंका असर रक्त पम्प (Pump) करनेके किवाड़ों (Valve) पर पड़ता है।

ये किवाड़ इस बातका उपाय करते रहते हैं कि रक्तका प्रवाह ठीक ठीक दिशामें हो अर्थात् हृदयके दाहिने या बायें भागमें जिस तरह जाना-आना चाहिए उसी तरह जाये-आये और विपरीत दिशामें या गलत रास्तेसे न बहे। तुम जानते होगे भाप बनानेवाली कल (Boiler) में भी ठीक इसी तरहका प्रबन्ध रहता है।

तुम समझ सकते हो कि यदि कदाचित् ऐसी ही दुर्घटना हो जाय और रक्त उलटा सीधा बहने लगे तो सारे रक्त-प्रवाह-

मण्डलकी अत्यन्त कोमल कार्य-प्रणालीमें कैसी कुछ गड़बड़ी पैदा हो जायगी।

यदि कोई खास अन्दरूनी कमजोरी न हो तो अन्याय अंगोंकी भाँति हमारा हृदय भी बहुत मेहनत या थकावट सहन कर सकता है। हृदयकी यह सहन-शक्ति—हमारे हाड़-मांसके हृदय और हमारे काल्पनिक हृदय—दोनोंपर ही लागू है।

और सब बातोंकी तरह हमें हृदयकी ओर भी उचित रीतिसे सावधानी रखनी चाहिए, पर साथ ही इस विषयमें आवश्यकतासे अधिक घबरा जाने या तूल तवील देनेकी जरूरत नहीं है।

अध्याय ९

स्नायु मण्डल और मस्तिष्क या मेधा

तुम्हारे स्कूली जीवनके समय सम्भवतः मेधा या जेहनके विषयमें बहुत जोर दिया जाता रहा होगा।

वास्तवमें स्कूलमें पढ़ते समय अधिकतर यही होता है कि हमें जिस तरहका मनुष्य बननेकी चेष्टा करनी चाहिए उसकी एक ऐसी तसवीर हमारे सामने खींची जाती है जिसके सिर-पैरका कोई ठिकाना नहीं होता।

पुस्तक पढ़ना ही जीवनका एकमात्र महत्वपूर्ण कार्य नहीं है। पुस्तकका अध्ययन केवल इसलिए उचित है कि इससे आत्मिक और भौतिक-दोनों प्रकारके लाभ होते हैं।

जितना ही अधिक तुम्हारा ज्ञान होगा उतना ही अधिक विस्तृत विचार और अभिज्ञता तुम्हें प्राप्त होगी। यह तभी होगा जब तुम स्कूलकी पढ़ाईमें सफलता प्राप्त करनेके लिए इतना अधिक मनोयोग न दो कि जीवनके उन वास्तविक अनुभवोंपर ध्यान ही न दे सको जिनसे चरित्र सुधरता है।

मेधा या जेहनका होना बड़ी अच्छी बात है यदि इसका अर्थ है शिक्षा प्राप्त करनेकी स्वाभाविक योग्यताका होना। परन्तु इस योग्यताके कुछ निजी दोष भी होते हैं।

यह योग्यता कुछ गरूर पैदा कर देती है जिससे मेधावी लोगोंको हीन-मस्तिष्क या कुन्दजेहन लोगोंको नीची निगाहसे

देखनेकी आदत पड़ जाती है। इससे मनुष्य मिलनसार नहीं बनता और दुखी रहता है।

दूसरी ओर यह भी ठीक है कि मस्तिष्क या जेहनका न होना एक बहुत बड़ा अभाव है। परन्तु साथ ही यह अभाव आशीर्वाद भी बन सकता है यदि हम इससे परिश्रमी बननेकी शिक्षा ग्रहण करें। परिश्रमी हमें "चुस्त और चालाक" कहे जानेवाले लोगोंसे आगे बढ़ा सकता है।

ऊपर कहे गये दो प्रकारके मनुष्योंमें तुम चाहे जो भी हो, मेधावी हो या कुन्दजेहन हो, परन्तु तुम्हारे लिए यह महसूस करना हितकर होगा कि इन दोनोंमें बहुत ही कम अन्तर है, इतना कम जितनेकी तुम कल्पना नहीं कर सकते।

बन्दर एक तुच्छ पशु है, परन्तु उससे हमारा निकटतम सम्बन्ध है। सच पूछो तो हम अपने और उसके मस्तिष्कमें जितना अन्तर मानकर खुश होते हैं वास्तविक अन्तर उससे कहीं कम है।

इसमें निराश होनेकी कोई बात नहीं है। बल्कि इससे भविष्यके लिए आशा और विश्वास होता है कि हमारी अगली पीढ़ियोंके द्वारा मनुष्य-जातिकी अभी और भी अधिक उन्नतिकी काफी गुंजायश है।

मेंढकके 'टैडपोल'के रूपकी तरह हम भी अभी गुफाओंमें रहनेवाले अपने पूर्वजोंकी बहुतेरी प्रारम्भिक प्रतिक्रियाओंके बन्धनमें जकड़े हुए हैं। जैसे जैसे हम उनसे छूटकर आगे बढ़ते जायँगे वैसे वैसे मनुष्य-जातिकी पूर्ण सम्भावनाएँ हमें महसूस होती जायँगी।

अच्छा तो हमारा मस्तिष्क या मेधा है क्या ?

यह हमारी बुद्धिका यन्त्र है; यह वह कल है जिससे हमें

आवेगोंकी अनुभूति होती है और यथार्थ बातकी जानकारी होती है। जहाँतक हमारे मस्तिष्कका यह काम है वहाँतक वह निम्नश्रेणीके जीवोंके ही मस्तिष्कके समान है, परन्तु उसमें उन्हींकी सतहपर केवल विकासकी गुंजायश ज्यादा है।

उन जीवोंके मस्तिष्कसे जब हमारा मस्तिष्क आगे बढ़ता है तब उसे अमूर्त (काल्पनिक और खयाली) बातों की जानकारी होती है।

तुम्हें याद होगा, जैसा कि बताया जा चुका है, गर्भमें बच्चा उन सब ऐतिहासिक विकासकी परिस्थितियोंसे गुजरता है, जिनसे मनुष्य-जाति अस्तित्वमें आयी।

केवल मस्तिष्कके विकासमें ही मनुष्य-जाति जीवनके प्रारम्भिक रूपोंसे आगे बढ़ गयी है। कहनेका तात्पर्य यह है कि जिन विशेष जीवाणुओंसे मनुष्यके मस्तिष्कका निर्माण हुआ है वे अन्यान्य जीवोंके जीवाणुओंसे कहीं अधिक उच्चश्रेणीके होते हैं और विशेषतापूर्ण कार्य करते हैं।

जब माता-पिताके अर्पित जीवाणु-कोष्ठ, पैदा होनेवाले बच्चोंका निर्माण करनेके लिए, अपनेको टुकड़ोंमें विभक्त करते हैं और आपसमें काम बाँट लेते हैं, तब रीढ़के सिरेपर कुछ नवनिर्मित जीवाणु-कोष्ठोंका विकास होने लगता है। ये कोष्ठ ही आगे चलकर उस बच्चेका मस्तिष्क बन जाते हैं।

ज्यों ज्यों ये नये जीवाणु-कोष्ठ बढ़ते हैं त्यों त्यों वे फिर आपसमें अलग-अलग कामोंका बँटवारा करते हैं। कुछ कोष्ठ मस्तिष्कका वह भाग बनाने लगते हैं जिससे शरीरकी क्रियाशीलताका सम्बन्ध है। कुछ कोष्ठ मस्तिष्कका वह भाग बनाने लगते हैं जिससे चलने-फिरनेके समय शरीरका वजन ठीक रखने और नाचनके समय शरीरकी पेचीदागति ठीक रखनेका सम्बन्ध है।

कुछ जीवाणु-कोष्ठ मस्तिष्कका अमूर्त चिन्तन या सोचने-विचारनेवाला भाग बनाते हैं। कुछ कोष्ठ स्मृति-यंत्रका निर्माण करते हैं। मस्तिष्कके कुछ भाग ऐसे हैं जहाँ आवेगोंकी प्रतिक्रियाएँ अंकित होती हैं। एक भागका तो इतना गहरा सम्बन्ध चरित्र और स्वभावसे होता है कि इसे क्षति पहुँचनेसे उस व्यक्तिकी सारी प्रकृति बदल सकती है।

खोपड़ीकी मोटी हड्डीकी दीवारोंमें सुरक्षित मस्तिष्कका वास्तविक रूप छिलका उतारे हुए अखरोट-सा होता है। अखरोट-के समान ही इसके दो भाग जुड़े हुए होते हैं और उसीकी तरह इसकी सिमटी हुई सतह होती है। फेफड़ोंके समान ही मस्तिष्क सिमटा हुआ होता है। इससे यह फायदा है कि इसकी सतह बहुत बड़ी होनेपर भी वह छोटेसे स्थानमें अमा जाती है।

विश्वास किया जाता है कि इस सतहके बढ़िया या घटिया होनेपर ही इस रहस्यका उत्तर मिलता है कि कोई क्यों अधिक या कम मेधावी है।

शरीरके अन्यान्य अंगोंकी तरह मस्तिष्क भी करोड़ों जीवाणु-कोष्ठोंसे बना है। इनमें प्रत्येक कोष्ठको अपना-अपना अलग-अलग कार्य मिला है। इन विशेष कार्योंको सम्पन्न करनेके लिए ही इन कोष्ठोंका विकास होता है।

तुम्हें याद होगा, क्योंकि हम बता चुके हैं, कि किस तरह हमारे शरीरकी साँस लेनेकी और पाचनकी महत्वपूर्ण क्रियाएँ बिना हमारे जाने हुए अपना-अपना काम करती हैं। अर्थात् ये क्रियाएँ जो कि हमारे जीवनके लिए अत्यन्त आवश्यक हैं, अपने आप होती रहती हैं चाहे हम उन्हें ध्यानमें लायें या न लायें।

इसका कारण यह है कि मस्तिष्कके एक विशेष भागका केवल

यही काम है कि वह देखे कि ये क्रियाएँ ठीक-ठीक होती हैं। पूर्वकी हजारों पीढ़ियोंमें दुहराये जानेके कारण कुछ अभ्यास ऐसे बद्धमूल होकर जम गये हैं कि उनसे सम्बन्ध रखनेवाला मस्तिष्कका भाग अपना काम आप ही करता है और हमें उसके लिए कोई चिन्ता नहीं करनी पड़ती।

मनुष्य-जातिकी एकसे एक बढ़कर प्रगति और उन्नति इसी कारण सम्भव हुई। यदि हमें प्रत्येक साँस, प्रत्येक पाचन-क्रिया और प्रत्येक गतिपर ध्यान देना पड़ता तो हम इनके सिवाय और काम ही न कर सकते।

जैसा कि तुम्हें किसी अगले अध्यायमें बताया जायगा ये कल-कारखाने जिनकी प्रतिक्रियाएं हम अनजानतेमें कर लिया करते हैं, खतरोंसे खाली नहीं है।

ये कल-कारखाने वहींतक उत्तम हैं जहाँतक ये साँस लेने, भोजन पचाने, इत्यादि रोजमर्राके काममें हमारे बिना जाने हमारी सहायता करते हैं।

परन्तु जब हम महत्वपूर्ण विषयोंमें अपनी आदिम अवस्थाकी मनोवृत्तिकी ओर झुक पड़ते हैं तब हम अपनेको भ्रान्तिके गड्ढेमें गिरा लेते हैं और हमसे बहुत बुरी गलतियाँ हो जाती है।

तुम्हें यह कभी न भूलना चाहिए कि मनुष्यके प्रारम्भिक विकास-कालमें भूख, भय और इन्द्रियतृप्तिकी आवश्यकताओंने बहुत बड़ा जोर बाँधा था। इनमेंसे किसी भी आवश्यकताकी पूर्तिके लिए उस कालका मनुष्य दूसरे मनुष्यकी हत्या कर डालता था।

किसी अंशतक हमने मनुष्यकी हत्या न करनेकी शिक्षा प्राप्त की है। हमें नित्य सावधानीके साथ इस बातका भी अध्ययन करना चाहिए कि उस आदिम अवस्थासे पैदा हुई घृणा, अन्ध-

विरोध और स्वार्थपरताकी लहरें हमारे हृदयमें कहाँतक जोर पकड़ती हैं।

जबतक मनुष्यजाति वास्तविक अर्थमें सयानी या विकसित होकर इन बद्धमूल और अज्ञात भावसे होनेवाली प्रतिक्रियाओंके नियंत्रणकी शिक्षा नहीं प्राप्त कर लेती तबतक न तो संसारमें शान्ति स्थापित हो सकती है और न हम परस्पर हिल-मिलकर रह सकते हैं।

स्वाभाविक विकास इन बातोंको स्वतः दूर कर देगा, परन्तु हम उसकी प्रतीक्षा क्यों करें? हममें प्रत्येक व्यक्ति आदिम प्रतिक्रियाओंके प्रति सचेत रहकर उन्नतिमें सहायता प्रदान कर सकता है। परन्तु हम इस विषयकी विस्तृत चर्चा आगे चलकर करेंगे।

इस समय हमें मस्तिष्कके उस भागपर विचार करना है जो हमारी आदिम प्रतिक्रियाओंको टेलीफोनके बटन लगे हुए तख्ते (Telephone switchboard) की तरह संगठित करता है।

इस भागसे सारे शरीरके हजारों स्नायु-तन्तु लगे हुए हैं जो मस्तिष्कमें संवाद पहुँचाने और वहाँसे संवाद ले जानेका काम करते हैं।

मान लो कि तुम रोजमर्राका काम करना चाहते हो। साँस लेने और पाचनकी क्रियाको हम उदाहरण-स्वरूप नहीं रखना चाहते क्योंकि मस्तिष्कका भाग-विशेष इन कामोंको अपने आप ही करता है; हम जानते भले ही न हों, परन्तु इसका भी वही तरीका है।

इसीलिए हमें ऐसे कामोंका उदाहरण लेना चाहिए जिनके लिए कछ विचारकी आवश्यकता होती है। उदाहरणके लिए मान लो कि तुम्हें स्कूलमें दिया हुआ काम घरपर करना है।

तुम चाय पी चुके हो और कुछ आराम भी कर चुके हो। तुम्हारे मनमें यह विचार है कि हमें होम टास्क (Home task) करना है। तुम्हारे मनमें यह विचार इसीलिए है कि यह वहाँ जमकर बैठ गया है और स्मृतिकी कलने इसको विशेष रूपसे अंकित कर लिया है।

तुम घड़ीकी ओर देखते हो। तुम्हारी आँखें जो कि एक प्रकारके बहुत ही पेचीदा फोटोके कैमेरा सी हैं, अपनी सुकुमार स्नायु-शिराओंके द्वारा तुम्हारे मस्तिष्कमें घड़ीका दृश्य प्रतिबिम्बित करती हैं।

बहुत दिनोंकी शिक्षा और अभ्यासके कारण मस्तिष्कके विशेष जीवाणु-कोष्ठोंको घड़ीकी सुइयोंको समयके रूपमें अनुवादित करनेकी शक्ति प्राप्त है। जब यह संवाद मस्तिष्कके सोचनेवाले भागमें पहुँचता है तब तुम यह महसूस करते हो कि अगर काम करना है तो अब उठना चाहिए।

तब इतनी शीघ्रतासे, जितना कि तुम सोच भी नहीं सकते हो, मस्तिष्क तुम्हारी टाँगोंको संवाद भेजता है और तुम उठ खड़े होते हो और टाँगें चलने लगती हैं। जिन मांस-पेशियोंको यह संवाद भेजा जाता है वे तुम्हें मानों चाभी घुमाकर कुर्सीसे उठा देती हैं और अपना काम करने लगती हैं।

तुम खड़े हो जाते हो। इस हरकतके साथ ही, मस्तिष्कका वह भाग जो शरीरका वजन ठीक रखनेसे सम्बन्धित है, सारे शरीरकी मांसपेशियोंको संवाद भेजता है। ये पेशियाँ पृथ्वीकी आकर्षण शक्तिके विरुद्ध तन जाती हैं। यदि ऐसा न हो तो तुम एक लोंदेकी तरह गिर पड़ो। इन बातोंका तुम्हें कुछ पता नहीं चलता क्योंकि सीधे खड़े होकर चलना मनुष्य-जातिका बहुत पुराना अभ्यास हो गया है।

तुम जानते हो कि अब तुम्हें पुस्तक, स्याही और कागजकी जरूरत है। तुम्हारी आँखों और गर्दनमें संवाद जाते हैं। तुम सिर घुमाकर कमरेमें चारों ओर देखते हो।

आँखें मस्तिष्कमें कमरेकी तसवीर प्रतिफलित करती हैं। मस्तिष्कके एक भागसे दूसरे भागमें संवाद जाता है कि तुम्हें जिन चीजोंकी जरूरत है वे कमरेके एक कोनेमें टेबुलपर रक्खी हुई हैं।

अब फिर पावोंको संवाद जाते हैं। वजन ठीक रखनेवाला संवाद भी जाता है। तुम कमरेमें चलते हो।

इस बातका उदाहरण देनेके लिए कि सभी संवाद मस्तिष्कसे नहीं उपजते हैं, यह मान लेना चाहिए कि तुम कमरेमें चलते समय फर्शपर पड़ी हुई किसी चीजसे ठोकर खाकर गिर पड़ते हो। तुम्हारे पैरके स्नायुतन्तु चोट और सम्भवतः पीड़ा अनुभव करते हैं और इस संवादको मस्तिष्कमें भेजते हैं। इस प्रकार तुम आँखसे बिना देखे हुए भी उस बाधाके विषयमें जान जाते हो।

फिर पीठ, बाँहों और हाथोंको संवाद भेजे जाते हैं और तुम झुककर जिन चीजोंको लेना चाहते हो, ले लेते हो। पुनः संवाद तुम्हारे पाँवोंको दिया जाता है और तुम चलकर अपने डेस्क तक आ जाते हो। घुटनों और कमरको संवाद मिलनेपर तुम बैठ जाते हो। बाँहों और हाथोंको संवाद मिलनेपर तुम पुस्तक खोलते हो, कलम उठाते हो और लिखने लगते हो।

अबतक तुमने मस्तिष्कके उन भागोंसे काम लिया जिनका सम्बन्ध शारीरिक क्रिया और गतिसे है। अब तुम्हें तीसरे भागसे काम लेना है। इसका सम्बन्ध अमूर्त विचारसे है। गणित, साहित्य, भूगोल, इतिहास इन सबका काम इसी भागसे लिया जाता है।

क्या तुमने किसी एक वस्तुका "एक" उस वस्तुसे अलग देखा है ? अथवा किसी अच्छे लड़केका "अच्छा" उस लड़केसे अलग देखा है ? ये वस्तुएँ अर्थात् "एक" और "अच्छा" अमूर्त हैं, इनका कोई स्थूल रूप नहीं है।

स्कूलका टास्क करते समय तुम्हारे मस्तिष्कका वह भाग, जिसका सम्बन्ध इन बातोंसे है। काममें लाया जाता है।

विशेषतः मस्तिष्कके इसी भागके विकासमें मनुष्यता अन्य सब प्रकारके जीवनसे आगे बढ़ गयी है।

हम यह जान चुके हैं कि हमारे कितने ही अभ्यास बद्धमूल होकर जम गये है। हममेंसे प्रत्येक व्यक्तिके लिए यह सम्भव है कि हम उन अभ्यासोंमें अपने कुछ नये अभ्यास भी जोड़ दें। पहली बात तो यह है कि यद्यपि मनुष्यके सीधे खड़े होनेका इतिहास हमारी सहायता करता है फिर भी हमें बच्चोंको सीधे खड़े होकर चलना सिखाना पड़ता है। इस प्रकार मस्तिष्कके जो विशेष कोष्ठ इस विशेष कार्यको करते हैं उन्हें अभ्यासके द्वारा हम पूर्णता प्रदान करते हैं।

हम और भी बहुत-सी बातें सीख लेते हैं।

उदाहरणके लिए मान लो कि तुम टाइपराइटिंग सीखना चाहते हो। पहले-पहल तुम्हारी उंगलियाँ टाइपराइटरके (Key Board) 'की-बोर्ड'पर ठीक ठीक नहीं बैठेंगी और तुम सोचोगे कि तुम इस बखेड़ेके कामको कभी सीख ही न सकोगे।

यदि तुम सिर्फ 'की-बोर्ड'को देखते रहकर अपनेको धोखा न दोगे और अध्यवसायसे काम लोगे तो समय आनेपर तुम अपने आप बिना हिचक जल्दी-जल्दी टाइप करने लगोगे।

जो अभ्यास तुम्हें प्रकृतिसे प्राप्त है उनमें इस प्रकार तुम नया अभ्यास जोड़ लोगे। स्नायुमण्डलके जरिये तुम्हारे मस्तिष्क

और हाथोंके बीच जो संवाद-वाहक काम करते हैं वे इस नये काममें शिक्षित होकर कुशल हो जायँगे।

टाइपराइटिंगपर काम करने-जैसा उपजाया हुआ अभ्यास पैतृक प्रभावके रूपमें सन्तानमें नहीं आ सकता। जिराफकी लम्बी गर्दनके विषयमें प्राणिशास्त्रविदोंका तर्क तुम्हें याद होगा। यदि टाइप करना हमारी जातिके जीवन-मरणका प्रश्न होता तो इसका अभ्यास हम पैतृक प्रभावके रूपमें प्राप्त करने या नहीं यह कहना कठिन है।

स्नायु, जो शरीरके संवाद-वाहक हैं, दो प्रकारके होते हैं।

एक प्रकारके स्नायु वे हैं जो देखना, सुनना, छूना, इत्यादि विषयोंकी आज्ञाएँ मस्तिष्कसे लाते हैं या उसतक पहुँचाते हैं। जान बूझकर की गयी इच्छाओंको पूरी करनेके काम भी ये ही करते हैं। इस प्रकारके स्नायु सुषुम्नामें भी (जो कि पीठकी हड्डीमें सुरक्षित है, संवादके आदान-प्रदानका कार्य करते हैं; इनसे वे कार्य अपने आप होते हैं जिनका हमें ज्ञान नहीं होता। इसलिए तुम्हें यह मान लेना चाहिए कि एक-ही-सा काम करनेके लिए मस्तिष्क और सुषुम्ना निकटतम साझीदार हैं।

दूसरे प्रकारके स्नायु कार्य करनेकी आज्ञा शरीरके यथोचित क्षेत्रमें ले आते हैं।

यदि हम मस्तिष्ककी समता टेलीफोनके केन्द्रिय स्विच-बोर्डसे करें तो प्रथम प्रकारका स्नायु मुख्य या 'ट्रंक'—लाइनके समान कहा जायगा और दूसरे प्रकारका स्नायु स्थानीय छोटी लाइनके विस्तारके समान होगा।

इसलिए हमारे स्नायुमंडलका नक्शा बहुत-कुछ रक्त-प्रवाहकी 'मालगाड़ी' के नक्शेके समान है। और यह भी मत भूलो कि ये दोनों सेवा-प्रणालियाँ (Services) परस्पर कितनी सम्बन्धित

हैं क्योंकि रक्तप्रवाह-प्रणाली ही स्नायु-मंडलके समस्त भागोंमें उनके उपयोगके लिए आक्सीजन-रूपी ईंधन पहुँचाती है।

सीधेसे सीधा और कठिन से कठिन जो भी काम हम करते हैं वह टेलीफोनके आपरेटरोंमें,—अर्थात् स्नायुओंको बनानेवाले विशेष जीवाणु-कोष्ठोंका और मस्तिष्क, स्नायु और मांस-पेशियोंके जीवाणु कोष्ठोंका आपसमें,—बिजलीकी चमक-सरीखी शीघ्रतासे होनेवाले सहयोगका फल है।

व्यक्तित्वके व्यापक प्रश्नपर अर्थात् एक मनुष्यके मस्तिष्कसे दूसरे मनुष्यके मस्तिष्कमें क्या अन्तर है और एक व्यक्तिसे दूसरा व्यक्ति कैसे भिन्न है—इस विषयपर अगले किसी अध्यायमें विचार किया जायगा।

मस्तिष्कके सम्बन्धमें अनेक बातें हम अभीतक नहीं जान पाये हैं। इन्हींमें एक यह भी प्रश्न है कि मस्तिष्क, मन, व्यक्तित्व और चरित्रमें क्या और किस हदतक सम्बन्ध है।

कुछ वैज्ञानिकोंका कहना है कि हमारे जाननेके लिए इससे अधिक और कुछ नहीं है कि मस्तिष्क एक बड़ा पेचीदा और कठिन यंत्र है जो कि अपने समान ही शरीरके जटिल यंत्रके सहयोगसे काम करता है।

वे कहेंगे कि यदि तुम्हें किसीके पैतृक प्रभाव, वंशगत स्वभाव और विगत अनुभवका यथेष्ट ज्ञान हो तो तुम इस बातकी भविष्यवाणी कर सकते हो कि किसी विशेष परिस्थितिमें उसका कैसा आचरण होगा।

परन्तु मानव-जाति सदासे आत्माको जिस रूपमें अनुभव करती आयी है वह ऐसी किसी स्थितिसे कहीं ऊपर है कि किसी कलपुर्जेका बटन दबा दिया और इच्छित कार्य अपने-आप हो गया। वस्तुतः बहुतेरे अपवाद-रूप व्यक्ति शारीरिक और मान-

सिक—दोनों प्रकारकी बाधाओंको शमन करनेमें समर्थ हुए हैं; इससे यह सूचित होता है कि मस्तिष्क कलपुर्जेसे ऊपरकी चीज है।

कमसे कम इस समय हमें यह तथ्य स्वीकार कर लेना चाहिए कि हमें अपने उपयोगमें लानेके लिए विचार, अनुभूति, स्मृति और आशाका एक बहुत ही सुकुमार यंत्र प्राप्त है।

इस यंत्रके कार्य नित्यके चमत्कार हैं।

दूसरी ओर हमें इस बातसे भी दृष्टि नहीं हटानी चाहिए कि मस्तिष्ककी खासियतके लिहाजसे मनुष्य-मनुष्यमें और पुरुष-स्त्रीमें कुछ अन्तर नहीं है। बन्दरोंके जगत्से अभीतक हम बहुत आग नहीं गये हैं।

इस विचारसे हमें व्यक्तिगत रूपसे नम्र परन्तु साथ ही आशावान् रहना चाहिए।

विकासका विचित्र विशाल क्षेत्र अभी भी खुला पड़ा है। इसकी विशालता और भी बढ़ गयी है क्योंकि जीवनके इतिहासमें यह पहला ही अवसर है कि कोई जीव अपने ही विकासको प्रगति देनेकी क्षमतासे अपनेको सम्पन्न पा रहा है।

दूसरे जीव भविष्यकी ओर इतना भी कम ध्यान नहीं दे सकते थे जितना कि हम दे सकते हैं। यदि हम चाहें तो विकासमार्गमें बहुत तरहसे सहायता प्रदान कर सकते हैं। सबसे महत्वपूर्ण सहायता यह हो सकती है कि हम अपनी आदिम मनोवृत्तियोंको निकाल बाहर करने का सच्चा प्रयत्न करें। आदि कालमें ये मनोवृत्तियाँ जीवनरक्षार्थ भले ही आवश्यक रही हों, परन्तु आज ये अनेक अंशोंमें हानिकारक हैं।

क्या मनुष्य-जाति, स्वार्थपरताके द्वारा नाशकी ओर न बढ़कर उच्चमार्गको अपनायेगी?

इस प्रश्नका उत्तर बहुत कुछ तुमपर अवलम्बित है।

अध्याय १०

ग्रन्थि या गिल्टी मण्डली

जैसा कि पहले बताया जा चुका है, शरीरसे मनको अलग नहीं समझा जा सकता। एककी बड़ी ही जबर्दस्त प्रतिक्रिया दूसरे-पर लगातार होती रहती है।

इसमें कोई अचम्भेकी बात नहीं है क्योंकि मस्तिष्क, जिसे मनका यंत्र कहा जा सकता है, वास्तवमें शरीरका ही एक भाग है। यह जिस्मी अणुकोष्ठोंसे बना है और रक्तप्रवाहसे पोषित होता है, और इसके सेवक और दूत स्नायु हैं जो दूरसे दूरके अंगों और अवयवोंसे जुड़े हुए हैं।

इनके अतिरिक्त सारे शरीरमें वितरित एक विशेष प्रकारके अवयव भी हैं जो, ऐसा जान पड़ता है, शरीर और मनकी मध्य-स्थताका काम करते हैं। ये हैं बिना नलीकी गिल्टियाँ जिन्हें ग्रंथि (Gland) कहते हैं। शारीरिक और मानसिक—दोनों प्रकारकी क्रियाओंमें ये गिल्टियाँ बड़ा महत्वपूर्ण भाग लेती हैं।

तुमने गिल्टीके विषयमें सुना होगा। सर्दी होनेपर गलेमें गिल्टियाँ उभर आती हैं। यह कोई बहुत संगीन बीमारी नहीं है।

मुख्यतया गिल्टियाँ दो प्रकारकी होती हैं। पिछले किसी अध्यायमें तुम्हें पसीनेकी थैलियोंके विषयमें बताया जा चुका है। पसीनेकी थैलियाँ स्वेट ग्लैण्ड्स (Sweat Glands) कहलाती हैं। गिल्टीकी यह भी एक किस्म है। इन थैलियोंका काम महत्वपूर्ण अवश्य है परन्तु इनसे भी अधिक आवश्यक कार्य खासतौरसे

बनी हुई बिना नलीकी गिल्टियाँ करती हैं। इन्होंके विषयमें मैं यहाँ विचार करूँगा।

शरीर और मनकी क्रियाओंके विषयमें हमें जो कुछ ज्ञान प्राप्त है वह बहुत कुछ अधूरा और असम्बद्ध है। अतएव इस विषयमें खोज-ढूँढ़के लिए विशाल क्षेत्र पड़ा है।

बिना नलीकी गिल्टियोंके विषयमें हमारी जो कुछ जानकारी है वह भी बहुत ही अधूरी है। हम केवल इतना ही बता सकते हैं कि ये गिल्टियाँ यह या वह काम करती हैं, क्योंकि यदि कोई गिल्टी ठीक-ठीक काम नहीं करती है तो परीक्षा-द्वारा हम यह जान लेते हैं कि उसका क्या परिणाम होता है। परन्तु हम बहुधा यह नहीं बता सकते कि यह परिणाम क्यों और कैसे होता है।

शरीरके जीवाणु-कोष्ठोंकी भाँति गिल्टियाँ भी बहुत ही जटिल और महत्वपूर्ण रासायनिक-क्रियाशालाएँ हैं। आमाशय और अँतड़ियोंकी तरह ये भी कुछ विशेष प्रकारके रस बनाती हैं।

बिना नलीकी गिल्टियाँ इस रसको आमाशयकी तरह किसी विशेष अवयवमें नहीं उड़ेलती हैं और न पसीनेकी थैलियोंकी तरह चमड़ीके अन्दरसे निकालती हैं। बिना नलीकी गिल्टियाँ अपने रसोंको सीधे रक्त-प्रवाहमें ढाल देती हैं और इस प्रकार वे सारे शरीरमें पहुँच जाते हैं।

इन गिल्टियोंका आपसमें सहयोग होना बहुत ही आवश्यक है। यद्यपि ये गिल्टियाँ शरीरके अलग-अलग स्थानोंमें अवस्थित हैं तो भी इनमें एककी क्रियाका प्रभाव दूसरीपर पड़ता है। इसका कारण सम्भवतः यह है कि रक्त-प्रवाहके द्वारा इनका आपसमें सम्बन्ध बना रहता है।

इन गिल्टियोंमें एक सर्वप्रधान गिल्टी होती है। यह सबसे महत्वपूर्ण गिल्टी होती है और यह देखती है कि और सब

गिल्टियाँ आपसमें मिलतके साथ काम करें। इस गिल्टीका नाम है पिटुइटरी (Pituitary) ग्लैंड। यह मस्तिष्कके आधार स्थानमें रहती है, और उस भागसे सम्बन्धित रहती है जिसका प्रभाव हमारे आवेगोंपर पड़ता है।

इसका आकार आध इंचके बराबर होता है। इतनी छोटी होनेपर भी यह गिल्टी बहुत अधिक महत्वपूर्ण है। इसको अपने स्थानसे हटा देनेका यह अर्थ होगा कि और सब गिल्टियाँ अपने अपने काम बन्द कर देंगी।

'पिटुइटरी' गिल्टीके दो भाग होते हैं।

पहला भाग हमारे अस्थि-पंजरके विकासपर शासन करता है। यदि यह निर्धारित समयसे अधिक काम करे तो मनुष्य बहुत लम्बा चौड़ा हो जाय। यदि यह सुस्तीसे काम करे तो मनुष्य बौना हो जाय। मानसिक विकासपर भी इसके ऐसे ही प्रभाव पड़ सकते हैं।

इस गिल्टीके दूसरे भागका काम अभीतक बहुत कम समझमें आया है, परन्तु यह विश्वास किया जाता है कि पाकस्थली और उत्पादक इन्द्रियोंके विकास और कार्योंसे इसका गहरा सम्बन्ध है।

अतएव यह बात समझमें आ जायगी कि मानसिक और शारीरिक अवस्थाएँ बहुत कुछ इसी गिल्टीकी स्वाभाविक क्रिया-पर निर्भर हैं।

थाइरोइड (Thyroid) गिल्टीके भी दो भाग होते हैं। यह गर्दनके निचले हिस्सेमें सामनेकी तरफ होती है। यदि यह गिल्टी बहुत अधिक काम करनेके लिए उत्साहित होती है तो शारीरीक रोग होते हैं और मनुष्यके स्वभावपर भी ऐसा प्रभाव पड़ता है कि वह जरा-जरा-सी बातपर घबराने और हौल

करने लगता है, जिससे उसके महत्वपूर्ण अवयवोंपर बहुत जोर पड़ता है। यदि यह गिल्टी सुस्तीसे काम करे तो इसका यह फल हो सकता है कि बच्चा बौना या कमजोर हो जाय और बालिग मोटा या काहिल हो जाय।

यहाँ यह हृदयंगम कर लेना लाभदायक होगा कि सारी गिल्टी-प्रणाली, या सच पूछो तो, शरीर और मनकी अन्तर्क्रिया दुतर्फा काम करती हैं।

जिस मनुष्यकी 'थाइरोइड' गिल्टी बहुत अधिक क्रियाशील होगी वह हौलू स्वभावका होगा। परन्तु जिस मनुष्यपर परिश्रम इत्यादिका बहुत अधिक दबाव पड़ता है उसकी 'थाइरोइड' गिल्टीमें खराबी आ सकती है। हम यह ठीक ठीक नहीं जानते कि इन दोनों अवस्थाओंमें कौन-सी पहले होती है। यह कहना कठिन है कि पहले मुर्गीका बच्चा हुआ या अण्डा।

जब हम वृक्कके ऊपर स्थित आरडेनल और जुड़ुआ (Ardenal and twin) गिल्टियोंके विषयमें विचार करेंगे तब सम्भवतः इस प्रश्नका उत्तर मिल सकेगा।

इन गिल्टियोका एक भाग एड्रेनेलिन (Adrenalin) नामक रस तैयार करता है। यह रस जब रक्त-प्रवाहमें बहता है तब शरीर और मनकी अवस्थाको प्रभावित करता है। जब किसी कारणसे हम क्रोध करते हैं या डर जाते हैं तब एड्रेनेलिन बहुत बहता है और हममें इस तरहकी चाभी भर देता है कि हम शरीर और मन—दोनोंसे उस आकस्मिक परिस्थितिका मुकाबला करनेके लिए तैयार हो जाते हैं।

रक्तके दबावपर प्रभाव पड़ता है। क्रोध होनेपर रक्त सिर-तक दौड़ जाता है, और डर होनेपर, रक्त सिरसे झोंकसे उतरता है। पसीनेकी थैलियोंपर भी असर पड़ता है, जिससे पसीना

छूटने लगता है। उस आकस्मिक स्थितिसे मुकाबला करनेके लिए हृदय जोरसे धड़कने लगता है।

यहाँ हमें इस भेदका कुछ पता लग सकता है कि स्नायु-मण्डल और पाचन-क्रियापर चिन्ता, फिक्र इत्यादि मानसिक अवस्थाओंका क्या प्रभाव पड़ता है और क्या परिणाम होता है।

स्थायी चिन्ताके फलस्वरूप 'एड्रेनेलिन' रस बहुत अधिक बनता है। रक्त प्रवाहमें इस रसके अधिक बहनेसे और साथ ही स्नायुओंमें तनाव पड़नेसे पाचन क्रियापर प्रतिक्रिया होती है और मेदेकी बीमारियाँ उठ खड़ी होती हैं।

एड्रेनल (Adrenal) गिल्टियोंका दूसरा भाग और भी अधिक महत्वपूर्ण है। यह शरीरमें जल और नमकके व्यवहार और वितरणका नियंत्रण करता है और उत्पादक गिल्टियोंसे इसका घनिष्ट सम्बन्ध होता है।

उत्पादक या यौन गिल्टियोंकी स्थिति, प्रकृति और क्रिया जिस प्रकार पुरुषमें होती है, स्त्रीमें उससे भिन्न प्रकारकी होती है।

स्त्री और पुरुष—दोनोंमे ही इन गिल्टियोंकी दो भिन्न प्रकारकी उपज होती है; एक तो विशेष प्रकारके रस जो कि अन्य बिना नलीकी गिल्टियोंके रसोंके समान होते हैं और सीधे रक्त-प्रवाहमें जाते हैं, और दूसरे मादा अण्डे या नर बीज, जिनका, बच्चा जननेके लिए, एक साथ आना जरूरी है।

प्रजनन मण्डलीवाले अगले अध्यायमें हम इन गिल्टियोंके विषयमें ब्योरेवार विचार करेंगे।

तुम्हें याद होगा कि पाचन क्रिया प्रणालीके सिलसिलेमें बताया जा चुका है कि अग्न्याशय (Pancreas) के कारखानोंमें पचानेवाले रस तैयार किए जाते हैं। विशेष प्रकारकी गिल्टियोंमें शुमार किये जानेका कुछ हक अग्न्याशयको भी है क्योंकि

पाचक रस बनानेके अलावा इसे एक दूसरा काम भी करना पड़ता है जो कि अन्य बिना नलीकी गिल्टियोंकी क्रियाके समान ही होता है।

अग्न्याशय इन्सुलिन (Insulin) नामक रस उपजाता है। इस रससे रक्त-प्रवाहमें चीनी ठीक ठीक गर्क होती है। यदि यह रस इस कार्यको ठीक ठीक न करे तो बहुमूत्र या चीनी जानेकी बीमारी हो जाय।

उपर्युक्त गिल्टियोंके अलावा और भी तीन गिल्टियाँ हैं—पाराथाइरोइड, पिनीयल और थाइमस (Parathyroid, Pineal and thymus); पिछली दोनों गिल्टियाँ जुड़ुआँ होती हैं।

पाराथाइरोइड गिल्टी थाइरोइडके साथ ही रहती है और रक्त-प्रवाह तथा केन्द्रिय स्नायुमण्डलकी क्रियाओंमें सहायक होती है।

पिनीयल गिल्टी मस्तिष्कके पिछले भागसे निकलकर आगेको उभरी हुई होती है। यह विश्वास किया जाता है कि इसका व्यवहार जनन-क्रियाके शीघ्र विकासको रोकनेके लिए होता है। यह ठीक ही है क्योंकि जो बच्चा इस क्रियाका उपयोग नहीं कर सकता उसे इसकी योग्यता देना एक असम्भव-सी बात होती।

वास्तवमें बहुतेरे बड़ी उम्रके लोग भी इस क्रियाके उपयोगमें असमर्थ होते हैं। यह एक ऐसा महत्वपूर्ण विषय है कि आगे चलकर मैं इसपर पूरी तरहसे विचार करूँगा।

थाइमस गिल्टी छातीकी हड्डीके ऊपरी हिस्सेमें पीछेकी ओर होती है। इसका विकास बच्चोंमें होता है, परन्तु यह उम्रके साथ धीरे-धीरे छोटी होती जाती है और प्रायः १४ वर्षकी उम्रमें करीब-करीब गायब हो जाती है। इसके विषयमें भी यही विश्वास किया जाता है कि यह भी पिनीयल गिल्टीकी तरह काम करती

है। परन्तु इस गिल्टीका ठीक-ठीक प्रयोजन अभीतक नहीं समझा जा सका है।

गिल्टी-मण्डलीके इस संक्षिप्त विवरणसे तुम्हें दो बहुत आवश्यक बातोंका ज्ञान हुआ होगा।

पहली बात तो यह है कि इस क्षेत्रमें हमारा ज्ञान बहुत ही परिमित है। दूसरी बात यह है कि गिल्टियाँ मनुष्यके पूर्ण स्वाभाविक विकास-साधनमें बहुत महत्वपूर्ण कार्य करती हैं।

कुछ आवश्यक गिल्टियोंकी क्रिया-हीनताके कारण बच्चे अंग-भंग या कुन्दजेहन हो सकते हैं. परन्तु सौभाग्यसे अब ऐसी औषधियाँ तैयार हो गयी हैं कि इनके व्यवहारसे गिल्टियोंकी क्रियाहीनता मिट जाती है।

कुछ अवस्थाओंमें जब सयाने लोगोंमें गिल्टियोंकी क्रियाएँ बेतरतीब हो जाती हैं, तब दवा या नश्तरके जरिए उनकी हालत भी सुधारी जा सकती है।

गिल्टियोंके विषयमें भी अभी अन्वेषण और आविष्कारके लिए बहुत बड़ा क्षेत्र खाली है। वास्तवमें इस क्षेत्रकी छान-बीन करनेवाले वैज्ञानिक उसी तरहके पथ-प्रदर्शकों और साहसिक प्रयत्न करनेवालोंमें हैं जिस तरहके लोग पहले नये-नये देश खोज निकालनेके लिए समुद्र-यात्रा किया करते थे। सम्भवतः इन वैज्ञानिकोंका काम तो और भी अधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि इनके आविष्कारोंसे मनुष्य-जातिका स्थायी लाभ होगा।

यदि इस ओर तुम्हारी लगन और योग्यता हो तो ऐसे साहसिक कार्यमें भाग लेना तुम्हारे लिए हितकर होगा।

अध्याय ११

जननक्रिया मण्डली

अब मैं जनन-क्रिया प्रणालीपर विचार करना चाहता हूँ परन्तु यह समझमें नहीं आ रहा है कि इस विषयका आरम्भ कहाँसे किया जाय। व्यावहारिकताकी दृष्टिसे सम्भवतः यही उचित होगा कि पुरुष और स्त्रीकी जननेन्द्रियोंका वर्णन किया जाय और फिर यह देखा जाय कि इनकी क्रिया-प्रणाली क्या है।

इसके पहले यह आवश्यक प्रतीत होता है कि जितनी बातें इस सम्बन्धमें बतलायी जा चुकी हैं, उनपर एक सरसरी दृष्टि डाल ली जाय। पुरुष और स्त्रीके बीजोंके संयोगके बिना सन्तानोत्पत्ति नहीं हो सकती। एक अवधितक माताके शरीरमें इस संयुक्त बीजका पोषण होता है जिससे बच्चेका विकास होता है और वह संसारमें जन्म ग्रहण करनेके योग्य बन जाता है।

यह अवधि नौ महीनेकी होती है। जब बच्चा बनकर तैयार हो जाता है तब वह अपना स्वतंत्र जीवन ग्रहण करनेके लिए माताके शरीरसे निकल पड़ता है।

पुरुषोंमें जननेन्द्रियके अवयव स्त्रियोंसे अधिक सरल होते हैं क्योंकि पुरुषोंको स्त्रियोंकी भाँति नौ महीनेतक बच्चेको सेनेकी और फिर बादको उसे स्तन-पान करानेकी तैयारी नहीं करनी पड़ती।

केवल शरीरको दृष्टिमें रखा जाय तो यह स्पष्ट है कि पुरुषका कार्य-भाग बहुत ही सरल है। उसीके अनुकूल उसके जननेन्द्रिय-

का गठन होता है । वह केवल बीज बोकर ही छुट्टी पा जाता है। उसे धारण करके उससे नवीन जीवको जन्म देनेका काम भूमिरूपिणी स्त्रीका है तथा इसके अनुकूल उसके बाह्य और भीतरी जनन-अंगोंकी रचना होती है ।

पुरुषके अण्डकोषोंके अनुरूप स्त्रीके भी गिल्टियाँ होती हैं। इन्हें ओवरी (Ovary) कहते हैं। ये स्त्रीके शरीरमें छिपी रहती हैं। अण्डकोषोंकी तरह ये सटी हुई नहीं होतीं, बल्कि पेड़ूके नीचे गर्भाशयके दोनों ओर एक दूसरीसे कुछ फासलेपर होती हैं।

इन गिल्टियोंसे दो नालियाँ निकलकर गर्भाशयमें जाती हैं। यहीं वह गद्दी होती है जिसपर जन्मनेवाले बच्चेका विकास होता है। गर्भाशयके छिद्रका लगाव शरीरके बाहरतक होता है। जिसे योनि या 'वेजाइना' (Vagina) कहते हैं ।

गर्भाशयके छिद्रसे बाहरी मुँहतकका मार्ग चमड़ीकी तहोंसे सुरक्षित रहता है। इन्हें वल्वा (Vulva) कहते हैं। यहीं मूत्राशयसे आयी हुई वह नली होती है जिसके द्वारा दूषित जल अर्थात् मूत्र बाहर निकलता है ।

मैं समझता हूँ कि जनन-क्रिया और मलमूत्र-त्याग-क्रियाके यन्त्रोंके पास-पास होनेके कारण ही हमें अपनी शरीरके निम्न भागके विषयमें लज्जा बोध होती है ।

जैसा कि आगे चलकर बताया जायगा, लड़कपनमें हमारी इस विषयकी धारणाएँ प्रायः मूर्खतापूर्ण होती हैं; और एक बार जब कोई बात मनमें बैठ जाती है तब उसका मिटना वास्तवमें कठिन हो जाता है ।

ऐसी मूर्खतापूर्ण धारणाओंमें एक यह भी है कि टट्टी-पेशाबके लिए जाना लज्जाजनक बात है। हममें बहुतेरे लोगोंका ऐसा ही विचार है। परन्तु वास्तवमें यह मूर्खता है क्योंकि यदि हम

टट्टी-पेशाब न करें तो हमारा शरीर भीतर ही भीतर गन्दा और दूषित होकर काम करना ही बन्द कर देगा।

परन्तु मैं समझता हूँ कि जननेन्द्रियोंके विषयमें हम जो लज्जा बोध करते हैं उसका आधा कारण यह है कि चूँकि ये दोहरा काम करती हैं इसलिए इनकी जनन-सत्ता और गन्दगी एक होकर हमारे अज्ञ मनपर अधिकार कर बैठी है।

इस विषयमें आगे बढ़नेके पहले यह उचित होगा कि जननेन्द्रियोंका और अधिक ब्योरेवार वर्णन कर दिया जाय।

लड़के-लड़कियोंके मनमें यह जाननेका कौतूहल होना कि स्त्री-पुरुषकी बनावट कैसी है,—बिलकुल स्वाभाविक और उत्तम लक्षण है। परन्तु इस कौतूहलका समाधान न होना ही बुरा है क्योंकि इससे यह धारणा हो जाती है कि हमारी इन्द्रियोंके विषयमें कोई न कोई खराबी, कोई न कोई बुरी बात, अवश्य है। इसके फल-स्वरूप जननेन्द्रियोंके सम्बन्धमें एक अपराध और लज्जाकी अनुभूति होने लगती है।

गर्भाशयका मुँह एक इञ्च लम्बा स्तूपाकार नल-सा होता है और स्वतः गर्भाशय नाशपातीके आकारका होता है। मुँह और नलियोंको छोड़कर यह सब ओरसे बन्द होता है। नलियाँ प्रायः ढाई-ढाई इंच लम्बी हैं और दोनों ओवरी (Ovary) से सम्बन्धित होती हैं।

अब हमें यह देखना है कि ये अंग क्या काम करते हैं।

पुरुषके अण्डकोषोंसे दो काम होते हैं एक तो, रस विशेष बनता है जो कि पुरुषके रक्त-प्रवाहमें जाता है; और दूसरे, इनमें वीर्य या स्पर्म इकट्ठा रहता है और जब वह निकलकर स्त्रीके अंगमें प्रविष्ट हो जाता है तब फिर इनमें नया वीर्य आ जाता है।

इन दोनों वस्तुओंका निर्माण उन्हीं क्रियाओंके अन्तर्गत है जिनका संचालन चेतन मस्तिष्क-द्वारा नहीं होता।

अण्डकोषों-द्वारा निर्मित रस-विशेष रक्त-प्रवाहमें मिलकर पुरुषके सारे शरीरमें पहुँच जाता है और पुरुषत्वके चिह्नोंका निर्माण करता है, जैसे—पेड़ूके नीचे और छातीमें बाल, दाढ़ी, भारी आवाज इत्यादि।

अण्डकोष अपनी पूरी क्रिया तभी आरम्भ करते हैं जब वे इस योग्य हो जाते हैं, अर्थात् चौदह वर्षकी आयुमें। इनकी पूर्ण क्रिया-प्रणाली एकाएक काम नहीं करने लगती बल्कि धीरे-धीरे करती है। बाल्यावस्थासे पुरुषत्व-प्राप्तितकके कुछ वर्षोंके समयको किशोरावस्था कहते है। किशोरावस्थामें ही पुरुषत्वके सारे लक्षण प्रकट होकर पूर्णताको प्राप्त होते हैं। मुख्यतया अण्डकोषों तथा अन्यान्य बिना नलियोंकी गिल्टियोंके कार्योंसे ही ऐसा होना सम्भव होता है।

प्रत्येक बारके बीज-वपनमें पुरुषके कमसे कम ५ करोड़से ५० करोड़तक स्पर्म (बीजाणु) निकलते हैं। इस संख्यापर सम्भवतः तुम्हें विश्वास न होगा; परन्तु स्मरण रहे कि ये बीजाणु बहुत ही छोटे होते हैं। इतनी बड़ी संख्यामें इनका एक साथ निकलना इस बातका प्रमाण है कि प्रकृति चाहती है कि मनुष्य-जातिकी वंश-वृद्धि निश्चित रूपसे हो।

स्त्रीके एक बीजाणुको उपजाऊ बनानेके लिए पुरुषका एक बीजाणु काफी है। इस दृष्टिसे, एक बारमें इतने अधिक बीजाणुओंका व्यवहार व्यर्थका अपव्यय ही जान पड़ेगा। परन्तु इसके अनेक कारण हो सकते हैं जिनमें एक तो यही है कि बीज-वपनमें किसी प्रकारकी अनिश्चितता न रहे और वह प्रत्येक बार सफल हो।

पुरुष-बीजाणुओंके छोटे आकारको देखते हुए मानना पड़ेगा

कि उन्हें स्त्री-बीजाणुओंसे संयुक्त होनेके लिए काफी लम्बी यात्रा करनी पड़ती है। इस दौड़में बहुसंख्यक जीवाणु भाग तो लेते हैं पर इनमें जो सबसे मजबूत, तेज और सन्तानोत्पत्तिके योग्य होता है वही यथास्थान पहुँचकर स्त्रीके गर्भाशयमें स्थित अण्डेमें प्रवेश पाता है।

पुरुषके अण्डकोषकी तरह स्त्रीकी ओवरी भी प्रायः १३ वर्षकी उम्रमें काम करना शुरू करती है।

ओवरीके द्वारा जो विशेष रस बनते हैं वह रक्त-प्रवाहमें मिलकर गिल्टियोंको ऐसी प्रेरणा प्रदान करते है कि वे स्तनोंका विकास-कार्य करती हैं।

पुरुषके जिस अंगविशेषमें वीर्य और उसमेंके जीवाणु बनते हैं उसे अण्डकोष कहते हैं। अण्डकोषकी तरहका ही एक अंग स्त्री-शरीरमें भी होता है। यह बाहरसे होकर पेटके भीतर गर्भाशयकी दोनों ओर होता है। यह एक नलीद्वारा गर्भाशयसे संयुक्त रहता है। जब बालिका नारी होने लगती है अर्थात् १३-१४ वर्षकी उम्रमें इन कोषोंमें अंडे बढ़ने और परिपक्व होने लगते हैं। यौवन प्राप्त होनेपर प्रतिमास इन अंडोंमेंसे शायद एक अण्डा स्त्री-रजके साथ बहकर गर्भाशयमें आता और वहाँ यदि उसका संयोग पुरुष वीर्यस्थ जीवाण्डसे न हो तो वहीं नष्ट हो जाता है। यह क्रिया अत्यन्त महत्वकी होती है। जब ओवरी वा स्त्री-कोषमें अण्डे जनन योग्य होते हैं उसी समय उनमेंसे एक प्रकारका रस निकलकर सारे स्त्री शरीरको एक विशेष प्रकारकी कान्ति और सुन्दरता देता है जिससे स्त्रीके विशेष अग ही पुष्ट नहीं होते प्रत्युत मानसिक स्थितिमें भी परिवर्तन होने लगता है। उसके स्तन पुष्ट होने लगते और गर्भाशयको धारण करनेवाला कमरके नीचेका भाग अधिक

चौड़ा होने लगता है। इसी कारण कमर बहुत पतली दिखायी देने लगती है और बालिका अंग और मन दोनोंसे नारी हो जाती हैं। इस अवस्थाका वर्णन कवियोंने नाना प्रकारसे काव्यमें किया है। यह काव्य प्रकृतिकी इस गूढ़ लीलाका ऊपरसे दीखने वाला परिणाम ही सुन्दर शब्दोंमें हमारे सामने रखता है।

इधर बालिकाका इस प्रकार नारीके रूपमें विकास होता हैं और उधर पुरुष बीजारोपणके योग्य बनता जाता है। पर पुरुषका काम इस जननक्रियामें बीजारोपण करके ही समाप्त हो जाता है।

जो बालिका मासिकधर्मके आगमनके विषयमें अनाभिज्ञ होती है अथवा नासमझीके कारण इसे कोई खतरेकी बात मान लेती है उसे अपनी मानसिक अवस्थाके कारण ही मासिक धर्मके अवसरपर पीड़ा हो सकती है।

बच्चा होनेकी आधी पीड़ा ऐसी ही मानसिक अवस्थासे उत्पन्न होती है। बालिकाओंको लज्जित या भयभीत न होकर स्त्रीत्व-प्राप्तिका अभिमान होना चाहिए। यदि कोई दुर्घटना न हो तो उनके जीवनका यह भाग पूर्णतया सन्तोषप्रद होगा।

परन्तु स्त्रीका कार्य तो अब आरम्भ होता है। ऐसा जान पड़ता है कि माताके कार्यकी महत्ता महसूस करके ही प्रकृतिने जान-बूझकर पिताको इसीलिए मुक्तकर रखा है कि वह पत्नी और जन्मनेवाले बच्चेकी रक्षाका काम कर सके।

गर्भिणी माता गर्भमें पनपते हुए बच्चेका पोषण करनेके साथ ही साथ अपनी जननेन्द्रिय तथा स्तनोंकी गिल्टियोंकी सहायतासे उस समयकी भी तैयारी कर लेती है जब उसे बच्चेको अपना दूध पिलाना पड़ेगा।

जब जननेका अवसर आता है तब माताके पेट और गर्भाशय-

की मांसपेशियाँ जोर लगाकर बच्चेको बाहर निकाल देती हैं। जिस गद्दी या खोलीमें बच्चा रहता है वह फट जाती है और वह भी साथ ही साथ बाहर निकल आती है। इस गद्दी या खोलीको खेड़ी कहते हैं।

जब नौ महीनेतक बच्चा पेटमें रहता है तब मासिक रक्त-स्रावकी कोई आवश्यकता ही नहीं रहती। जो अधिक रक्त-स्राव बाहर निकल जाता था वह गर्भमें बच्चेके पोषणके काममें आता है। जबतक बच्चा बाहर नहीं निकलता तबतक गद्दी दुरुस्त रहती है।

जबतक माता बच्चेको दूध पिलाती है, तबतक उसे विश्राम देनेके उद्देश्यसे प्रकृति उसे मासिक रजोधर्मसे बरी रखती है। बादको मासिक धर्म पूर्ववत् जारी हो जाता है। पुरुष और स्त्रीके जीवनकी स्वाभाविक अवधि समाप्त होनेके कुछ पहलेसे ही, उनके जननेन्द्रियोंकी गिल्टियाँ काम करना छोड़ देती हैं। इस कर्म त्यागका ठीक समय व्यक्ति-विशेषके शारीरिक गठनपर निर्भर होता है।

साधारणतः हम यह कह सकते हैं कि पुरुषकी जननेन्द्रियकी क्रियात्मकता ५५से ७० वर्षके बीचमें बन्द हो जाती है। इसके लिए कोई विशेष घटना नहीं होती, बल्कि सम्भोगकी इच्छा और शक्तिका क्रमशः ह्रास हो जाता है।

सन्तानोत्पादनकी दृष्टिसे स्त्रीका जननेन्द्रिय सम्बन्धी जीवन पुरुषकी अपेक्षा शीघ्र समाप्त हो जाता है। प्रायः ४५ वर्षकी अवस्थामें मासिक रजस्राव अनियमित हो जाता है और धीरे-धीरे बन्द हो जाता है। प्रत्येक स्त्रीके गठनके अनुसार यह अवस्था घट-बढ़ सकती है।

स्त्रीको इस अवस्थामें भी सम्भोगकी शक्ति और उससे प्राप्त

आनन्दकी अनुभूति होती है। ऐसा न होनेका कोई कारण नहीं है। परन्तु रजोधर्म बन्द होनेके बाद गर्भ-धारण सम्भव नहीं होता।

यदि स्त्रीका जीवन स्वस्थ रहा है और अज्ञान तथा भ्रान्त धारणाओंके फलस्वरूप उसके मनमें कोई आतङ्क जमकर नहीं बैठ गया है, तो कोई कारण नहीं है कि वह इस प्राकृतिक घटनासे भयभीत हो।

जिस प्रकार समस्त गिल्टी-मण्डलीकी क्रियाएँ मस्तिष्क, स्नायु और रक्तकी क्रियाओंसे बँधी हैं, उसी प्रकार जननेन्द्रिय-मण्डलीकी क्रियाओंका इन सबोंसे घनिष्ट सम्बन्ध है।

विशेषतः हमारे मानसिक विकारोंसे इनका निकटतम सम्पर्क है।

यदि स्त्री और पुरुषमें प्रेम न हो तो भी उन्हें संयोगकी क्रियामें आनन्द आ सकता है। परन्तु दूसरी ओर यह बात है कि इस शारीरिक क्रियासे हमारे मानसिक विकारों और आवेगों-की भलाई-बुराईका इतना गहरा सम्बन्ध है कि जहाँ और कोई उद्देश्य न हो वहाँ केवल आनन्द-प्राप्तिके लिए इस शक्तिका दुरुपयोग करना, अन्य दृष्टिकोणोंको छोड़ देनेपर भी, स्वयं अपने प्रति महान् अपराध और घोर पाप है।

मैं यह वयःप्राप्त लोगोंके विषयमें कह रहा हूँ। लड़के-लड़-कियोंके लिए तो और भी अनेक सबल कारण हैं जिन्हें महसूस करके समाज उन लोगोंको उत्पादक शक्ति प्राप्त करते ही इन्द्रियोप-भोगकी अनुमति नहीं देता है।

आगे चलकर इस प्रश्नपर भली-भाँति विचार किया जायगा।

इस समय मैं तुमसे यही चाहता हूँ कि तुम इस तथ्यको सदाके लिए हृदयङ्गम कर लो कि हमारे मन और शरीरकी प्रति-

क्रिया एक-दूसरेपर होती रहती है, अतएव हमें अपने हिताहितका ज्ञान रखते हुए एकके सुखके पीछे दूसरेको बलिदान नहीं करना चाहिए।

बल्कि हमें अपने मन और शरीरके पारस्परिक कार्योंमें एक सन्तुलन और सामञ्जस्य रखना चाहिए। यह सन्तुलन और सामञ्जस्य ठीक वैसा ही हो जैसा कि हमारी ही भलाईके लिए प्रकृति हमारे विभिन्न जटिल अवयवोंके पारस्परिक कार्योंमें स्थापित करती है।

अध्याय १२

तुम्हारी स्थिति

पता नहीं तुमने इस पुस्तकका प्रथम अंश कहाँतक पढ़ा है। इस पुस्तकका यह भी उद्देश्य नहीं है कि तुम इसे आदिसे अन्ततक पढ़ डालो, बल्कि यह विशेषतः इसलिए लिखी गयी है कि तुम्हारे नित्य नैमित्तिक जीवनमें जो जो प्रश्न सामने आते जाँय उनके विषयमें प्रयोजनानुसार इसके अंशोंको पढ़ लो।

इस पुस्तकके प्रथम अंशमें अत्यन्त प्राचीन कालकी बातोंका साधारण विवेचन किया गया है। मैंने यह दिखानेका प्रयत्न किया है कि पृथ्वीपर जीवनका विकास कैसे हुआ। इस प्रसंगमें मनुष्यके अवयवोंका वर्णन करना भी आवश्यक हो गया क्योंकि सारी सृष्टिमें हमारे जीवनका रूप ही सबसे अधिक जटिल है।

यदि तुमने इस पुस्तकको आरम्भसे ध्यानपूर्वक पढ़ा हो तो भी यह समझनेकी भूल न करना कि इस विषयमें अब और कुछ जानना बाकी नहीं है। नहीं, हमारे संसारके और हमारी जातिके भूतकालके पूरे इतिहासको जाननेके लिए पोथेके पोथे पढ़नेकी आवश्यकता है।

मैं जानता हूँ कि मैंने बहुत-सी बातें छोड़ दी हैं। परन्तु ऐसा करना लाभदायक भी हो सकता है यदि इसका यह फल हो कि तुम इस विषयका अधिक ज्ञान प्राप्त करनेके लिए विशद अध्ययन करो।

अच्छा तो अब जिस जगत्में हमारा निवास है और जिस जीवनके हम अंश है उनके विस्तृत प्रश्नोंके उपरान्त हम इस संकुचित प्रश्नपर आते हैं कि तुम्हारी स्थिति क्या है।

हमलोग यह जान चुके हैं कि 'तुम क्या हो'। तुम मनुष्य-जातिके एक सदस्य हो और करोड़ों वर्ष-व्यापी विकासके परिणाम हो। अब प्रश्न उठता है—तुम कौन हो?

दूसरे शब्दोंमें प्रश्न होगा—तुम कैसे जानते हो कि तुम 'तुम्हीं' हो? यद्यपि तुम और लोगोंके ही समान हो फिर भी कौनसी ऐसी बात तुम्हें अपनेमें दिखायी देती है जो तुम्हें औरोंसे अलग करती है? किस कारण तुम अन्तस्तलमें अनुभव करते हो कि "यह मैं हूँ"?

इस प्रश्नके उत्तरमें यह कहना युक्तियुक्त नहीं होगा कि तुम्हारी आकृति या चेहरा औरोंसे भिन्न है, इसीलिए तुम औरोंसे भिन्न हो।

किसी अंशतक यह भिन्नता बहुत ही साधारण है। बड़ी विचित्रता तो यह है कि मानव-शरीरकी आकृतिमें प्रकृति इतने अलग अलग नमूने तैयार करती है, ऐसी जुदा जुदा बानगी दिखाती है कि यदि कहीं दो मनुष्य एक-सी सूरत-शक्लके हो जायें तो बड़ी अनोखी बात समझी जाय।

इसमें सन्देह नहीं कि तुम्हारी एक अपनी विशेष आकृति है। परन्तु जरा ध्यान देनेपर तुम समझ सकोगे कि आकृतिसे परे कोई और वस्तु अवश्य ऐसी है जो तुम्हें औरोंसे अलग करती है।

हम प्रत्येक व्यक्ति यह अनुभव करते हैं कि हमारा अपना-अलग-अलग "आपा" है।

यह "आपा" क्या है—इसे ठीक ठीक बताना बड़ा कठिन

है हालाँकि हममें प्रत्येक व्यक्ति "आपे"—के अर्थको भली-भाँति समझता है।

"आपे"को तुम आत्मा, चरित्र या मन कह सकते हो और मस्तिष्कको इसका जटिल यंत्र बता सकते हो।

वास्तवमें आत्मा, चरित्र और मनके शाब्दिक अर्थ कुछ जुदा हैं, तो भी इन शब्दोंसे उस "आपे"का बोध होता है जिसका अस्तित्व हम सभी लोग अनुभव करते हैं। फिर भी यह "आपा" है क्या ?

कितने ही लोग समझते हैं कि यह मस्तिष्ककी यांत्रिक क्रियाओंके योगफलके सिवाय और कुछ नहीं है। कुछ लोगोंके विचारसे यह मस्तिष्क और उन रहस्यमय अग्निकणका योग है जो मृत्युकालमें बहिर्गत हो जाता है। तुमने उस तत्वदर्शियोंकी बातें सुनी या पढ़ी होंगी जिन्होंने आत्मा क्या है, कहाँ है, अमर है या नहीं, इत्यादि विषयोंपर प्रगाढ़ चिन्तन किया।

फिर भी आजतक यह प्रश्न हल नहीं हो सका और ज्ञानी पुरुष इस विषयके अन्वेषणमें लगे हुए हैं।

अन्ततः प्रत्येक व्यक्तिको अपने लिए इस प्रश्नका समाधान करना ही चाहिए। इस विषयमें हमें चाहिये कि या तो हम अपने धर्मकी शिक्षा ग्रहण कर लें या स्वतः किसी निष्कर्षपर पहुँच जायँ।

यह प्रश्न इतना व्यापक है और इसपर इतने विभिन्न मत हैं कि हालमें चिन्तनशील मनीषियोंने इसपर एक अलग ही दृष्टिकोण-से विचार करना स्थिर किया है। उन लोगोंने फिलहाल 'आत्मा' के प्रश्नको अलग हटाकर पहले मनकी प्रकृतिके अन्वेषणका प्रयत्न किया है।

इसका कारण यह है कि मनका अर्थ यदि हम वह आचरण

मान लें जो मस्तिष्कके जरिये काम करता है और विश्वासों तथा कार्योंमें फलित होता है तो यह स्पष्ट है कि और लोगोंके मनसे तुम्हारे मनकी भिन्नता ही तुम्हें और लोगोंसे अलग करती है।

मन क्या है—कैसे समझें ?

मन क्या है—कैसे समझें ?

मन क्या है और कैसे काम करता है—इसका ठीक-ठीक पता लगाना टेढ़ी खीर है।

इसमें सन्देह नहीं कि हममें प्रत्येक व्यक्ति बड़ी दृढ़तासे अनुभव करता है कि हममें केवल शरीर और मस्तिष्क ही नहीं है बल्कि एक विशेष व्यक्तित्व भी है और उसका सम्बन्ध अन्य लोगोंके साथ होनेपर भी वह सबसे जुदा है।

अच्छा तो इस विषयको आरम्भ कहाँसे किया जाय ?

भगवान् जानता है कि हमें शरीरके विषयमें भी अभी बहुत-सी बातें नहीं ज्ञात हो सकीं, फिर भी हम शरीरको तोल नाप सकते हैं और इसकी फोटो ले सकते हैं। हम इसके विभिन्न अंगोंका अध्ययन कर सकते हैं और अनेक प्रकारसे उनकी परीक्षा कर सकते हैं।

इनमेंसे कोई बात भी मनपर घटित नहीं हो सकती। यह सच है कि हम मस्तिष्कको तोल सकते हैं, उसकी फोटो ले सकते हैं और परीक्षाके लिए उसे चीर-फाड़ सकते हैं। यह सब मृत मस्तिष्कपर ही हो सकता है और किसी सीमातक ऐसी अवस्थामें भी हो सकता है जब मस्तिष्क जीवित शरीरका अंग बना रहे।

पर क्या मृत मस्तिष्कको चीर-फाड़कर हम मनका पता लगा सकते हैं ? अथवा क्या जीवित मस्तिष्कपर अस्त्र प्रयोग करके कोई डाक्टर उसके भीतरके विचारोंका पता पा सकता है ? दुर्भाग्यवश ये सभी बातें बड़ी जटिल हैं।

जहाँतक वास्तविक मस्तिष्कसे सम्बन्ध है, उसके विषयमें हमारा ज्ञान नित्यप्रति बढ़ता जाता है। इस बातका पता लग गया है कि जब मस्तिष्क क्रियाशील होता है तब बेतारके तारकी भाँति तरंगे प्रेषित करता है। हालमें एक यंत्रका आविष्कार हुआ है जिसका नाम एन्सेफैलोग्राफ (Encephalographh) है। जैसे सीस्मोग्राफ भूचालका कम्पन अंकित करता है वैसे ही यह यंत्र भी मस्तिष्ककी तरंगोंको नाप सकता है और उन्हें अंकित कर सकता है।

हमारा ज्ञान अब यहाँतक बढ़ गया है कि इन तरंगोंके अंकित चिह्नोंको देखकर हम यह बता सकते हैं कि—मस्तिष्कके कोष्ठोंमें कोई ऐसा परिवर्तन हो रहा है या नहीं जिसका फल कोई अनियंमित विचार या कार्य हो सकता है।

परन्तु अन्वेषणका यह मार्ग हमें वास्तविक प्रश्नको हल करनेके निकट नहीं पहुँचाता—मन क्या है और कैसे काम करता है ?

मन और कर्म

यदि एक प्रकारका अन्वेषण हमारे ज्ञानको आगे नहीं बढ़ाता है तो हमें दूसरे प्रकारके अन्वेषणसे प्रयत्न करना चाहिए। यह बात जीवनके कार्य और विचार-सम्बन्धी सभी प्रश्नोंके विषयमें लागू है। यदि हम मस्तिष्ककी राहसे मन और कर्मकी थाह

नहीं लगा पाते हैं तो हमें विपरीत मार्गका अनुसरण करके यह देखना चाहिये कि इससे हम कहाँतक पहुँचते हैं।

लोगोंके कार्योंका छोर पकड़कर शायद हम उनके मनकी प्रकृतितक पहुँच जायँ।

कारण यह है कि लोग झूठ और छल-छन्दोंसे अपनी प्रकृति को छिपानेका चाहे जितना प्रयत्न करें, उनका कर्म सिरपर चढ़-कर बोलता है। वे चाहे जैसा अपना कपट-रूप दिखायें पर उनका अभ्यासगत कर्म हमें बतला देता है कि उनका वास्तविक रूप क्या है।

हममें प्रत्येक व्यक्तिका "आपा" (भीतरी व्यक्तित्व) कोई बहुत भला नहीं है। इसके कई कारण हैं जो आगे बताये जायँगे। समुचित ज्ञान और शिक्षासे हम इसे नियंत्रित कर सकते हैं यद्यपि युद्ध और अकाल-जैसी असाधारण परिस्थितियोंमें यह काबूसे बाहर हो जाता है।

यदि किसीके जीवनके प्रारम्भ कालमें, जब चरित्र-निर्माणका समय रहता है, सभी बातें उसके प्रतिकूल हुई रहती हैं, तो वह अपने आपेको कभी काबूमें नहीं रख सकता है। जहाँतक जगत्में उपयोगी जीवन-यापन करनेका सम्बन्ध है, वह एक प्रकारसे नष्ट हो जाता है। उसके मनपर जो प्रभाव पड़ा है वह उसके कर्मोंसे प्रकट होता है।

इधर कुछ वर्षोंसे मनोविज्ञान नामक एक नये विज्ञानकी चर्चा चल रही है। इस विज्ञानका केवल यही प्रयोजन है कि कार्योंके अध्ययनके द्वारा मनकी क्रियाओंको समझा जा सके।

मुझे मनोविज्ञानसे बड़ी दिलचस्पी है क्योंकि यह मेरे पेशेका ख़ास अंग है। मैं इसमें तुम्हारी भी दिलचस्पी पैदा करनेकी चेष्टा

करूँगा क्योंकि इस विज्ञानका थोड़ा-सा भी ज्ञान तुम्हारे भावी जीवनमें लाभदायक सिद्ध हो सकता है।

साथ ही एक खतरेसे भी सचेत रहना चाहिये। जब तुम किसी विषयके पीछे पड़ते हो, विशेषतः जब तुम नित्य ही उसे व्यावहारिक रूप देते हो, तब तुम यही सोचने लगते हो कि बस संसारमें यही सब कुछ है। उस विषयका कोई नया आविष्कार जब तुम्हारे सामने आता है तब तुम्हारा हठीला मन उसे स्वीकार करनेमें आगापीछा करता है।

इसलिए मैं यहाँ यह बता देना चाहता हूँ कि यद्यपि मनोविज्ञानका हमें सम्यक ज्ञान प्राप्त हो गया है फिर भी अभी इसकी अनेक बातें अन्धकारमें हैं। हमें विनम्रतापूर्वक यह भी ध्यानमें रखना चाहिए और समझना चाहिए कि हजारों वर्ष पूर्वके ज्ञानी पुरुषोंको इस विषयका कैसा कुछ ज्ञान प्राप्त था।

सच तो यह है कि हालमें कुछ वर्षोंसे ही वैज्ञानिक रीतिसे मनुष्यके कार्यके अध्ययन, परीक्षा और प्रमाण-संग्रह करनेका प्रयत्न हो रहा है। पूर्वकालमें इस प्रकारकी वैज्ञानिक प्रणाली प्रचलित न होनेपर भी सुकरात, अरस्तू, अरिस्टोफेन्स, यूरिपाइडेस आदि मनस्वियों और नाटककारोंने अपनी रचनाओंमें आधुनिक मनोविज्ञान-सम्बन्धी ज्ञानका बहुत ठीक-ठीक परिचय दिया है।

मानव प्रकृतिके विषयमें अन्तर्दृष्टि रखनेवाले मनस्वी प्रत्येक युगमें हुए हैं। इन्हींमें ईसामसीह, चासर, मांटेन, शेक्सपियर इत्यादि हैं। इनमें अनेकोंको मानव-प्रतिक्रिया-सम्बन्धी ज्ञान मानो स्वभावतः प्राप्त था। उनकी निजी प्रतिभा, न कि वैज्ञानिक प्रणाली, उनके इस ज्ञानका कारण थी।

हम वैज्ञानिक लोग उनके पथका अनुसरण कर रहे हैं और

परीक्षित प्रमाणोंके द्वारा मनुष्यके कार्योंके नियम निर्धारित करनेकी चेष्टा कर रहे हैं।

नये विज्ञानकी योजना

विगत शताब्दिमें ही संसारके विभिन्न स्थानोंके कुछ लोगोंने इस नये विज्ञानकी विधिवत् सृष्टि की।

इसकी आवश्यकता क्यों पड़ी—यह शायद तुम समझ गये होगे।

कुछ महापुरुष अपने मनकी चेतनाके कारण विचार-शक्तिकी विशेषतासे यह जान लेते हैं कि आवेगपूर्ण स्थितिमें लोग क्या सोचते हैं, क्या अनुभव करते हैं और कैसी प्रतिक्रिया करते हैं।

मैं इस कथनका अर्थ स्पष्ट करूँगा।

तुमने शायद शेक्सपियरका 'हैमलेट'-नामक नाटक पढ़ा होगा या उसकी संक्षिप्त कहानी पढ़ी होगी। यदि नहीं, तो मैं उसे पढ़नेकी सिफारिश करता हूँ।

मैं समझता हूँ कि शेक्सपियरकी रचनाके नामसे ही तुम्हारा जी ऊबता होगा क्योंकि तुम्हें उसे क्लासमें जबर्दस्ती पढ़ना पड़ता होगा। बड़े-बड़े लेखकोंकी रचनाओंको बचपनमें जबर्दस्ती पढ़ाने या कंठस्थ करानेका फल यही होता है कि बहुतेरे लोग उनके प्रति घृणा करने लगते हैं और इनकी उत्कृष्टताको अनुभूति नहीं-कर पाते हैं।

यदि वे ही लोग कुछ बड़े होकर उन लेखकोंकी रचनाएँ केवल मनोरंजनके लिए पढ़ें तो उन्हें यह समझनेमें देर न लगे कि मूर्खतापूर्ण शिक्षा-पद्धतिके कारण ही उन्हें इन पुस्तकोंके प्रति

घृणा हो गयी थी, अन्यथा इनका न पढ़ना जीवनका बहुत बड़ा अभाव है।

अच्छा तो, हैमलेट बड़ा ही विचारवान् और अध्ययनशील व्यक्ति है, परन्तु उसका चित्त अत्यन्त अव्यवस्थित और क्षुब्ध हो रहा है क्योंकि उसके मृत पिताके भाईके साथ उसकी माताने विवाह कर लिया है। वह अपने चाचाको फूटी आँखों नहीं देख सकता।

इसपर तुर्रा यह कि उसके पिताकी प्रेतात्मा उसके समक्ष प्रकट होकर कहती है कि बेटा मेरी हत्या तेरे चाचाने की है और इसका बदला तू ले।" (उन दिनों लोग प्रतिहिंसामें विश्वास करते थे परन्तु अब हमलोग इसे अच्छी नहीं समझते। कहानीकी खातिर तुम्हें यहाँपर मान लेना चाहिए कि प्रतिहिंसा उचित है।

हैमलेट बड़े असमंजसमें है। एक ओर दुष्ट चाचाके प्रति घृणा है, पिताके प्रति स्नेह है, पिताके हत्यारेके साथ माताका विवाह कर लेना है, और यह प्रश्न है कि माताको इस हत्याका पता है या नहीं।

दूसरी ओर हैमलेटकी विनम्रतापूर्ण और अध्ययनशील प्रकृति है। वह लाएर्टेसकी भाँति क्रियाशील नहीं है। (जिस बालिकाको हैमलेट प्यार करता है लाएर्टेस उसका भाई है।) वह किसीका प्राण लेना नहीं चाहता।

चूँकि वह किसीको मारना नहीं चाहता इसलिए वह समझता है कि अपनी औदास्यपूर्ण प्रकृतिके कारण ही उसने कोई काल्पनिक प्रेत देखा होगा, वह शायद उसके पिताकी प्रेतात्मा नहीं होगी बल्कि पाप और हत्याके लिए शैतान ही उसे उकसाने आया होगा।

सारे नाटक भरमें, जबतक कि हैमलेट परिस्थितिके कारण

हत्या करनेके लिए एकदम विवश नहीं हो जाता, उसके हृदयमें यह अन्तर्द्वन्द्व होता रहता है। मैं समझता हूँ, चूँकि हैमलेट बड़ा ही विवेकशील था और विचारोंमें अपने समयके लोगोंसे आगे बढ़ा हुआ था इसलिए वह स्वयं प्रतिहिंसाको अनुचित और बर्बरताका काम समझता था।

जो भी हो, तर्कनाका जो दृष्टिकोण मैं तुम्हारे सम्मुख रखना चाहता हूँ वह यह है कि 'हैमलेट' नाटक पढ़ते हुए हम अनुभव करते हैं कि शेक्सपियरने हैमलेटकी प्रतिहिंसामें बहुत देर करा दी और उसका यह कार्य बहुत ठीक हुआ।

हैमलेटका जैसा चरित्र शेक्सपियरने प्रदर्शित किया है उसे देखते हुए हैमलेट कभी एकाएक विद्रोही नहीं बन सकता था और न लाएर्टेसकी सी दृढ़ताके साथ हत्या कर सकता था। उस परिस्थितिमें यदि लाएर्टेस होता तो वह अवश्य दृढ़ता दिखाता और वास्तवमें उसने अपनी दृढ़ताका परिचय उस समय दिया भी जब हैमलेटने धोखेमें उसके पिताको मार डाला और उस दुःखसे अभिभूत होकर उसकी बहनने आत्महत्या कर ली।

हम अनुभव करते हैं कि हैमलेटका चरित्र और हैमलेटकी अत्यावश्यक अवसरपर कार्यक्षमता—इन दोनों वस्तुओंके पलड़े बराबर थे। शेक्सपियरने भी इस बातको अनुभव किया था अन्यथा वह इस नाटकको ही न लिखता। अत्यधिक चेतनाशील होनेके कारण शेक्सपियरने मानव-चरित्रोंके बहुत ठीक ठीक चित्र खींचे हैं परन्तु उसे शायद अपनी सफलताका कारण नहीं ज्ञात था।

इन बातोंको इतने प्रत्यक्ष और विशुद्ध रूपमें अनुभव करनेवाले प्रतिभावान् पुरुष विरले ही होते है। यदि साधारण मनुष्य अपने परिश्रमके बलपर ऐसे ही निष्कर्षोंपर पहुँचना चाहते हैं तो उन्हें पथ-प्रदर्शनकी आवश्यकता होती है।

यदि हम इस बातका ठीक-ठीक पता लगा सकें कि लोगोंके अपने-अपने व्यवहार-बर्तावके क्या कारण हैं और उनका मन उन्हें अपने व्यवहार-बर्तावके लिए कैसे प्रेरित करता है, तो मनुष्य जातिका बड़ा हित हो। यह ज्ञात हो जानेपर बुरा बर्ताव अर्थात् जो काम तत्सम्बन्धित व्यक्ति और समाज दोनोंके लिए हानिकारक है, पहले ही रोका जा सकता है न कि जब कोई बुरी घटना हो जाय तब उसे रोकनेका प्रयत्न किया जाय।

अब प्रश्न उठता है—मन और कर्मका अन्वेषण कहाँसे आरम्भ किया जाय?

मस्तिष्कसे भिन्न न तो मनका विश्लेषण हो सकता है और न उसकी परीक्षा की जा सकती है। यदि तुम मस्तिष्कके कोष्ठकी तरह मस्तिष्कसे एक विचारका टुकड़ा काट सकते और उसे काँचके फलकपर रखकर अनुवीक्षण यंत्रसे देख सकते, तो तुम किसी निष्कर्षपर पहुंच जाते।

तब यह प्रश्न ही न होता कि मन क्या है और किस तरह काम करता है?

परन्तु तुम ऐसा नहीं कर सकते। मनोविज्ञानकी आरम्भिक अवस्थाओंको छोड़कर तुम अपने निष्कर्षोंको प्रमाणित नहीं कर सकते। अपने अनुभवके बलपर किसी मनोवैज्ञानिकको भले ही इस बातका पूरा निश्चय हो कि मनकी अमुक अवस्थामें अमुक मनुष्यकी अमुक प्रतिक्रिया होगी, परन्तु यदि वैसी अवस्था हो ही नहीं तो वह अपने निष्कर्षको अन्य वैज्ञानिकोंके समक्ष कैसे प्रमाणित कर सकता है?

जहाँ किसी वस्तुका वैज्ञानिक प्रमाण सम्भव नहीं होता वहाँ अन्वेषकोंमें मतभेद होनेकी ही अधिक सम्भावना होती है। इन नये विज्ञानके विषयमें यही हुआ है।

आज मनोवैज्ञानिकोंके अनेक दल है। इन दलोंके मत एक दूसरेसे नहीं मिलते।

कुछ मनोवैज्ञानिक मानव मति-गतिकी प्रबलता किसी एक वस्तुमें मानते है तो अन्य मनोवैज्ञानिक दूसरी वस्तुमें। किसकी बात ठीक है—यह कौन बताये? इस तरहके गोलमालको दूर करनेके लिए नवयुवकोंके लिए विस्तृत क्षेत्र पड़ा है।

मनोविज्ञानके अन्वेषकोंके लिए कार्यारम्भके दो ही मार्ग सम्भव थे।

१—वे वैज्ञानिक परीक्षा और निष्कर्षके द्वारा स्पर्श, रस, गन्ध, श्रवण और दृष्टिवाली ज्ञानेन्द्रियोंकी क्रियाओंका अध्ययन-कर सकते थे।

२—वे अपने मनका अध्ययन करके उसकी प्रतिक्रियाओं और तज्जनित कार्योंको 'नोट' कर सकते थे।

दूसरी पद्धतिके अनुसरणमें अन्य लोगोंके मनका अध्ययन करना जरूरी था और यह तभी हो सकता था जब वे लोग अपने अन्तस्तलके विचारों और गुप्त कार्योंतकका सही-सही वर्णन-कर देते।

जरा-सा विचार करनेपर ही तुम्हें यह विदित हो जायगा कि ये दोनों पद्धतियाँ सदोष है। इनमें किसी एक पद्धतिका उप-योग ठीक वैसा ही होगा जैसे साढ़े ग्यारह इंचके डंडेसे किसी चीजको नापकर कह दो कि हमने एक फुटके डंडेसे नापा है।

ज्ञानेन्द्रियोंकी छान-बीनसे वास्तवमें बड़ी सहायता मिल सकती है। रूसके वैज्ञानिक पावलवने इस ओर अच्छा काम किया है।

उसने एक परीक्षा इस प्रकार ली कि एक कुत्तेको खिलानेके समय वह घंटी बजा देता था। जब कुत्तेके दिमागमें यह बात

मजबूतीके साथ बैठ गयी कि घंटी और उसके भोजनमें सम्बन्ध है तब घंटी बजाते ही उसके मुँहमें पानी आ जाता था, चाहे उसे भोजन दिया जाय या नहीं।

कुत्तेके दिमाग या मनमें यह बात जमकर बैठ गयी थी कि घंटीकी आवाजका अर्थ है भोजन।

यद्यपि ऐसी परीक्षाओंके फल दिलचस्पी पैदा करते हैं फिर भी केवल ज्ञानेन्द्रियोंके द्वारा मनकी क्रियाओंका अन्वेषण एका-एक रुक जाता है और ऐसे स्थानपर रुकता है जिसके लिये सभीको दिलचस्पी होती है। इसका कारण यह है कि इस उपाय-से तुम उन गहरे विचारो और अनुभूतियोंकी तहतक नहीं पहुंच सकते जिनका सीधा सम्बन्ध ज्ञानेन्द्रियोंसे नहीं है।

अतएव अब हम दूसरी सम्भव पद्धतिपर आते है अर्थात् अपनी ही परीक्षा करना। इस पद्धतिमें भी एक बहुत बड़ी असु-विधा है; हम चाहे जैसे नेकनीयत हों परन्तु हममें कौन ऐसा शुद्ध-बुद्ध होगा जो अपने मनमें होनेवाली सभी बातोंको स्वयं अपने निकट भी स्वीकार करेगा ?

जिन बातोंके लिए हम लज्जासे आँख नहीं उठा सकते वे ही यदि हमारे सम्बन्धमें होती हैं तो हम उनके प्रति अन्धे हो जाते हैं। वास्तवमें मनुष्यके मनके विषयमें हमने जो कुछ ज्ञान प्राप्त किया है, उससे हमें यही शिक्षा मिलती है कि हम किसी वस्तुको सच्चे रूपमें नहीं बल्कि अपने मनोनुकूल रूपमें देखना चाहते हैं। हममें प्रत्येक व्यक्ति अपनी कमजोरी और अपनी कमीके प्रति बड़ी खूबीसे अन्धा हो जाता है।

उदाहरणके लिए मैं अपने बचपनकी एक घटनाका उल्लेख करूँगा। इसीके समान शायद तुम्हारी भी कोई घटना हो।

एक दिन मेरे पिताने मुझसे कुछ करनेके लिए कहा। क्या

करनेके लिए कहा यह ठीक याद नहीं है, परन्तु वह कोई ऐसी ही बात थी जो मुझे पसन्द न थी। उनके प्रति मेरा विरोध इतना कठोर हो गया कि मैं आग कुरेदनेवाली लोहेकी छड़ लेकर अँगीठीके सामने बैठ गया और सोचने लगा कि उन्हें पाऊँ तो अभी मार डालूँ।

वास्तवमें यह एकदम आदिम अवस्थाकी एक प्रतिक्रिया थी। इस समय भी मनुष्य जाति बहुत धीरे धीरे ही यह शिक्षा ग्रहण कर रही है कि हत्या करना मूर्खता और पाप है। इससे कोई समस्या सुलझती नहीं बल्कि यह औरोंके प्रति बहुत बड़ा अपराध है क्योंकि हमारे ही समान उन्हें भी जीवित रहनेका अधिकार है।

यह तो बिलकुल असम्भव बात थी कि मैं अपने पितापर आक्रमण कर देता। परन्तु मेरी इच्छा तो कुछ ऐसी अवश्य थी।

मान लो कि जिन वैज्ञानिक अन्वेषकोंकी मैंने अभी चर्चा की है उनमेंसे कोई उस समय मेरे पास आता और मुझसे पूछता कि तुम क्या सोच रहे हो ? तो मैं उसे सच्ची बात कभी न बताता। इस समय जो मैं बता रहा हूँ उसका कारण यह है कि मैं उन आदिम अनुभूतियोंको काबूमें ला चुका हूँ, मैंने उनका सामना किया है और उनसे छुटकारा पा लिया है। उनके साथ जो पापकी भावना लगी हुई थी उसे भी मैंने त्याग दिया है।

इससे भी अधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि अपने हृदयकी सच्ची बातको मैं अपने तईं भी स्वीकार नहीं करता क्योंकि उस समय भी मैं जानता था कि यह बुरी बात है और अपनी इस बुराईके समक्ष मुझे स्वतः लज्जित होना पड़ता।

हममें प्रत्येक मनुष्य चाहे वह कैसी ही निर्मल दृष्टिवाला और नेकनीयत क्यों न हो, अपने सारे जीवनमें अपने पापोंको क्षमा

करनेका इच्छुक रहता है। वह उन पापोंके लिए दूसरोंसे क्षमा-याचना नहीं करना चाहता।

चूँकि सभी मनुष्योंमें यह मनुष्योचित दुर्बलता होती है, इसलिए जो वैज्ञानिक अन्वेषक अपने मनपर ही अन्वेषणकी परीक्षा करना चाहता है वह कभी सही नतीजोंपर नहीं पहुच सकता।

इस प्रकार हम उस परिवर्द्धित वैज्ञानिक पद्धतिपर आते हैं जिसका आधार है अन्य व्यक्तिके अन्तस्तलके विचारों और गुप्त कार्योंके वर्णनपर विश्वास करना।

यहाँ भी उसी कठिनाईका सामना है। वह व्यक्ति चाहे जितना ईमानदार और नेकनीयत हो, परन्तु उसमें भी वही मनुष्योचित दुर्बलता होगी, उसकी बातोंपर विश्वास करना ठीक वैसा ही होगा जैसा सेन्सरके द्वारा कटी-छँटी चिट्ठियोंके संवादको सही मान लेना।

मनुष्योंके कार्य और उनके मनकी क्रिया-प्रणालीके ठीक-ठीक ज्ञान प्राप्त करनेमें ये ही कठनाइयाँ हैं। परन्तु इन वस्तुओंको जानना भी बहुत आवश्यक है। तो फिर क्या करना चाहिए?

जब हमारे कार्य और जीवनकी परिस्थिति हमारे मनोनुकूल नहीं होती तब हम उस परिस्थितिका यथासम्भव उत्तम उपयोग करनेकी चेष्टा करते हैं। जीवनकी शायद यही सबसे प्रबल शिक्षा है।

अतएव विगत शताब्दिके मध्य भागमें इस विषयकी खोज करनेवालोंने इन दोनों पद्धतियोंका अनुसरण करते हुए कार्य आरम्भ किया और साथ ही इन पद्धतियोंकी सीमाबद्धताको भी मद्देनजर रखा।

इसके फलस्वरूप विलहेम वंट नामक एक जर्मन और विलियम जेम्स नामक एक अमेरिकनने इस विषयके आविष्कारकी पुस्तकें निकालीं। ये ही पुस्तकें मनोविज्ञान नामक नवीन मानसिक चिकित्सा-शास्त्रका आधार बनीं।

हालमें इस क्षेत्रका सबसे प्रसिद्ध अन्वेषक सिगमंड फ्रायड हुआ है। उसने इस विषयमें हमारे ज्ञानको बहुत बढ़ा दिया है।

तुम्हें याद होगा, क्योंकि मैं पहले ही बता चुका हूँ कि मनोविज्ञान कोई बहुत निर्भ्रान्त और सही विज्ञान नहीं हो सकता। इसका कारण यह है कि नाप-तोलकर ठीक-ठीक परीक्षणसे तुम इसके तथ्योंको प्रमाणित नहीं कर सकते। इस विज्ञानके कार्यमें लगे हुए लोगोंके निष्कर्ष उनकी अपनी अनुभूतियों और अन्धविश्वासोंके कारण किसी हदतक गलत भी हो सकते हैं।

इसीलिए फ्रायड और उसके दो प्रसिद्ध शिष्यों-एडलर और जंगमें मतभेद हो गया। फ्रायडके मतानुसार मनुष्यके विचार और कार्यकी सबसे बड़ी मति-गति यौन-भावना है। एडलर और जंगने यौन-भावनाकी महत्ताको स्वीकार करते हुए आत्मरक्षा और आत्मप्राधान्यस्थापनको भी उससे बड़ा नहीं तो वैसा ही दर्जा दिया है।

तुम्हें आश्चर्य होता होगा कि मैं इन पचड़ोंमें क्यों पड़ गया? तुम मुझसे पूछ सकते हो कि तुम्हें इससे क्या मतलब कि इन पुराने शिक्षकोंमें मतभेद था या नहीं? यदि मतभेद ही था तो उनकी बतायी हुई बातोंका हम क्या उपयोग कर सकते हैं जबकि हम यह जानते ही नहीं कि किसकी बात ठीक है?

यहाँ ये विवरण तुम्हें यह समझानेके लिए दिए गये हैं कि मानव शरीरका ज्ञान जिस तरह प्राप्त कर लिया गया है (हालाँकि यह ज्ञान भी अभी अधूरा ही है) उसी प्रकार मानव-मनके विषयमें पूर्ण ज्ञान प्राप्त करनेमें क्या-क्या कठनाइयाँ हैं।

तुम्हारा दूसरा प्रश्न बहुत महत्त्वपूर्ण है, इसलिए इसका समाधान बादके अध्यायमें किया जायगा।

अध्याय १२

मनके विषयमें हम क्या जानते हैं

अच्छा तो, फ्रायड एक बात कहता है तो जंग दूसरी बात; और ऐडलर डेढ़ चावल की अपनी ही खिचड़ी अलग ही पकाता है। यह बड़ा गड़बड़झाला है। हम साधारण लोग केवल इस सीधे-से प्रश्नका उत्तर चाहते हैं कि मन क्या है और कैसे कार्य करता है ?

पहली बात तो हमें यह समझ लेनी चाहिये कि इस प्रश्नका कोई सीधा-सादा उत्तर नहीं हो सकता। यह कोई आश्चर्यकी बात नहीं है क्योंकि तुम जानते ही हो कि साधारणसे साधारण मनुष्य भी कभी-कभी अपने आचरणोंसे कैसा पेचीदा बन जाता है।

इस प्रश्नका सही-सही उत्तर भी नहीं मिल सकता। कारण मैं तुम्हें बता ही चुका हूँ। इसका कोई बहुत व्यापक उत्तर भी नहीं हो सकता क्योंकि इस विषयमें अभी बहुतेरी बातोंका पता ही नहीं चला है।

हम केवल इतना ही कर सकते हैं कि भिन्न-भिन्न वैज्ञानिकोंने इस विषयमें जो ज्ञान दिया है हम उसका गणितके ढंगका 'महत्तम समापवर्त्तक' निकाल लें।

तुम महत्तम समापवर्त्तकका नाम सुनते ही चिहुँक उठोगे।

स्कूल छोड़े मुझे बहुत दिन हो गये; अतएव दो बार सोचकर मुझे यह निश्चय करना पड़ा है कि मेरा प्रयोजन लघुत्तम समापवर्त्तकसे नहीं है।

सीधे-सादे शब्दोंमें, हमारे लिए सर्वोत्तम उपाय यही है कि जिन विषयोंमें सभी मनोवैज्ञानिक एकमत हैं हम उन्हींका अनुसरण करें और उनके सूक्ष्म विवरणोंको उन लोगोंकी तर्कणाके लिए छोड़ दें।

यह तो हो नहीं सकता कि सभी मनोवैज्ञानिकोंकी बातें गलत हैं। यदि वे सभी लोग अपनी-अपनी अलग-अलग पद्धतिसे कुछ विशेष परिणामोंपर पहुँचे हैं और केवल तहकी बातोंमें उनमें मतभेद है तो मेरे विचारसे उन परिणामोंको निरापद भावसे ग्रहण कर लेना चाहिये और उन्हींके आधारपर मनका अध्ययन करना चाहिये।

मनके विषयमें हमारा ज्ञान बढ़ानेमें एक पद्धतिने बड़ा काम किया है। मैं उसका विवरण यहाँ दे देना चाहता हूँ।

तुम्हें याद होगा, मैंने कहा था कि कोई मनुष्य अपने गुप्त विचारों और कार्योंको प्रकट करके मनोवैज्ञानिकके साथ सहयोग कर सकता है।

इसमें शंका यही है कि शायद वह मनुष्य अपनी पूरी-पूरी और सही-सही बातोंको प्रकट करे।

फिर भी यह सम्भव है कि वह मनुष्य बिलकुल सही नहीं तो बहुत कुछ सही बातोंको प्रकट करके एक सच्चे अनुभवी मनोवैज्ञानिककी सहायता कर सकता है।

परन्तु इस तरहके भेद देनेमें उसे बचावकी आदत छोड़नी पड़ेगी। यह आवश्यक है कि वह न तो मनोवैज्ञानिकको धोखा दे और न अपने आपको ही धोखेमें रखे।

पहले-पहल ऐसा करना आसान नहीं होगा। परन्तु एक तरीका इस तरहका निकाला गया है जिससे उस मनुष्यको कुछ

आसानी हो सकती है और मनोवैज्ञानिक उसकी बतायी हुई बे-सिलसिलेवार बातोंके टुकड़े जोड़ सकता है।

इस पद्धतिको मनोविश्लेषण कहते है।

इस पद्धतिके विषयमें लोगोंकी बड़ी हलकी राय है। वे समझते हैं कि मनोविश्लेषित होना, अर्थात् मनोवैज्ञानिकके साथ एक विशेष पद्धतिसे बातचीत करना बहुत आसान है।

इस शब्दसे कुछ शंका-सी होती है परन्तु इसमें डरकी तो कोई बात ही नहीं है।

तुम केवल निश्चेष्ट-से होकर लेट जाओ, कोई खास बात ध्यानमें न लाओ और तुम्हारे मनमें जो-जो विचार या अनुभूतियाँ उठें उन्हें बताते जाओ।

अपने विषयमें सुशिक्षित होनेके कारण मनोवैज्ञानिक तुम्हारे विचारों और भावोंका उद्गम जिन घटनाओंसे हुआ है और जिनका प्रभाव तुम्हारे जीवन पर पड़ा है उनका पता लगा लेगा।

यदि तुम सचमुच ही निश्चेष्ट-से होगे और तुम्हारा मन तुम्हारे बचावके लिए प्रयत्नशील न होगा तो तुम इस तरहकी दो-चार परीक्षा देनेके बाद ही ऐसी-ऐसी बातोंको याद करने लगोगे जो तुम बिलकुल भूल चुके हो।

ज्यों-ज्यों उस मनोवैज्ञानिकसे तुम्हारी मित्रता होती जायगी और तुम्हें उसके पथ-प्रदर्शन पर विश्वास होता जायगा त्यों-त्यों वह तुम्हें यह बतानेमें समर्थ होगा कि किस प्रकार उन भूली हुई वस्तुओंने तुम्हारी सारी प्रगति पर गहरा और हानिकारक प्रभाव डाल रखा है।

मनोवैज्ञानिक यह बतला देता है कि कौन-सा रास्ता गलत है और उसका सुधार कैसे हो सकता है। इस प्रकार वह दुःखी लोगोंको सुखी और निकम्मे लोगोंको कामलायक बना देता है।

मनोविश्लेषण कोई डरकी वस्तु नहीं परन्तु इसे आसान नहीं समझना चाहिये। हम सबोंमें कोई वस्तु ऐसी है, जो हमारे अपने विषयकी सचाईके विरुद्ध बड़ा ही कठोर युद्ध करती है। तुम इसे आत्ममोह कह सकते हो। आत्ममोहको दबानेके लिए प्रायः घोर अन्तर्द्वन्द्व और संघर्ष करना पड़ता है।

तुम्हारे जीवनका आरम्भ है, अतः तुम्हें अपने मन और आचरणको सही रास्तेसे लगाना चाहिये। ऐसा करनेसे आगे चलकर तुम्हें उपर्युक्त संघर्ष नहीं करना पड़ेगा। इसी प्रयोजनसे मैंने यह सब लिखा है।

मनोविज्ञानसे दो लाभ हैं—

(१) मनुष्यका मन किस प्रकार कार्य करता है—इस विषयके हमारे ज्ञानको यह बढ़ा सकता है; और, इसलिए

(२) जिन लोगोंके मन और आचरण बुरी अनुभूतियोंसे बिगड़ गये हैं उन्हें अपनी असुविधाओंपर विजय पानेके लिए यह सहायता प्रदान करता है।

तुम्हें यह समझ लेना चाहिये कि मैं यहाँ मानसिक रोगके विषयमें कुछ नहीं कह रहा हूँ। मन बिगड़नेका मतलब यहाँ मस्तिष्क बिगड़ना या पागलपन नहीं है। हमपर जो भी घटना बीतती है उसका अच्छा या बुरा प्रभाव हमारे मनपर पड़ता ही है।

मानसिक रोग एक अलग ही प्रश्न है। इस ओर भी हमारा ज्ञान बढ़ रहा है। परन्तु यह एक ऐसा विषय है जिसे योग्य चिकित्सकोंके ही हाथोंमें पूर्ण रूपसे छोड़ देना चाहिये।

इस समय हमारा ध्यान केवल इसी बातपर है कि प्रत्येक व्यक्तिको शान्त और स्वस्थ मनोवृत्ति प्राप्त करनी चाहिये।

सामञ्जस्य, सन्तोष, अपने और दूसरोंके विचारोंको ठीक-ठीक समझना—ये हमारे लक्ष्य होने चाहिये।

अनेक लोगोंमें इन वस्तुओंका अभाव है। यदि तुम इसका प्रमाण चाहते हो तो आँख खोलकर आजके संसारकी चारों ओर फैली हुई गड़बड़ीको देखो। जिन लोगोंसे संसार बना है उन्हींके मनकी उथल-पुथल और असन्तोषका प्रतिबिम्ब ही वर्तमान संसारकी गड़बड़ी है।

स्मरण रहे कि हम एक पूर्ण वस्तुके अंग-मात्र हैं। यदि शरीरका एक अंग रोगी होता है तो सारे शरीरपर उसका प्रभाव पड़ता है। यही बात जीवनके विषयमें भी लागू है। हमारे धार्मिक विश्वास चाहे जो हों, परन्तु हमें बाइबिलके इस वाक्यसे सहमत होना ही पड़ेगा—"तुम सब परस्पर एक दूसरेके अंग हो।" यह सिद्धान्त सारे विश्व और विश्वकी सभी वस्तुओंपर चरितार्थ होता है।

हमारी समता और विषमता

तुम सोचोगे कि यह नया मनोविज्ञान मामूली आदमीके लिए, खासकर तुम्हारे जैसे मामूली लड़केके लिए कैसे लाभकारी हो सकता है।

इसका उत्तर यह है कि अगर मामूली आदमीसे तुम्हारा मतलब किसी खास अन्दाजके जेहन और चालचलनवाले आदमीसे है तो मैं कहूँगा कि कोई आदमी 'मामूली' नहीं है।

मानव-संसारका सारा मोहक आकर्षण यह है कि प्रत्येक मनुष्य दूसरे मनुष्यसे पूर्णतया भिन्न है। 'पूर्णतया' शब्दका प्रयोग

यहाँ कुछ बढ़ा-चढ़ा हुआ है। अतएव हम कहेंगे कि हम लोग एक दूसरेके समान भी हैं और एक दूसरेसे भिन्न भी हैं, अर्थात् मनुष्योंमें परस्पर समता भी है और विषमता भी है।

समस्त जीवन एक है, फिर भी एक जीवन-रूपी वृक्षसे निकली हुई अलग-अलग शाखाओंमें परस्पर बड़ा ही तीक्ष्ण, महत्त्वपूर्ण और क्रियात्मक भिन्नता है।

आखिर 'मामूली' या 'सामान्य' है क्या? यदि किसी व्यक्तिको तुम 'मामूली' या 'सामान्य' कहते हो तो इसका यह अर्थ है कि दूसरे सब लोग 'गैरमामूली' या 'असामान्य' हैं, और इसलिए उनमें कुछ दोष हैं। हम सभी लोग 'मामूलीपन'से कुछ न कुछ अलग है और यह 'मामूलीपन' केवल एक काल्पनिक सिद्धान्त है।

यह काल्पनिक सिद्धान्त एक तरहसे काल्पनिक भूमध्यरेखाके समान है। हम जानते हैं कि वैसी कोई वास्तविक रेखा नहीं है, पर उसे सच मान लेनेसे हमें पृथ्वीकी नाप-जोखमें सहायता मिलती है।

हममें प्रत्येक व्यक्ति भूमध्यरेखासे भिन्न-भिन्न दूरी पर है, यह दूरी चाहे कुछ ही इंचोंकी क्यों न हो पर है तो दूरी ही। प्रकृतिका यह एक नियम है कि दो शरीर किसी रिक्त स्थानपर एक ही स्थितिमें नहीं रह सकते।

इसी प्रकार हममें प्रत्येक व्यक्ति मन और आचरणके मामूलीपनसे कुछ दूरीपर है। कोई कुछ आगे है, तो कोई कुछ पीछे। यदि यह दूरी बहुत बड़ी नहीं है तो इससे भलाई ही होती है और जीवनमें रोचकता आती है।

हम भूमध्यरेखाके पास हों या उससे दूर, परन्तु हमारे पैरों

तले एक ही पृथ्वी है। इसी तरह हम सभी लोगोंमें मन और आचरणकी मौलिक प्रवृत्तियाँ बिलकुल एक-ही-सी हैं।

मानव-मनको अध्ययन करनेवालोंने इन प्रवृत्तियोंकी परीक्षा की है, इनका हिसाब लगाया है और इन्हें लिपिबद्ध किया है। इनके विषयमें मनोवैज्ञानिकोंके विभिन्न दल एकमत हैं। अतएव हम उनके सिद्धान्तोंको निःसंकोच भावसे ग्रहण कर सकते है।

संक्षेपमें ये सिद्धान्त निम्नलिखित हैं:—

(१)सभी मनुष्योंकी प्रतिक्रियाएँ इस बातमें एक-सी होती हैं कि वे कुछ निश्चित मार्गोंका ही अनुसरण करती हैं। इस प्रकारकी गतिको प्राकृतिक गुण कह सकते हैं। आत्मरक्षा, आत्मप्राधान्य-स्थापन, जननकार्य, साहचर्य और ज्ञान इत्यादिकी प्रबल प्रवृत्तियाँ प्राकृतिक गुण हैं।

(२) एक मनुष्यकी प्रतिक्रियाएँ दूसरे मनुष्यकी प्रतिक्रियाओंसे भिन्न होती हैं। इसका कारण यह है कि विभिन्न पैतृक प्रभाव और अनुभूतिसे प्रतिक्रियाओंकी गतिमें भिन्नता आ जाती है।

(३) सभी अनुभूतियाँ और घटनाएँ, जो दूसरोंको बहुत ही मामूली या क्षुद्र जान पड़ती हैं, मनपर बहुत गहरा और स्थायी प्रभाव डाल सकती हैं।

(४) जब लोग समझते हैं कि बच्चेका ध्यान दूसरी ओर है और वह अपने इर्द-गिर्द होनेवाली घटनाएं नहीं देख रहा है, उस समय वास्तविकता यह होती है कि बच्चेके मनपर बहुत गहरा प्रभाव पड़ता रहता है जिससे उसके भावी जीवनपर भला या बुरा प्रभाव पड़ सकता है।

(५) ये प्रभाव प्रायः याद नहीं रहते, परन्तु सच तो यह है कि ये मनकी गहरी तहमें जमकर बैठ जाते है और इनकी स्थायी छाप भावी आचरणपर पड़ती है। यह बात सुख और दुःख—

दोनों प्रकारकी स्मृतियोंपर लागू है। हमें बहुधा सुखकर घटनाएँ ही याद रहती हैं। दुःखपूर्ण या लज्जाजनक स्मृतियोंको हम मनसे ढकेलनेकी चेष्टा किया करते है। आगे चलकर तुम्हें यह बताया जायगा कि जितना ही हम जिस चीजको भूलनेका प्रयत्न करते हैं वह हमारे मनकी छिपी तहमें उतना ही गहरा आसन जमाती है और हमारे आचरणके विकासपर उतना ही अधिक प्रभाव डालती है।

मैंने ये पाँचों बातें इस तरह सजायी हैं कि क्रमानुसार एकसे दूसरीका उद्गम होता चला गया है। मैं चाहता हूँ कि तुम पढ़ना बन्द करके कुछ क्षणके लिए इन पाँचों बातोंपर गोर करो।

इन बातोंपर गौर करनेके बाद क्या तुम बता सकते हो कि इनका उपयोग कैसे किया जा सकता है?

मान लो कि इन बातोंसे अनभिज्ञ रहकर ही लोग जीवन व्यतीत करें, और सच है भी यही कि बहुतेरे लोगोंको इन बातोंका ज्ञान नहीं है। अच्छा तो, इसका परिणाम क्या होगा?

जो लोग यह नहीं समझते कि उनके मन और आचरणपर उनकी विगत अनुभूतियोंकी कितनी गहरी छाप है वे अपने विचारों और कार्योंको पूरे तौरसे अपने वशमें नहीं कर सकते। वे यह नहीं जान सकते कि उनके मनकी गति वैसी क्यों है। जब उनके आचरणका इच्छानुसार परिणाम नहीं होता तब वे निरुपाय हो जाते हैं।

जब तुम किसी बातका कारण जानोगे तभी तुम उसका उपाय कर सकोगे। जबतक लोग अपने आचरणके कारण नहीं जानेंगे, तबतक वे स्वतन्त्र न होकर अपने जीवन-मार्गमें होनेवाली छोटीसे छोटी विपत्तियोंके प्रभावके गुलाम बने रहेंगे।

आत्मज्ञानसे लाभ

पिछले विभागमें मनोविज्ञानका ऐसा साधारण सारांश दिया गया है जिसे हम बिना किसी तरहकी आलोचनाके स्वीकार कर सकते हैं। यदि तुझे इस विषयमें दिलचस्पी है तो मनोविज्ञानकी एकसे एक अच्छी पुस्तकें तुम पढ़ सकते हो।

मनोविज्ञान सम्बन्धी विवेचन मैं यहाँ पाठ्य पुस्तकके ढंगपर नहीं करना चाहता। मैंने यहाँ मनोविज्ञानकी केवल एक रूपरेखा मात्र दी है। तुम अब समझ गये होगे कि मेरा इससे क्या प्रयोजन है और क्यों मैंने इस विषयको उठाया।

यह पुस्तक नवयुवकों और नवयुवतियोंकी सहायताके उद्देश्यसे लिखी गयी है।

पूर्वकी अनुभूतियोंको भूल जाना और मनमें उनके प्रबल प्रभावका जड़ पकड़ लेना—ये दोनों बातें प्रायः जितनी बड़ी उम्रके लोगोंमें होती हैं उतनी छोटी उम्रवालोंमें नहीं होतीं। हालाँकि मैं जानता हूँ कि यह कोई अटूट नियम नहीं है। उम्रकी बड़ाई-छुटाई ही इसका कारण है। छोटी उम्रवालोंका मन और आचरण विकासपर होता है और यह विकास जीवनभर जारी रहना भी चाहिये, परन्तु कच्ची उम्र होनेके कारण उनके मनका झुकाव इतना मजबूत नहीं हो पाता जितना कि लम्बे अनुभवके कारण बड़ी उम्रवालोंका हो जाता है।

नवयुवक अपने बचपनके निकटस्थ होते हैं और वे अपनी पिछली अनुभूतियोंको बड़े लोगोंकी अपेक्षा ज्यादा याद रख सकते हैं, इसलिए वे यह अधिक समझ सकते हैं कि उनका विकास किसी खास ढंगका क्यों हुआ। यदि उनका विकास किसी बुरे

ढंग पर हुआ है तो वे यह जान लेनेपर उसका उचित उपाय कर सकेंगे।

नवयुवकोंके सामने अभी जीवनका बहुत बड़ा भाग तय करनेको पड़ा है। यदि वे अपनेको समझनेकी शिक्षा प्राप्त कर लें तो उन्हींका सबसे अधिक लाभ हो सकता है। अपनेको जाननेकी क्षमता प्राप्त कर लेनेसे भावी घटनाओंकी बुरी प्रतिक्रियाओंसे वे अपनी रक्षा कर सकेंगे और सफलता या असफलतासे वहक नहीं जायेंगे। सफलता या असफलतामें किसी एकका भी अत्यधिक होना मन और आचरण—दोनों ही के लिए भयावह है।

अतएव यदि तुम उपयोगी और सुखी मनुष्यके रूपमें अपना विकास चाहते हो, तो यही समय है कि तुम अपनी जाँच-पड़ताल आप करो और इस बातको देखो कि तुममें कहाँ क्या खराबी है: और जो खराबी दिखाई दे उसे दूर करनेका प्रयत्न करो।

बाल्यावस्थासे वयस्कोंके जीवनमें प्रवेश करना कोई बहुत सरल बात नहीं है। इसमें बड़ी कठिनाई है जिसे झेलनेमें करीब-करीब वर्षों लग जाते हैं। परन्तु यदि तुम यह समझ लोगे कि तुम्हारे और दूसरोंके मनके भीतर क्या घटनाएँ हो रही हैं, तो तुम्हारा मार्ग बहुत कुछ सरल हो जायगा।

मेरे विचारसे, जो घटनाएँ प्रायः सभी लोगोंपर घटित होती हैं और उनका जो कुछ परिणाम होता है—उन सभी बातोंका एक संक्षिप्त विवरण तैयार करनेके लिए यही सबसे अधिक सन्तोषजनक तरीका होगा कि तुम्हारे बचपनसे लेकर अबतकके जीवनकी कहानी कह दी जाय।

मेरे विषयमें तुम यही सोचते होगे कि क्या यह व्यक्ति जादू-

गर है कि कभीकी जान-न पहचान और यह चला है हमारे जीवनकी समस्त घटनाएँ बतलाने।

नहीं, मैं जादूगर नहीं हूं, और मैं जानता हूँ कि तुमसे जान-पहचान न होनेके कारण मेरा यह कार्य बहुतही कठिन है। सच तो यह है कि इस पुस्तकके द्वारा तुमसे बातचीत करनेमें मुझे ऐसा मालूम होता है कि मेरे और तुम्हारे बीच एक दीवार खड़ी है।

जो कुछ मै कर सकता हूं वह यही है कि बचपनमें जो चिन्ताएँ और विपदाएँ प्रायः बहुत लोगोंको समान रूपसे पीड़ित करती हैं, मैं उनका उल्लेख करूँ। मेरे इस उल्लेखमें कुछ ऐसी घटनाएँ स्थान पा सकती हैं जो तुमपर न घटी हों। परन्तु तुम इसपर ध्यान न दो क्योंकि ये तुमपर नहीं तो तुम्हारे किसी दूसरे भाई पर घटित हो सकती है और वह भाई मेरे इस प्रयत्नसे लाभ उठा सकता है। अतएव उन बातोंका उल्लेख करना मेरे लिए आवश्यक है।

साथ ही मुझसे कुछ ऐसी समस्याओंका उल्लेख छूट भी सकता है जो तुम्हारी चिन्ताका कारण बनी हैं। इसलिए तुम यह न सोचने लगना कि ये समस्याएँ तुम्हारे सिवाय और किसीको नहीं सतातीं, बल्कि तुम्हें यह समझना चाहिये कि मैं इनकी चर्चा करना भूल गया हूँ।

बहुधा लोगोंका विकास कैसे होता है—इस बातकी एक साधारण रूपरेखा खींची जाय तो तुम यह समझ सकोगे कि मनोविज्ञानका निर्माण कैसे हुआ।

जब तुम कुछ ऐसी बातोंका उल्लेख देखोगे जो तुम्हारे जीवनकी घटनाओं और प्रतिक्रियाओंसे मिलती-जुलती हैं तब तुम यह बड़ी आसानीसे समझ सकोगे कि मनोविज्ञान एक

सच्चा विज्ञान है और आत्मज्ञानसे किस प्रकार लाभ उठाया जा सकता है।

यदि मनोविज्ञानकी कोई उपयोगिता है, और मैं समझता हूँ कि अवश्य है, तो उसके अनुशीलनसे तुम्हें यह सहायता मिलनी चाहिये कि पूर्व अनुभूतियोंसे तुम्हारे चरित्ररूपी रस्सी-में जहाँ कहीं कोई छोटी-मोटी गाँठ या उलझन पड़ गयी हो, तुम उसे सुलझा सको।

हो सकता है कि इस प्रकारकी कठिनाइयाँ तुम्हारे विकास-मार्गमें रोड़े अटका रही हैं जिनके कारण तुम संतुलितचित्त, सन्तोषी और उपयोगी मनुष्य नहीं बन सकते। ये कठिनाइयाँ तुम्हें अपने परिवारवालों और अन्यान्य लोगोंसे पटरी बैठानेमें भी रुकावट डाल सकती हैं।

यदि अपने निकटवर्ती लोगोंसे तुम्हारा मनमुटाव है तो न तो तुम्हीं सुखी होगे और न वे। कारण यह है कि तुममें और उनमें परस्पर प्रतिक्रियाएँ और तज्जनित अनुभूतियाँ होती रहती हैं।

यदि तुम्हारी कठिनाई इस तरहकी है कि तुम कहीं जानेमें शर्माते हो या किसी अपरिचित व्यक्तिसे परिचय कराये जानेपर तुम्हारे मुँहसे बोली नहीं निकलती, तो इस विषयमें भी आशा है, मैं तुम्हारी सहायता कर सकूँगा।

कहीं नहीं और हर कहीं

इस सिलसिलेमें मुझे विद्वान् और मर्मस्पर्शी लेखक सैमुएल बटलरकी याद आ गयी है। वह विगत शताब्दिमें हुआ था, परन्तु

उसके विचार उसके समयसे बहुत आगे बढ़े हुए थे। उसकी कई पुस्तकोंमें एक है 'एरेह्वन'।

यह पुस्तक बड़ी मनोरंजक है और इसमें हमारी मशीन युगकी सभ्यताका बड़ा चुभता हुआ व्यंग-चित्र खींचा गया है।

व्यंगात्मक लेखमें किसी युक्तियुक्त बातको प्रमाणित करनेके लिए एक अत्युक्तिपूर्ण दृष्टान्त दिया जाता है। इस तरहकी कुछ पुस्तकें बड़ी ही मनोरंजक और शिक्षापूर्ण है।

'एरेह्वन' में बटलरने एक ऐसे देशकी कल्पना की है जहाँ रोग अपराध गिना जाता है और जिसे हम लोग अपराध कहते हैं रोगकी तरह उसका इलाज होता है।

एक प्रतिष्ठित परिवारके पिताने अपने मालिकोंके यहाँसे, जहाँ वह नौकर था, कुछ रुपये गबन किये थे। परन्तु वह जेल नहीं भेजा गया, बल्कि एक मनोवैज्ञानिक डाक्टरके सिपुर्द कर दिया गया। डाक्टरका यही काम था कि वह अपने रोगीके मनकी जाँच करके देखे कि किस खराबीसे वैसा अपराध हुआ और उसका इलाज करे।

बटलरके कथानकका यह प्रयोजन नहीं था कि रोगको अपराध समझा जाय और उसी तरह उसका इलाज किया जाय। परन्तु उसके कथनमें किसी हद तक सचाई भी है क्योंकि जब लोगोंकी अपनी ही गलतीसे कोई रोग होता है तब उसे अपराध मानना ठीक भी है।

बटलर इस प्रकार अत्युक्तिपूर्ण उलटी बातोंसे अपने पाठकोंको यह सुनाना चाहता था कि हमारे न्याय-विचार प्रायः कितने कठोर होते हैं, क्योंकि अधिकतर अपराधीके मनका ठीक-ठीक निर्माण न होने और दुर्दशाग्रस्त रहनेसे ही उससे अपराध बन पड़ते हैं।

इसका यह अर्थ नहीं है कि अपराध करनेपर दण्ड ही न दिया जाय।

संसारमें दण्ड देना क्यों आवश्यक है—इसके तीन कारण हैं—

(१) यदि बच्चोंको दण्ड दिया जाता है तो उनकी समझमें आ जाता है कि गलती करनेका यही नतीजा है, अतः वे गलती करना छोड़ देते हैं।

(२) मनुष्य-समाजमें अपराधीको दण्ड देनेसे एक उदाहरण सामने आता है जिससे और लोग फायदा उठाते हैं।

(३) व्यक्तिगत रूपसे बदला लेनेकी अपेक्षा कानून-द्वारा दण्ड दिलाना ही ठीक है। यदि कानूनका दण्डविधान न होता तो लोग अपनी-अपनी मनमानी करते और फलतः विद्रोह और हिंसाका राज्य हो जाता।

जीवन-विकासमें यदि लोगोंके मनका निर्माण ठीक-ठीक हो, तो दण्ड देनेकी आवश्यकता ही न पड़े और अपराधोंकी संख्या बहुत कम हो जाय।

सब बातोंपर विचार करनेसे यही प्रतीत होता है कि अपराध कोई नियम नहीं बल्कि अपवाद है।

इस समय हमें इसी बातपर ध्यान देना है कि लाखों तरहकी छोटी-मोटी विपत्तियों, अन्याय-अत्याचारों और भ्रान्तियोंके कारण लोग अपने और दूसरोंके जीवनको नित्य ही विपत्तिमय बनाते रहते हैं।

अपराध बहुत कम हमारे जीवनको स्पर्श कर पाता है। जिद, बदनीयती और नासमझीसे हमारा रोज साबका पड़ता है। पर ये चीजें बहुत कुछ दूर हो जा सकती हैं यदि लोग अपने मनको सुधारनेकी शिक्षा प्राप्त कर लें।

अतएव हम एक सामान्य जीवनको सम्मुख रखकर उसपर

आरम्भसे होनेवाली समस्त दुर्घटनाओंपर विचार करें। इससे हमें अपनी सहायताके लिए कुछ सूचनाएँ मिल जायँगी।

यह ज्ञान केवल तुम्हारे ही जीवनके लिए उपयोगी नहीं होगा, बल्कि आगे चलकर जब तुम बड़े होगे और तुम्हारे बाल-बच्चे होंगे, तब उनके मनकी बातोंको समझनेके लिए, उनको शिक्षा देनेके लिए और उन्हें सहायता पहुंचानेके लिए भी तुम्हारे काम आयेगा।

मै जानता हूँ, यह बच्चोंका स्वभाव होता है कि वे अपने अभिभावकों और शिक्षकोंका कहना नहीं मानते और अपनी मनमानी करना चाहते हैं। यह एक तरहसे अच्छा भी है, नहीं तो कोई नयी बात कभी होती ही नहीं। परन्तु यह न भूलना चाहिये कि माता-पिता और शिक्षक अपने लम्बे अनुभवके उपयोगसे बच्चोंकी बहुत कुछ सहायता कर सकते है, बशर्ते कि दोनों ओर समझदारी और सद्भाव हो।

कुछ अभिभावकोंमें यद्यपि सद्भाव तो होता है, परन्तु समझदारी नहीं होती। यदि वे समयके अनुसार नहीं चलते हैं तो वे ही गलतियाँ करते हैं जो उनके विषयमें उनके माता-पिता कर चुके हैं।

वे अपने बचपनकी मुसीबतों और कष्टोंको भूल जाते है। वे समझकर भी नहीं समझते कि उनके अदूरदर्शी परन्तु कड़े स्वभावके माता-पिताने उनके चरित्रको कैसा उलझा दिया था।

तिसपर उन्हें यह अचम्भा होता है कि उनके बच्चे उनसे भागे-भागे क्यों फिरते हैं और उनकी सलाह लेने क्यों नहीं आते।

यह याद रखो कि आखिर माता-पिता भी मनुष्य हैं। उनमें मजबूती है तो कमजोरी भी है। यदि तुम्हारे बर्तावमें वे कमजोरी

दिखाते हैं तो तुम्हें कुछ समझदारीसे काम लेना चाहिये और उनके सच्चे स्नेह और दुलारसे प्रसन्न होना चाहिये।

मनोविज्ञान आखिर एक नया विज्ञान है, जो माता-पिता पुस्तकोंसे या अपने अनुभवोंसे इसकी शिक्षा ग्रहण नहीं करते हैं, वे केवल उम्रमें ही बड़े हुए हैं, पर और सभी बातोंमें निरे बच्चे बने हुए हैं। बिना कारण जाने ही उनकी प्रतिक्रियाएँ हुआ करती हैं।

माता-पिताको मातृत्व और पितृत्वकी शिक्षा प्राप्त करनेकी चाह होनी चाहिये। साथ ही माता-पिता अपने लम्बे अनुभवके आधारपर जो राह दिखायें बच्चेमें भी उसपर चलनेकी प्रवृत्ति होनी चाहिये।

यदि माता-पिता और बच्चोंमें इतनी समझदारी हो कि वे एक दूसरेके मनके भावोंको समझ लें तो उनका आपसमें सच्चा विश्वास उत्पन्न हो जायगा। ऐसा होनेसे माता-पिता अपने आश्रित अर्ध-विकसित अवस्थाके बच्चेकी हर बातमें अकारण कटु-आलोचना नहीं करेंगे और उनसे बहुत बड़ी आशा नहीं रखेंगे। बच्चा भी उनके नियन्त्रणको मानने और उनके कहेके अनुसार चलनेके लिए तैयार रहेगा।

इन बातोंकी चर्चा एक उपन्यासमें देखकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। उसका लेखक एक नवयुवक था और इसमें सन्देह नहीं कि उसके बचपनकी बातें उसके मनमें तरोताजा बनी हुई थीं।

उस उपन्यासका नायक अपनी सौतेली माँकी डाँटका बखान इस प्रकार करता है—

"कुछ दिनोंतक वह ऐसी ही बेवकूफी और छिछोरेपनसे मुझे डाँटती-डपटती रही। वह उन्हीं कहावतोंको तोतेकी तरह रटा करती थी और वैसे ही व्यर्थके उपदेश दिया करती थी जो उसके समयमें कोमल-मति बच्चोंके मनमें जबर्दस्ती ठूँसे जाते थे।"

दूसरा वाक्य मेरे लिए विशेष मनोरंजक है। मनुष्य-स्वभावसे परिचित होनेके कारण उपन्यासका नायक इस तथ्यको बखूबी समझ गया है कि उसकी माँ उन्हीं गलतियोंको दुहरा रही है, जो उसके माता-पिता उसके सम्बन्धमें कर चुके थे।

अतएव जब तुम अपने बारेमें सोचो तो भविष्यमें प्राप्त होनेवाली अपनी शक्तिके हित-अनहितका ध्यान रखो।

तुम जो कुछ हो वह अधिकतर अपनी घरेलू शिक्षा-दीक्षाके कारण हो। तुम्हारे बाल-बच्चे किस तरहके होंगे—इसकी बहुत कुछ जिम्मेदारी तुमपर होगी।

अभी तुम्हारी बातोंका असर तुम्हारे नजदीकी लोगोंपर पड़ता है। आगे चलकर यही असर तुम्हारे बाल-बच्चोंके जरिये और लोगोंपर पड़ेगा, और इस तरह फैलता जायगा।

हम सभी मनुष्य परस्पर एक दूसरेके अंग हैं।

क्या हम परस्पर एक दूसरेका हित करेंगे ?

अध्याय १४

मनके विषयमें हम क्या जानते हैं (२)

मैंने पिछले अध्यायमें कहा था कि मैं तुम्हारे अबतकके जीवनकी अवस्थाओंका क्रमानुसार वर्णन करूँगा और तुम शायद इसी इन्तजारमें होंगे कि देखें ये कैसा वर्णन करते हैं।

परन्तु मैं समझता हूँ कि सब बातोंको ठीक-ठीक समझनेके लिए सबसे पहले यही उचित है कि मैं कुछ और महत्त्वपूर्ण तथ्योंका उल्लेख कर दूँ। मनोवैज्ञानिक जिन विषयोंमें एकमत हैं, और जिनका उल्लेख पिछले अध्यायमें किया जा चुका है, ये तथ्य उन्हींसे सम्बन्धित हैं।

तात्पर्य यह है कि मैं मनके भाग-विभागों या हिस्सोंका वर्णन करना चाहता हूँ।

तुम्हें फिलहाल बिना प्रमाणके ही इस वर्णनपर विश्वास करना पड़ेगा। परन्तु मुझे आशा है कि जब मैं औसत बच्चेकी जीवनकथा कहूँगा तब तुम्हें कुछ प्रमाण मिल जायेंगे।

मेरे वर्णनको पढ़ते हुए यदि तुम समझो कि येही बातें तुम्हारे मनमें भी हुआ करती हैं तो सबसे बड़ा प्रमाण यही होगा।

मैंने मनके हिस्सोंकी बात कही है। इससे यह न समझो कि इंजनके हिस्सोंकी तरह ये कोई निश्चित हिस्से हैं। मस्तिष्कके अलबत्ता हिस्से किये किये जा सकते हैं, पर मैं इस समय मस्तिष्क-की बात नहीं कह रहा हूँ।

'मनके हिस्से' कहनेसे मेरा तात्पर्य एक ऐसी अनिश्चित वस्तु-से है जिसके हिस्से या टुकड़े नहीं किये जा सकते। 'मनके हिस्सों'-की तुलना बाजोंकी संगतिसे करना अधिक उपयुक्त होगा। जैसे, हारमोनियम, सितार, मृदंग—अपने-अपने 'हिस्से'का काम अलग-अलग करते हैं परन्तु ये सब 'हिस्से' मिलकर एक संगीतकी सृष्टि करते हैं।

'मनके हिस्से'का कुछ इसी तरहका अर्थ है। ये हिस्से काटे नहीं जा सकते, इनके योगसे एक समग्र वस्तु बनती है, और ये कभी अलग नहीं होते बल्कि सदा मिलकर काम करते है। यहाँ, मुझे डर है, संगीतकी उपमा ठीक नहीं बैठती, क्योंकि बाजे अलग-अलग भी बजाये जाते हैं।

'मन'—कहनेसे तुम क्या समझते हो ?

तुम शायद कहोगे—'जिसके द्वारा आप सोचते है वही मन है।'

यह उत्तर किसी हद तक ठीक है, पर पूरे तौरसे ठीक नहीं है।

तुम्हारा जो हिस्सा अपने भीतर कहता है—'मैं नन्दकिशार हूँ, मैं बड़ा अच्छा लड़का हूँ' या जिस हिस्सेको तुम स्कूलका सबक याद करते समय काममें लाते हो, या जो हिस्सा स्कूलका सबक याद करनेके बदले सिनेमा देखना चाहता है—वही हिस्सा चैतन्य मन है।

इसके अस्तित्वका हम सभीको ज्ञान है।

इसके अलावा मनके और भी हिस्से हैं, जिन्हें हम सब लोग प्रायः नहीं जानते। इसीलिए हममें इनकी प्रबल शक्ति होती है।

उदाहरणके लिए एक हिस्सा है, 'अचेतन मन'। यह स्मृतिकी दाखिल दफ्तर दस्तावेजोंकी आलमारी है। इसमें बड़ी गहरी

दराजे हैं। जिन हानिकारक और लज्जाजनक स्मृतियोंको हम अपने प्रति भी स्वीकार नहीं करना चाहते और भूल जाना चाहते हैं, हम उन्हें उन्हीं दराजोंमें बन्द कर देते हैं।

एक 'पैतृक स्मृति' भी होती है। यह अचेतन मनका एक हिस्सा है। इसकी कार्य-प्रणालीका ठीक-ठीक पता अभीतक नहीं लग सका है। परन्तु जान पड़ता है कि यह पैतृक स्मृति भी उसी तरह आती है जिस तरह हमें पूर्वजोंकी शारीरिक और मानसिक प्रवृत्ति प्राप्त होती है। ऐसा प्रतीत होता है कि हमारे पहलेकी सब पीढ़ियोंकी स्मृतियोंका योगफल हमारे मनको विरासतमें मिलता है।

अतएव तुम यह बखूबी समझ रहे होगे कि जिसे हम 'मन' कहते हैं, वह बड़े मार्केकी वस्तु है। इसकी तुलना जलपर तैरती हुई बर्फकी मोटी चट्टानसे की जा सकती है क्योंकि उसकी ऊपरी सतह ही दिखाई देती है और नीचेका अगाध जल आँखोंसे ओझल रहता है।

हमारे मनमें भी छिपी हुई गहराई होती है, साथ ही ऊपरी सतह भी होती है जिसे हम लोग जानते हैं।

मनके विभिन्न भागोंका विभिन्न प्रकारसे उपयोग होता है। स्मरण रहे कि प्रकृतिने बिना प्रयोजन कोई भी वस्तु नहीं बनायी है।

कठिनाई यह है कि जब बहुतेरे लोगोंको अपने मनकी निचली पर्तोंके होनेतकका ज्ञान नहीं है, तब उनके लिए उन पर्तोंको उपयोगमें लानेका प्रश्न तो दूर है।

यदि तुम किसीसे उसके मनकी गति विधिका पता लगानेको कहोगे या मनपर ठीक-ठीक नियंत्रण रखनेकी सलाह दोगे, तो वह शायद बुरा मान जायगा कि तुम उसके मनको बहका हुआ

समझ रहे हो। परन्तु ऐसे ही लोग शायद यही उत्तर देंगे, और उनका यह उत्तर ठीक ही होगा कि तुम पहले अपने शरीरको समझने और उसे नियंत्रित रखनेकी शिक्षा प्राप्त करो।

जिस तरह सीधे खड़े होना या नाकसे साँस लेना आवश्यक है उसी तरह, बल्कि उससे भी बढ़कर, आवश्यक है मनको नियंत्रित करनेकी शिक्षा प्राप्त करना।

पर यह न समझो कि मनको अनुशासनमें रखनेकी शिक्षा प्राप्त करना सीधे खड़े हो जानेकी तरह सरल है। यह याद रखो कि मनका ऊपरी चैतन्य भाग ही तर्कशील और विवेक-युक्त हो सकता है।

मनके अचेतन भागमें रत्तीभर तर्क-बुद्धि नहीं है। इसीके कारण हम ऐसे काम कर बैठते है जिनके लिए हमारी अन्तरात्मा कभी अनुमति नहीं देती। जब यह निम्न भाग अन्य भागोंका नेतृत्व करता है तब उसका यह कार्य बड़ी शीघ्रता और बलपूर्वक होता है और वह अपने अन्य सहयोगी भागों को दबा देता है।

इसकी कार्यप्रणालीका एक उदाहरण यह है:—

एक बच्चा अनुभव करने लगा कि उसकी माँ उसे प्यार नहीं करती। वास्तवमें वह माता अपवाद-रूप थी और सचमुच बच्चेको प्यार नहीं करती थी। फलस्वरूप बच्चेमें भी माँसे स्नेह न करनेकी प्रतिक्रिया हुई क्योंकि स्नेहका बदला स्नेहसे न मिलनेपर उसके दिलपर चोट लगती थी।

बड़े होनेपर जब उसकी माँ मर गयी तब भी उसकी यह प्रतिक्रिया चलती रही। अन्तर यही था कि यह माँपरसे हटकर अन्य लोगोंपर और खासकर स्त्रीमात्रपर होने लगी।

इसका स्वाभाविक परिणाम यह हुआ कि वह स्वयं दुःखी रहने लगा और औरोंको दुःखी करने लगा। संक्षेपमे कहा जाय तो वह

स्त्रियोंसे घृणा करने लगा, इसीलिए न तो उसका विवाह हुआ और न वह अपने तथा अपने आश्रितोंके लिए गृहस्थी बना सका।

इस विवरणसे यह स्पष्ट है कि यदि अचेतन मन तर्कशील और विवेकयुक्त होता तो वह बालक समझ जाता कि उसकी यह प्रतिक्रिया उसके भविष्यके लिए विपत्ति और दुःखका खजाना भर रही है।

यदि वह बचपनमें समझ सकता कि उसके कार्यका उसके समस्त भावी जीवनपर क्या प्रभाव पड़ेगा, तो वह अपनी माता-की स्नेह-हीनताको एक निश्चित सत्य मानकर चुपचाप सहन कर लेता और आगे चलकर स्वाभाविक रीतिसे (अपने स्त्री-बच्चोंसे) स्नेहका आदान-प्रदान करता।

परन्तु चूँकि वह बालक भावुक प्रकृतिका था और उसने अपने कार्यकी भूल स्वीकार न करके स्नेहकी अतृप्त क्षुधा बलात् अपने भीतर भर ली, इसलिए स्मृतिकी फाइलोंवाली आलमारीकी क्रियामें 'जाम'* हो गया। बादको जब वह अन्य स्त्रियोंसे मिला तब विवेकहीन अचेतन मनने बुरी स्मृतिको इस तरह उभाड़ दिया कि उसने अपने पूर्व दुःखकी अनुभूतियोंको इन स्त्रियोंसे जकड़ दिया।

यदि तुम्हें इस उदाहरणको समझनेमें कठिनाई होती है तो मैं एक दूसरा सरल दृष्टान्त देता हूँ। इससे तुम समझ जाओगे कि बुरी स्मृतियोंसे मनपर कैसी खरोंच पड़ जाती है।

किसी पौधेके नरम तनेपर कड़े तिनकेको गड़ाते हुए अपना नाम लिख दो। ज्यों-ज्यों वह पौधा बड़ा होगा त्यों-त्यों तुम्हारे

---

*JAM=जमघट

नामकी खरोंच भी बड़ी होगी। वह हलकी जरूर पड़ती जायगी, परन्तु उसका घेरा बढ़ जायगा।

इसी प्रकार मनपर और खास करके बच्चोंके मनपर जो चिह्न पड़ जाते हैं वे स्थायी हो जाते हैं। वे कुछ पुर सकते है और हलके हो सकते हैं (अर्थात् अचेतन मनमें उतर जा सकते है), परन्तु उनके प्रभावका घेरा बढ़ता रहता है।

वृक्षके तनेमें यह शक्ति नहीं होती कि अपनी खरोंच मिटा सके, परन्तु हम यदि प्रयत्न करें कि हमारे मनकी खरोंचें हमारे जीवनपर बुरा प्रभाव न डालें तो हम उन खरोचोंको अवश्य मिटा सकते हैं।

मेरे इस कथनका यही अर्थ है कि अपनी भीतरी अवस्थाको जाँचना सीखो और अपने विचारों और कार्योंके कारणोंको समझो।

यदि तुम ध्यान देकर सोचोगे तो तुम्हें मालूम हो जायगा कि तुम्हारे कुछ विचारों और कार्योंका उद्गम-स्थल तुम्हारा अचेतन मन है, न कि चैतन्य मन। कहनेका तात्पर्य यह है कि वैसे विचार और कार्य विवेकहीन होते हैं और बचपनमें मनपर जो छोटी-मोटी चोटें लगी रहती हैं, वे उन्हींका परिणाम हैं। यदि तुम कारणका पता लगा लोगे तो मनको नियंत्रित करनेके मार्गपर एक कदम आगे बढ़ जाओगे।

तुम सोच रहे होगे कि यह अचेतन मन तो एक बहुत बड़ी आफत है। इसकी आवश्यकता ही क्या है?

मैं पहले ही कह चुका हूँ कि प्रकृतिने बिना प्रयोजन कोई वस्तु नहीं बनायी है।

'अचेतन मन'से फाइलोंकी आलमारी या पूर्व अनुभूतियोंके भंडारका प्रयोजन सिद्ध होता है। हमारा कोई भी अनुभव कहीं

खो नहीं जाता है, बल्कि यह हमारे अचेतन मनमें अंकित हो जाता है।

यदि हमारी प्रत्येक स्मृति मनके सम्मुख होती अर्थात् मनकी ऊपरी या चैतन्य सतहपर ही बनी रहती तो ये सबकी सब उसमें अमातीं ही नहीं और इस तरह बेतरतीब तथा गुत्थमगुत्थ होकर रहतीं कि आवश्यकता पड़नेपर जिस स्मृतिसे तुम काम लेना चाहते वह तुम्हारे हाथ ही न आती।

जीवनमें नित्यप्रति काम आनेवाली आवश्यक बातोंका चैतन्य मनमें रहना और शेष बातोंका अचेतन मनमें रहना लाभकारी होता है। ये चैतन्य और अचेतन मन जबतक अपना-अपना प्रयोजन सिद्ध करते रहते हैं तबतक इनसे लाभ ही लाभ है।

हानि तो तब होती है जब कोई पीड़ाजनक स्मृति अचेतन मनमें जबर्दस्ती और कठोरतासे ठूँसी जाती है। जबर्दस्ती और कठोरता इसलिए की जाती है कि उस स्मृतिको हम भूल जाना चाहते हैं। अतः जब हमें उसकी रत्तीभर भी आशा नहीं होती तब जरा दबाव पड़ते ही वह सिर बाहर निकालती है और हमारे अनजाने ही, हमारे विचारोंपर और कार्योंपर भी हानिकारक प्रभाव डालती है।

अचेतन मनसे पैतृक स्मृतिका भी बड़ा घनिष्ठ सम्बन्ध है। वास्तवमें तुम पैतृक स्मृतिको सबसे निचली दराज या सबसे गहरी सन्दूकची कह सकते हो।

इससे भी उत्तम प्रयोजन सिद्ध होते हैं। परन्तु यदि हम इसके अस्तित्वसे बेखबर रहते हैं और इसे नियंत्रणमें रखनेकी चेष्टा नहीं करते तो इससे हानियाँ भी होती हैं।

मनकी इस सबसे निचली तहकी हमें खबर नहीं होती। यह हमारे प्राकृतिक आचरणोंमें प्रकट होती है।

तुम्हें स्मरण होगा, मैंने बारहवें अध्यायमें बताया था कि सभी मनुष्योंमें एक ही से मौलिक प्राकृतिक गुण होते हैं। ये हैं—आत्मरक्षा, आत्मप्राधान्यस्थापन, उत्पादन, साहचर्य और ज्ञानकी प्रबल प्रवृत्तियाँ।

इन आवश्यकताओंकी शिक्षा हमारे बहुत पहलेके पूर्वजोंको जीवनके लिए कठोर संघर्ष करते समय मिली थी। यह पूर्वस्मृति प्रत्येक मनुष्यके मनमें पुनर्जन्म ग्रहण करती है और उसकी गहराईमें गड़ी रहती है, परन्तु अवसर आते ही तुरन्त काममें आनेके लिए तैयार रहती है।

दूसरे शब्दोंमें कहा जा सकता है कि हम प्रत्येक मनुष्य एमीबासे लेकर अन्य सभी जीवोंकी स्मृति अपने मनमें धारण किये हुए हैं। इन सभी जीवोंको खाद्यका अन्वेषण करना पड़ता था, शत्रुओंसे अपनी रक्षा करनी पड़ती थी, अपनी जातिका अस्तित्व कायम रखना पड़ता था, निरापद रहनेके लिए औरोंके साथ मिल-जुलकर रहना पड़ता था और इन्हें नये-नये स्थानों और जीवनके नये-नये उपादानोंकी खोज करनी पड़ती थी।

यदि तुम जीवनके लम्बे और मनोरंजक इतिहासको सोचोगे, तो तुम्हें शायद इस बातपर आश्चर्य न होगा कि ये प्रवृत्तियाँ प्रत्येक मनुष्यमें क्यों इतनी प्रबल हैं।

उस आदिम कालके जीवोंका भीषण संघर्ष, उनका साहस तथा उनके अवलम्बन, और उनके जीवनके विकासकी किसी तरहकी कठिनाईसे हार न माननेकी दृढता—ये इतिहासकी ऐसी बातें है कि इनपर जो गौर करेगा उसे अपने जीवित रहनेपर अभिमान होगा और वह गर्वके साथ जीवन-ज्योति वहन करेगा।

उन प्राचीन जीवोंसे कुछ बड़ी चमत्कारपूर्ण बातें हमें विरासतमें मिली हैं।

भोजन और पाचनकी प्रत्येक क्रियाके लिए तुम्हें अमूल्य समय और विचार-शक्ति नष्ट नहीं करनी पड़ती। तुम्हारे शरीरकी पाचन-मण्डली इन कामोंको कर डालती है और तुम्हें इस ओर जरा भी ध्यान नहीं देना पड़ता। क्यों? इसीलिए कि करोड़ों वर्ष पहले इन कामोंकी एक-एक मंजिल बड़े दुःखोंके साथ तय की गयी थी।

यदि तुम रास्तेसे जा रहे हो और किसी मकानकी छतसे कोई चीज गिर पड़ती है, तो तुम्हें पैरोंको संवाद देनेके लिए रुकना और सोचना नहीं पड़ता है। तुम तुरन्त उछलकर हट जाते हो। क्यों? इसीलिए कि तुम्हारे आदिम पूर्वज मौतसे बचनेके लिए सदा खतरोंकी ताकमें रहते थे और तुरन्त अपना बचाव किया करते थे।

यदि तुम्हारी आँखके पास मक्खी भनभनाती है, तो तुम बिना कुछ सोचे-विचारे स्वभावतः चट आँखें बन्द कर लेते हो। क्यों? इसीलिए कि तुम्हारे अस्तित्वकी कल्पनाके भी करोड़ों वर्ष पहले इस प्रकार अपनी रक्षा करनेके अभ्यासकी शिक्षा जीवोंको मिल चुकी थी। हमारी पैतृक स्मृतिके ये ही छोटे-मोटे लाभ हैं। परन्तु यह खतरोंसे भी खाली नहीं है।

आदिम अवस्थाकी मनुष्य-जाति और उससे भी पूर्वके जीवोंको बड़ी ही कठिन परिस्थितियोंमें रहना पड़ता था। बहुधा अपने जीवनकी रक्षाके लिए दूसरेके जीवनका अपहरण आवश्यक हो जाता था। अपनी भूख मिटानेके लिए दूसरेके मुँहका कौर छीननेकी आवश्यकता प्रायः पड़ा करती थी और इस बातकी जरा परवाह नहीं की जाती थी कि वह मरेगा या जियेगा।

इसीको जंगलीपन या बर्बरता कहते हैं।

मैं समझता हूँ कि यहींसे हम लोगोंके स्वार्थकी बुनियाद पड़ी। हर बातमें अपनेको या अपने स्वार्थको आगे रखनेकी हम प्रत्येक व्यक्तिमें जो प्रबल भावना होती है वह इसी पैतृक स्मृतिका अंश है।

परन्तु जैसे प्रत्येक मनुष्यको बड़ा होनेके लिए कुछ निश्चित अवस्थाओंसे होकर गुजरना पड़ता है उसी तरह मनुष्य-जाति भी कुछ निश्चित अवस्थाओंसे होकर विकसित हुई थी। मनुष्य-जातिकी अब वह अवस्था बीत चुकी है जिसमें स्वार्थ-साधनकी बहुत बड़ी आवश्यकता थी। आज हमें उस बीते हुए युगकी शिक्षाको भूल जाना है और इस प्रकार समाजबद्ध होकर मेल-जोलसे रहनेका पाठ पढ़ना है कि सभी लोग सबकी भलाईके लिए मिलकर काम करें।

संसारका सुधार करना तुम्हारे या मेरे वशकी बात नहीं है, परन्तु हम लोग अपने-अपने व्यक्तिगत सुधारसे इस कार्यका श्री-गणेश कर सकते हैं।

स्वार्थ जैसा भी हो, चाहे उसमें खून करनेका जोश हो या सिर्फ सीधी-सादी हिर्स हो, या और कोई गैर-मुनासिब बात हो, परन्तु जब वह पैतृक स्मृतिसे उदय होकर हमारे अचेतन मनकी राहसे गुजरता है और हमसे ऐसे काम कराने लगता है जिन्हें अपनानेके लिए हमारा चेतन मन कभी तैयार नहीं होता, बस ठीक ऐसे ही समय हमें सम्हल जाना चाहिये।

तुम भी जानते हो और मैं भी जानता हूँ कि ऐसे अवसरोंसे हम लोगोंका नित्य ही साबका पड़ता है।

अतएव मनके इन तीनों हिस्सोंको याद रखो—चैतन्य मन, अचेतन मन और पैतृक स्मृति। इन्हींके रोगोंसे तुम्हारे जटिल

जीवनका सम्पूर्ण संगीत बना है। ऐसा प्रयत्न करो कि ये तुम्हारे नियंत्रणमें रहें और इनमें सच्ची स्वर-मैत्री रहे।

यदि प्रत्येक मनुष्य ऐसे प्रयत्नकी आवश्यकताको समझ ले और अपने भरसक इसके अनुसार काम करे तो संसारमें इतनी बुराई न रह जाय। अपनी और साथ ही दूसरोंकी भलाईके लिए हमें पहले अपने अन्दर, न कि बाहर, सुधार करना चाहिये।

अध्याय १५

संसारमें आगमन

क्या कभी यह बात तुम्हारे ध्यानमें आयी है कि बच्चा अपने जन्मके बारेमें क्या सोचता है ?

'सोचना'—शब्दका प्रयोग मैं यहाँ खास ढंगसे कर रहा हूँ, क्योंकि सभी जानते हैं कि तुम्हारी और हमारी तरह बच्चेको सोचना नहीं आता।

फिर भी बच्चेके मस्तिष्क तो होता ही है, और यद्यपि वह अविकसित अवस्थामें रहता है, तो भी उसमें बढ़नेकी शक्ति रहती है। तुम्हारी और हमारी तरह बच्चेके भी मन होता है जिसमें तीनों सतहें मौजूद रहती है—चैतन्य मन, अचेतन मन, और पैतृक स्मृति।

तुम जानते हो कि चूहे और बिल्लीके बच्चे जब पैदा होते हैं तब उनकी आँखें बन्द रहती हैं। मानव-शिशु जब जनमता है तब उसकी आँखें अवश्य खुली रहती हैं पर बड़े लड़कों और सयानोंकी तरह साफ-साफ देखनेमें उसे कई हफ्ते लग जाते हैं।

बच्चेको आँखोंका व्यवहार करना सीखना पड़ता है। हम लोग इस बातको यों कहेंगे कि उसे आँखोंको केन्द्रित करना सीखना पड़ता है। इसी तरह बच्चेको मनको काममें लाना भी सीखना पड़ता है, खास कर मनकी ऊपरी सतहको अर्थात् चेतन मनको। आगे चलकर यही सबसे उपयोगी भाग प्रतीत होगा।

वास्तवमें, जब तुम बहुत छोटे थे, तब तुम्हारे मनके वे भाग जो इस समय और लोगोंकी ही नहीं वरन् तुम्हारी दृष्टिसे भी छिपे हुए हैं, बहुत ही स्पष्ट थे। यदि ऐसा न होता तो तुम आँखोंको व्यवहार करनेकी चेष्टा कैसे कर सकते थे या अपनी माँका दूध पीनेका प्रयत्न कैसे कर सकते थे? इस समय जिस पैतृक स्मृतिसे तुम बेखबर हो, उसकी क्रियाके सिवाय ये काम कैसे सम्भव होते?

चूँकि यह सभी समझते हैं कि बचपनके प्रभाव बच्चेके मनपर अमिट चिह्न छोड़ जाते हैं, इसलिए मनोवैज्ञानिकोंके मनमें यह प्रश्न उठता है कि नवजात शिशुके मस्तिष्कमें ये प्रभाव किस समयसे अंकित होने लगते हैं?

तुम चाहे अभी लड़के ही हो, फिर भी जहाँतक मैं समझता हूँ, अपने जीवनके शुरू-शुरूके कुछ वर्षोंकी घटनाएँ तुम्हें याद नहीं रह सकतीं। परन्तु मनोविश्लेषणकी पद्धतिसे जब मनोवैज्ञानिकोंने परीक्षा ली तब देखा गया कि कितने ही लोग उस सममकी बातोंको याद कर सकते थे जो तब हुई थीं जब वे गोदीके बच्चे थे।

इसलिए मनोवैज्ञानिकोंका विश्वास है कि अत्यन्त प्रारम्भिक प्रभाव, यहाँतक कि जन्मके समयके और उससे पहलेके भी प्रभाव नवजात शिशुके मनपर अपनी छाप छोड़ जाते हैं।

जरा विचार करो अपनी उस अवस्थाकी जब तुम बड़े आरामसे माताके गर्भमें एक लम्बे अर्सेतक गर्माये हुए पड़े हुए थे। तुम्हारी सभी जरूरतें रफा होती रहीं। न ठंडका नाम था, न भूखका काम था और न कोई धन्धा था।

उस गर्माहट और आरामकी बहुत दिनोंकी भूली हुई याद ने हममेंसे बहुतोंपर ऐसी गहरी छाप बैठा दी है कि बहुतेरे लोग

बिछौनेपर ठीक उसी तरह सिकुड़कर सोते हैं जैसे गर्भमें बच्चा रहा करता है—घुटने पेटसे सटाये, पीठ धनुषाकार, बाहें आपसमें जुड़ी हुई।

ऐसी गर्माहट, आराम और शान्तिके बाद तुम्हारे पैदा होनेकी घड़ी आयी। एकाएक तुम्हारे घोसलेकी गर्म और नर्म दीवार टूटने लगी। तुम्हारी माताकी मजबूत मांस-पेशियाँ, जो अबतक तुम्हारे बढ़ते हुए बोझको सम्हाले हुई थीं, तुम्हें उस आरामदेह बिस्तरसे बाहर जोरसे ढकेलने लगीं।

तब तुम संसारकी बड़ी ठंडी और तीखी लगनेवाली हवासे संघर्ष करते हुए सिरके बल बाहर आये। शायद तुम्हें औंधे करके हिलाया-डुलाया भी गया हो जिसमें तुम स्वतन्त्र रूपसे पहली साँस ले सको।

यदि तुम "कहाँ-कहाँ" करके चीख उठे तो आश्चर्य क्या था?

तुम्हारा गर्म और अँधेरी कोठरीसे बाहर ठंड और प्रकाशमें आना, अपने आप साँस लेनेके लिए मजबूर होना, फिर अपने पोषणके लिए दूध पीनेका प्रयत्न करना, शरीरसे मल-मूत्र त्यागनेकी चेष्टा करना—इन महान् घटनाओंकी छाप तुम्हारे मनकी तहमें बनी रहती है तो आश्चर्य क्या है?

इसमें भी प्रकृतिका कुछ गूढ़ प्रयोजन है।

प्राचीन बर्बर कालमें जिस कमजोर बच्चेके लिए जीवित रहना कठिन था, वह शायद इस कठोर संसारमें जन्म लेना ही न चाहता और जनमता भी तो यहाँकी कठिनाइयोंको झेलनेकी सामर्थ्य न होनेके कारण मर जाता।

दूसरी ओर, यह बात है कि जन्म लेनेके लिए जो प्रयत्न करने पड़ते हैं, यदि बच्चेके मनपर उनकी छाप पड़ जाती है

तो अच्छा ही है। इससे बच्चा जीवित रहनेके लिए, कठिनाइयों और खतरोंकी आशा करनेके लिए तैयार हो जाता है।

जन्म लेनेके समयके पहले कष्टोंको झेलनेके बाद, सौभाग्यसे हमारे लिए गर्माहट और आरामके सब सामान तैयार रहते हैं। हम अपनी माताकी बाहोंमें जकड़े रहते हैं और उनके लाड़-प्यार-से घिरे रहते हैं।

हम पहले ही कह चुके हैं कि बच्चा पहले-पहल अपनेमें और दूसरे लोगोंमें कोई फर्क महसूस नहीं करता।

यह स्वाभाविक ही है क्योंकि वास्तवमें बच्चा गर्भमें माताका एक अंश ही था।

उस अँधेरी कोठरीसे बाहर होनेपर जैसे तुम्हें आँखोंको ठीक तौरसे कामें लाना सीखना पड़ा, उसी तरह सोचनेवाले मनसे काम लेना भी सीखना पड़ा। इसी तरीकेसे तुम महसूस कर सके कि तुम एक अलग व्यक्ति हो।

जब तुम गर्भमें थे तब तुम्हें गर्माहट, आराम और माँके रक्तसे पोषण-द्रव्य मिलनेका पूरा निश्चय था। इसी तरह जन्म लेनेके बाद भी तुमने निश्चित रूपसे मान लिया कि तुम्हें गर्माहटमें रखकर आराम दिया जायगा और खिलाया-पिलाया जायगा।

दूसरे शब्दोंमें कहा जा सकता है कि जब तुम गर्भमें थे तब, यद्यपि तुम साफ-साफ सोच-विचार नहीं सकते थे तो भी, निरापद रहनेकी और परवरिश पानेकी एक गहरी भीतरी भावना तुममें थी। जन्म लेनेके बाद भी तुम्हारी हिफाजत, देखभाल और लाड़-प्यारकी जरूरतें जारी रहीं।

प्रथमावस्थाके इन प्रभावोंकी ऐसी गहरी छाप हम लोगोंके

मनपर जमकर बैठ जाती है कि सारे जीवनभर हमारा ये आवश्यकताएँ हमारे साथ बनी रहती है।

यदि बच्चेकी ठीक-ठीक परवरिश नहीं होती तो उसके अंग विकृत हो जाते हैं। इसी तरह यदि विकास-मार्गमें पड़े हुए मनको रक्षा और स्नेहका भरोसा नहीं होता तो वह भी विकृत हो जाता है।

रक्षाके कई अर्थ हैं। एक तो है शरीरकी रक्षा। दूसरा है दैनिक रक्षा अर्थात् इस बातका निश्चय होना कि जीवन नियमित रूपसे रहेगा, एक निर्धारित मार्गपर चलेगा और आकस्मिक दुःखोंके ज्यादा धक्के नहीं खायेगा।

स्नेह पानेका अर्थ बहुत स्पष्ट है। परन्तु स्मरण रहे कि इस 'पाने'में देना भी छिपा है। दूसरे शब्दोंमें इसका अर्थ है—जिससे स्नेह हो उसे और अपनेको एक समझना, जिस तरह आरम्भमें माँ और बच्चा मिले हुए एक ही थे।

रक्षा और स्नेहके बिना मनुष्यका चरित्र भूखा रह जाता है और उगने-बढ़नेसे रुक जाता है. ठीक उसी तरह जैसे भूखे रहनेके कारण बच्चेके अंग टेढ़े-मेढ़े हो जाते हैं।

मान लो कि किसी कारणसे तुम जब नन्हेसे बच्चे थे तभी तुम्हारी रक्षा या हिफाजतका भरोसा जाता रहा। किसी सुघड़ गृहिणीके बजाय तुम किसी अनाड़ी स्त्रीके पाले पड़े। ठीक समय-पर तुम्हें दूध इत्यादि नहीं दिया जाता था। या तो भूख न रहने-पर भी ये चीजें जबर्दस्ती तुम्हारे गलेके नीचे उतार दी जाती थीं या भूख लगनेपर तुम पड़े-पड़े रोया-चिल्लाया करते थे, पर किसीके कानमें जूँ नहीं रेंगती थी।

इसका पहला असर तो तुम्हारे शरीरपर यह पड़ा कि उसकी

क्रिया बिगड़ गयी, पाचन-शक्तिमें गड़बड़ी हुई और तुम रोगियल और चिड़चिड़े बच्चे बन गये।

इससे भी बढ़कर स्थायी हानि यह हुई कि तुम्हारे मनपर यह छाप पड़ गयी कि संसार एक भयानक और दुर्गम स्थान है, जहाँ न सुरक्षा है और न स्नेह।

इस तरह लोगोंके मानसिक गठनमें ही निराशा और दुश्चिन्तता का समावेश हो जाता है। वे लोग कोई नया काम करनेसे डरा करते हैं और उन्हें यह अँदेशा बना रहता है कि कोई-न-कोई खराबी होनेवाली है।

मनकी ऐसी अवस्था हो जानेके अन्य कारण भी होते हैं, परन्तु उपर्युक्त कारणसे भी मनकी यह दशा हो जाती है।

यदि उपर्युक्त घटना तुम्हारे ऊपर भी घटी हो और तुम अब-तक नहीं समझ सके हो कि हर बातसे तुम्हें डर क्यों लगा करता है, तो अपने मनकी बनावट ठीक-ठीक न जाननेके कारण तुम उसे बदलनेमें असमर्थ रहे होगे।

रक्षा या हिफाजतपर और भी कुछ कहना है। मान लो कि किसी नन्हें-से बच्चेके खिलवाड़ी परन्तु अनाड़ी चाचा-चाची या और कोई उसे हँसी-खेलमें बेरहमीसे हिलाते-डुलाते या कड़ियों-तक उछालते हैं।

जबतक उनके हाथ बच्चेको सम्हाल लेनेमें मजबूत और पक्के रहते हैं और बच्चेको अपनी हिफाजतका भरोसा रहता है, तबतक तो यह हँसी-खेल है। परन्तु यदि बच्चा एक क्षणके लिए भी अपनी हिफाजतका भरोसा खो देता है और समझता है कि वह गिर पड़ेगा तो उसमें एक दहशत समा जाती है। इस दहशतका निशान बड़े होनेपर भी उसके मनमें बना रह सकता है।

छोटे बच्चेको जरूरतसे ज्यादा लाड़-प्यार नहीं किया जाता। इसका भी एक अपवाद है जिसे मैं एक क्षणमें बताऊँगा।

सयाने लड़कोंको प्यारसे दबोचना या लिपटाना-चिपटाना हानिकारक हो सकता है। परन्तु छोटे बच्चोंके विषयमें यह बात लागू नहीं है। आगे चलकर जब तुम्हारे बचपनका प्रसंग आयेगा तब मैं इस विषयका खुलासा करूँगा।

बच्चेमें गर्भमें रहनेकी स्मृति इतनी निकटस्थ और तरो-ताजा होती है कि वह अपनेको एक पृथक् व्यक्ति महसूस नहीं करता। उसे जान पड़ता है कि उसकी माँ और वह एक ही है। इसीलिए माँका प्यार उसके लिए स्वाभाविक और आवश्यक है।

अब मैं उस अपवादके विषयमें कहता हूँ जिसका अभी जिक्र किया है। जो माता अपने बच्चेको बहुत प्यार करती है वह उसके जरा रोते ही अपना दूध पिलाने लगती है, चाहे इससे बच्चेको बदहजमी ही क्यों न हो जाय

बच्चा बिना कारण नहीं रोता है। जब बचपनमें तुम रोते हो तब तुम्हारी बुद्धिमती माता पहले यह देखती है कि तुम्हारे कोई चीज चुभ या गड़ तो नहीं रही है, कपड़ा कसा हुआ तो नहीं है या तुम्हारे आराममें खलल डालनेवाली और कोई बात तो नहीं है।

यदि इनमेंसे कोई कारण नहीं है तो सम्भव है, तुम्हारा मिजाज रोना हो। याद रहे कि बच्चा मनका उपयोग सीखने लगता है। रोने बच्चे बनकर जो पहली शिक्षा तुम्हें मिलती है वह यह कि खूब रोने-चिल्लानेभरकी देर है, फिर कोई तुम्हें गोदमें उठा लेगा, हिलाये-डुलायेगा या दूध पिलायेगा और तुम्हारे मनकी बात पूरी हो जायगी।

तुम्हारी रोआ-राहटसे डरकर या ममतासे पिघलकर यदि

माता तुम्हें दूध पिलाती है तो भी तुम्हारी रोनेकी आदत नहीं जाती।

बहुतेरे बच्चे और सयाने यही समझते हैं कि बावैला मचाने-से ही उनके मनकी बात पूरी हो जायगी। ऐसे लोगोंसे सभीका साबका पड़ा होगा। ऐसे लोग दुःखदायी होते हैं और उनके साथ कोई भी रहना नहीं चाहता। उनका कोई मित्र नहीं होता, क्योंक उनसे किसीकी पटती ही नहीं।

कुछ पानेके लिए कुछ देना भी जरूरी है। और लोग तुम्हारा खयाल करें—इसके लिए जरूरी है कि तुम भी औरोंका खयाल रखो। माँकी मूर्खतासे ही बच्चे बावैला मचानेवाले हो जाते हैं और उनका मन मौलिक रूपसे क्षतिग्रस्त हो जाता है। ऐसे लोगों को बहुतेरे कटु अनुभवोंका सामना करना पड़ता है, तब कहीं जाकर उनकी क्षति-पूर्ति हो पाती है।

हममेंसे बहुतोंको बचपनमें माता-पिताका भरपूर स्नेह प्राप्त होता है। कभी-कभी कोई बच्चा यह भी महसूस करता है कि उसको चाहना या देखरेख नहीं होती। उसके लिए स्नेह और देखभाल एक ही बात है।

कोई भी स्त्री यही कहेगी कि मैं अपने बच्चेको प्यार करती हूँ और उसे अपने स्नेहकी सचाईपर विश्वास भी होता है। परन्तु यदि वह बच्चेकी ठीक तौरसे देख-भाल नहीं करती है तो अपनेको धोखा देती है।

वह अपनेको और दूसरे लोगोंको इस तरह भले ही धोखा दे, परन्तु बच्चेको धोखा नहीं दे सकती। बच्चा उसकी धोखे-बाजीको जान लेगा।

अच्छा तो अब उदाहरणके लिए यह मान लिया जाय कि बचपनमें तुम्हारा लाड़-प्यार नहीं हुआ, तुम स्नेहके भूखे रह गये।

तुम्हारा यह खयाल गलत भी हो सकता है। तुम्हारे पिता शायद काम-काजमें व्यस्त रहते हों। तुम्हारी माता—तुम्हारे जीवनके प्रारम्भ-कालकी एकमात्र अभिभावक माता—सम्भवतः गृहस्थीके धन्धेसे पिसी जाती हों और उन्हें तुम्हारे दुलारके लिए फुरसत ही न मिलती हो। जो हो, मैं यह मानता हूँ कि स्नेह पहचाननेमें बच्चे गलती नहीं करते और इस सम्बन्धमें उनकी धारणा ठीक ही होती है।

खैर, मान लिया कि तुम स्नेहकी भूखसे पीड़ित रहे; अतएव बचपनसे तुम्हारा विकास इसी विचारके साथ हुआ कि संसार बड़ा कठोर और ममताहीन स्थान है और जीवन बहुत बड़ा बोझ है।

ऐसा विचार तुममें कहाँ से आ गया—यह तुम स्वयं नहीं जानते। यह अपने आप ही मानों तुममें पैदा हुआ। जो भी घटनाएँ होती रहीं उनसे मानों इसी विचारकी पुष्टि होती रही।

आगे चलकर जब स्वयं तुम्हारे बच्चा होगा तब तुम इस अभावको पूरा करने की चेष्टा करोगे। तुम्हारा अन्तस्थल कहेगा कि आखिरकार अब जो वस्तु तुम्हें मिली है वह तुम्हारी अपनी है और उसे तुम जी खोलकर प्यार कर सकते हो। अतएव उससे तुम इस तरह पूर्ण स्नेह कर सकते हो कि दूसरी ओर ध्यान देनेकी जरूरत ही नहीं।

यदि तुम सावधानीसे काम नहीं लोगे तो तुम लाड़-प्यारसे बच्चेको बिगाड़ दोगे। तुम्हारा दुलार उस समय भी वैसा ही बना रहेगा जब वह अपने पैरों चलना सीख जायगा।

इस तरहकी गलतियोंके बेइन्तहा बुरे नतीजे होते हैं।

बाइबिलमें जो कहा गया है कि "पिताके पापका प्रायश्चित्त पुत्रको करना होगा"—उसका यही अर्थ है। वह ईश्वरीय आज्ञा नहीं बल्कि नित्यप्रतिकी यथार्थ घटना है।

इसी तरह बच्चे दुर्बल चित्तके हो जाते हैं। वे अपनी माँके आँचलमें छिपे रहते हैं और बाहर निकलनेका साहस नहीं करते। वे जीवनमें कोई आनन्द या साहसपूर्ण काम नहीं कर सकते। बचपन में स्नेह न पानेके कारण माताके मनमें जो ऐंठन पड़ जाती है उसका यही अन्तिम परिणाम उसके अपने बच्चेपर होता है।

इसे अन्तिम परिणाम नहीं कहना चाहिये, क्योंकि उस बच्चेके मनमें भी कुछ दूसरी तरहकी ऐंठन पड़ जाती है और जब वह स्वयं पिता होता है तब अपने बच्चोंपर दूसरी तरहकी गलतियाँ किया करता है।

किसीके रोब-दाब और हुकूमतको देखकर तुम्हें ताज्जुब होता होगा और कारण जानना चाहते होगे। मसलन, सास बहू-पर बड़ा रोब गाँठती है। वह अपने लड़के और बहूको उनके मनमूजिब नहीं चलने देती, बल्कि उनकी हर बातमें अपनी हुकूमत चलाती है।

ऐसी माँ शायद अपने बचपनमें स्नेहकी भूखी रही और बादको अपने लड़केके स्नेहमें इस तरह बँध गयी कि उसका जी यह कबूल ही नहीं करता कि उसका लड़का अपने जीवन-रथको स्वयं चला सकता है।

यदि तुम्हें यह स्मरण रहे कि बचपनकी निराशाओंके ऐसे परिणाम होते हैं तो दूसरोंकी हरकतोंको, खासकर जो तुम्हें परे-शान करते हों उनकी हरकतोंको समझनेमें तुम्हें आसानी होगी।

संतुलित और सन्तोषी चित्तके मनुष्य कभी किसीकी आलो-चना और बुराई नहीं करते और न किसीके काममें हस्तक्षेप करते हैं। वे अपने सुशृंखलित जीवनके कार्योंमें ही व्यस्त रहते हैं।

अबतक हम तुम्हारे बचपनकी उस अवस्थाकी चर्चा करते

रहे जब तुम्हारे अकेन्द्रित और अनस्थिर मनको यह लगता रहा कि तुम वास्तवमें अपनी मातासे जुदा नहीं, बल्कि उसीका एक अंग हो।

उसके बाद धीरे-धीरे तुम्हें यह समझ आयी कि तुम एक स्वतंत्र व्यक्ति हो। इस समझसे तुम्हारे चित्तमें एक प्रकारका आवेग अवश्य हुआ होगा। तुम और लोगोंको पहचानने लगे होगे, वे तुम्हें जुदा-जुदा ढंगसे गोदमें लेते होंगे, तुम उनके जुदा-जुदा चेहरे और उनकी जुदा-जुदा बोली पहचानने लगे होगे।

औरोंको जाननेपर इस बातकी भी जरूरत पड़ी होगी कि तुम उनके अधिकारों और सुविधाओंका सम्मान करो। तात्पर्य यह है कि इसी प्रकार बचपनमें धीरे-धीरे क्रमशः सामाजिक व्यवहार-बर्तावकी शिक्षा तुम्हें मिली।

हम ज्यों-ज्यों उम्रमें बढ़ते हैं त्यों-त्यों हमें यह शिक्षा मिलती है कि हम अन्य लोगोंसे पृथक् व्यक्ति हैं, और फिर यह कि हम उन्हींके अंग है। हमें यह उपाय करना पड़ता है कि हम आत्म-विश्वासी व्यक्ति बनें और इस तरह रहें कि हमारे कारण अन्य लोगोंको कोई कष्ट या हानि न पहुँचे।

हम और लोगोंसे जैसे व्यवहारकी आशा करते हैं, हमें उनके प्रति भी वैसा ही व्यवहार करना चाहिये। आज बहुजनपूर्ण समाजों और जातियों में हम जिस तरह पास-पास रहते-बसते हैं उसके लिए यही एकमात्र व्यावहारिक उपाय है।

जिस दिन संसारके राष्ट्र इस नीतिके अनुसार चलना सीख जायँगे, संसारकी कष्ट-कहानीमें वह सच्ची शान्तिका पहला दिन होगा।

छोटेसे छोटे बच्चेको भी जितनी जल्दी हो सके यह शिक्षा अवश्य ग्रहण करनी चाहिये।

अपने बचपनकी तो तुम्हें याद नहीं होगी, पर यदि तुम्हारे छोटे भाई-बहन हों तो तुम समझ सकते हो कि भोजन ठीक-ठीक पचाना और उचित समयपर मलमूत्र त्याग करना उनके लिए कितना आवश्यक है।

इसके दो कारण हैं।

एक कारण तो है बच्चेका अपना स्वास्थ्य और जीवन-रक्षा। यह आवश्यक है कि उसके शरीरकी क्रिया-प्रणाली मल-मूत्रके अवरोध इत्यादिसे बिगड़कर दूषित न हो जाय। उसके मनपर प्रत्येक बातकी छाप पड़ जाती है, इसलिए नियमित आहार इत्यादिकी आदत उसे डालनी चाहिये।

दूसरा कारण है अन्यान्य लोगोंकी सामाजिक सुविधा। यह प्रत्यक्ष है कि यदि हम मनमाने ढंगसे, जहाँ या जब, जो चाहें गन्दगी फैलायें, तो हमारा सामाजिक जीवन स्वच्छ और स्वस्थ नहीं हो सकता।

पैदा होते ही तुम यह नहीं सीख सकते थे। उस समय गन्दगीका ज्ञान ही तुम्हें नहीं था। मल-मूत्र-त्याग करनेपर जो सेहत होती है, तुम्हें बस उसीका ज्ञान था।

पर धीरे-धीरे तुम्हें यह सीखना पड़ा। तुम्हारी होशियार माँ ठीक समयपर तुम्हें पकड़कर बैठ जाती थीं और तुम्हें टट्टी या पेशाब कराती थीं। तुम जब यह कर चुकते थे तब तुम्हारी तारीफ होती थी कि बच्चा कितना होशियार है।

तुम्हारे शरीर और मनको स्वस्थ रखनेके लिए यह होना ही चाहिये था। चूँकि बच्चोंका पहला काम यह है कि वे चाहे जहाँ और जब टट्टी-पेशाब कर दें, इसलिए तुम्हारे बचकाने मनपर यह साफ तौरसे झलक जाना भी जरूरी था कि तुम्हें इस तरह गन्दगी नहीं फैलानी चाहिये जिससे दूसरोंको तकलीफ हो।

दूसरी ओर यह भी बात है कि यदि बच्चा बिछौनेपर या फर्शपर टट्टी-पेशाब कर देता है तो उसे इसके लिए सजा नहीं देनी चाहिये।

वह अभी निरा बच्चा है, इसलिए सम्भव है वह इन बातोंको ठीक-ठीक नहीं सीख सका हो, या टट्टी-पेशाब करना अभी उसके काबूमें न आ सका हो। उसकी ऐसी हरकतके लिए और कोई कारण भी हो सकता है।

जिस तरह पिल्ले घरसे दूर हगना-मूतना सीख जाते हैं उसी तरह यदि ठीकसे सिखाया जाय तो साधारणतया बच्चे भी इन आदतोंको बड़ी जल्दी सीख जाते हैं। पर कितने ही बच्चे सिखाने-पर भी नहीं सीखते।

हम यह बता चुके हैं कि हमारे मनका निचला हिस्सा अर्थात् हमारा अचेतन मन हमसे कभी-कभी ऐसे काम करवाता है जिन्हें करना हमारे चेतन मनको कभी स्वीकार न होता।

बच्चा अपने अचेतन मनको काबूमें रखे—ऐसी आशा नहीं की जा सकती जब कि बहुतेरे सयानोंके लिए भी ऐसा करना कठिन होता है।

मान लो कोई बच्चा किसी कारणसे बेचैन है। शायद कोई बेढंगे तौरसे उसकी टाँगें पकड़कर उसे टट्टी-पेशाब करानेकी चेष्टा कर रहा होगा या ऐसा करनेके बाद किसीने उसे गोदमें ले लिया होगा।

बच्चा उसकी गोदमें टट्टी-पेशाब करके अपना विरोध प्रकट करेगा।

सयाने लड़के-लड़कियोंका भी टट्टी-पेशाब अक्सर सोतेमें बिस्तरपर निकल जाता है। मसानेकी कमजोरी ही इसका कारण है। परन्तु यदि यह कमजोरी न हो तो यह समझना पड़ेगा कि

बच्चेके अचेतन मनमें कोई खराबी है और वह चेतन मनकी आज्ञाके बिना ही किसी तरहका बदला लेनेके लिए ही ऐसी हरकत करता है।

सोये-सोये बिस्तरमें पेशाब निकल जानेका बहुधा यही प्रत्यक्ष कारण होता है। सोतेमें चेतन मनका नियन्त्रण ढीला पड़ जाता है, इसलिए जागतेमें जो बच्चा यह काम कभी नहीं करता, वह नींदमें अपने अन्तर्निहित शक्तिशाली अचेतन मनसे बेबस हो जाता है।

बच्चा जान-बूझकर तो ऐसा करता नहीं, इसलिए उसे सजा नहीं देनी चाहिये, और उसपर दाँत पीसना या भुनभुनाना भी नहीं चाहिये। यह भुनभुनाना भी हानिकर होता है, क्योंकि इससे बच्चा शर्माता है और अपनेको कसूरवार समझता है।

बच्चेके मनमें क्या खराबी है जिसका यह नतीजा है—यही जाननेकी और इसका उपाय करनेकी चेष्टा करनी चाहिये। और भी अच्छा हो यदि माँ-बाप अपने ही हृदयपर हाथ रखकर अपनेसे पूछें कि हम बच्चेके लालन-पालनमें कौन-सी त्रुटि कर रहे हैं जिसका यह नतीजा है?

अध्याय १६

संसारके रहन-सहनसे अभ्यस्त होना

बचपनमें हम जो शिक्षा ग्रहण करना आरम्भ करते हैं वह बराबर जारी रहता है।

तुम अपनी माँ से पृथक् व्यक्ति हो—यह महसूस करनेके बाद तुम्हें धीरे-धीरे प्रकट होने लगता है कि तुम एक परिवारके अंग हो।

घरका आकार-प्रकार तुम्हें साफ नजर आने लगता है। तुम कमरोंको पहचानने लगते हो और बादको अपने चारों ओरकी चीजोंको उलट-पलटकर देखने लगते हो।

यदि तुम्हारे माँ-बाप समझदार हुए तो स्नेह और संरक्षणके नियमोंसे तुम्हारा जीवन संचालित होता है। तुम खतरोंके पास (जैसे आग वगैरहके पास) नहीं जाने पाते हो और जानते हो कि किसी तरहकी तकलीफमें किसकी शरणमें दौड़ना चाहिये।

इन बातोंमें केवल तुम्हींको शिक्षा मिलती हो सो बात नहीं है। यदि तुम्हारे माँ-बाप समझदार हों और विशेषतः यदि तुम्हीं उनकी पहली सन्तान हो, तो वे भी बहुत कुछ सीखते हैं।

यदि तुम रोते-चिल्लाते होगे तो आशा है, तुम्हारी यह आदत छुड़ा देना उन्होंने सीख लिया होगा। अब उन्हें यह सीखना चाहिये कि तुम्हें गलतियाँ करने दिया करें। माता-पिताके लिए यह शिक्षा ग्रहण करना बड़ा कठिन होता है।

बच्चेसे अत्तका स्नेह करनेका जो नतीजा होता है वही स्नेह न

करनेका होता है। स्नेही माता या पिताके लिए कभी-कभी यह समझना कठिन हो जाता है कि बच्चा जब चलता है तब उसका गिरना भी जरूरी है।

बच्चोंकी प्रकृतिके विरुद्ध उनसे कोई काम जबर्दस्ती करानेसे या उन्हें किसी कामसे रोकनेसे, हानि होती है। जो गर्वीली माता अपने बच्चेको जबर्दस्ती चलना सिखाकर उसके भारी-भरकम शरीर का बोझ समयसे पहले ही उसकी टाँगोंपर लादती है और यह दिखाना चाहती है कि इस बातमें वह और बच्चोंसे बाजी मार ले गया वह अपने बच्चेकी टाँगोंको टेढ़ी-मेढ़ी बना देती है।

इसी तरह जो माता अपने बच्चेका गिरना या लुढ़कना बर्दाश्त नहीं कर सकती उसका बच्चा बड़ी देरसे चलना सीखता है। तुम सोचते होगे कि बच्चा दो वर्षतक चलना न सीखे तो हर्ज ही क्या है?

यदि बच्चेकी ऐसी ही प्रकृति है तो कोई हर्ज नहीं—यह मैं मानता हूँ। लेकिन अगर बच्चा बुनियादि तौरपर हिम्मतवर है तो माँ-बापके लाड़-प्यार और ढकोसलोंसे बच्चा अपनेको कमजोर और कोमती समझने लगता है और उसकी बुनियादी हिम्मत जाती रहती है।

अच्छा तो, तुम पेटके बल खिसकते हो, घुटनियों चलते हो, गिरते हो, लुढ़कते हो और फिर सीधे चलने लगते हो। तुम यह देखना चाहते हो कि क्या आग सचमुच जलाती है और तुम उसकी आजमाइश भी कर लेते हो। भाई-बहनों या पड़ोसियोंके बच्चोंसे लड़ाई-झगड़ा होते-होते तुम्हारी समझमें क्रमशः यह बात आने लगती है कि तुम्हारी ही तरह औरों के भी इच्छाएँ होती हैं और उनका अपनी चीजोंपर अधिकार होता है।

धीरे-धीरे तुम्हारा दृष्टिकोण विस्तृत होने लगता है और उसमें

औरोंके घर और परिवारोंकी गुंजायश होने लगती है। इस तरह एकके बाद एक शिक्षा मिलती रहती है और यह क्रम चलता रहता है।

गरीबी और बच्चा

तुम्हारे गृह-जीवनकी पृष्ठ-भूमि क्या थी और दूसरोंके गृह-जीवनसे तुलना करनेमें यह तुम्हें कैसी मालूम हुई? तुम्हारे जीवन-विकासमें अन्यान्य बातोंके साथ इस बातका भी बड़ा गहरा प्रभाव पड़ा होगा।

जिस संसारमें हम रहते हैं वह सभी तरहसे पूर्ण नहीं है।

ऐसा होना कुछ बुरा भी नहीं है, क्योंकि यदि हम सब प्रकारसे पूर्ण संसारमें रहते तो भले-बुरेको पहचाननेकी शिक्षाका कोई साधन न होता और बुरेको भला बनानेका भी कोई उपाय न होता।

दूसरी ओर यह बात है कि हममेंसे बहुतेरे इस संसारको जितना पूर्ण देखना चाहते हैं यह वास्तवमें उससे कहीं अधिक अपूर्ण है। यहाँकी बहुतेरी बातें ऐसी हैं जिन्हें हम चाहें तो बदल सकते हैं।

इन्हीं बातोंमें एक है रहन-सहनकी बुरी हालत। इसके कारण बच्चेको उचित रूपसे शारीरिक और मानसिक विकासका मौका नहीं मिलता।

तुम्हें स्मरण होगा कि प्रत्येक व्यक्तिमें कुछ पैतृक प्रवृत्तियाँ निश्चित रूपसे हुआ करती हैं। हमारे ऊपर जो घटनाएँ घटती हैं, इन प्रवृत्तियोंका विकास उन्हींके अनुसार होता है। यह बात हमारे शारीरिक गठन और आचरण—दोनोंपर ही लागू होती है।

अन्यान्य अनुभूतियोंकी तरह गरीबी और दरिद्रता भी विभिन्न बालकोंमें उनकी आन्तरिक प्रकृतिके अनुसार विभिन्न रूपकी प्रतिक्रियाएं उत्पन्न करती हैं।

अपनी अनुभूतिसे कुछ लोगोंकी प्रतिक्रिया ऐसी होती है कि वे उससे सहम जाते हैं और हार मान बैठते हैं। वैसी ही परिस्थितियोंमें कुछ लोगोंकी ऐसी प्रतिक्रिया होती है कि वे उन परिस्थितियोंसे युद्ध करते हैं और कभी कभी बेहद युद्ध करते हैं।

अतएव तुम यदि ऐसे लोगोंमें हो जिनके जीवनका प्रारम्भ आर्थिक या सामाजिक स्थितिके दृष्टिकोणसे बहुत ही बुरा होता है, तो ऊपर लिखी बातको सदाके लिए स्मरण रखो। यदि तुम्हारी प्रतिक्रिया ऐसी हुई है कि तुम अपनी परिस्थितिसे सहज ही में हार मान चुके हो या उससे युद्ध करनेमें ज्यादती कर चुके हो, तो यही समय है कि तुम अपनेको सम्हाल लो ताकि तुम्हारी प्रतिक्रियाका प्रभाव तुम्हारे जीवनको विषमय न बनाता रहे।

तुम्हें लग सकता है कि सारा संसार तुम्हारे विरुद्ध है और इसलिए तुममें भी उसके प्रति कठोरता आ सकती है। ऐसी अवस्थामें तुम जीवनके प्रति झुँझलाते हुए संसारमें प्रवेश करोगे और हर बातमें मात खाओगे, क्योंकि अपने अन्तस्तलमें तुम मात खानेकी ही आशा किये रहोगे और जिसकी तुम सचमुच आशा करते हो वह बात वस्तुतः होकर रहती है।

अथवा तुम अन्य दृष्टिकोणसे भी इस विषयपर विचार कर सकते हो। कठिनाइयाँ जितनी बड़ी होंगी विजय करनेपर सफलता भी उतनी ही बड़ी होगी। ऐसी अवस्थामें तुम शान्ति और विश्वासके साथ किसी भी उचित कार्यको सम्पन्न करनेकी क्षमता अपनेमें अनुभव कर सकते हो।

पहली कही हुई प्रतिक्रियाको छिपानेके इरादेसे तुम मानों

मकानोंकी छतोंसे चिल्ला-चिल्लाकर सफाई पेश करते होगे कि तुम बड़े भले हो, परन्तु अपने छिपे हुए हृदयमें अर्थात अचेतन मनमें तुम खूब समझते होगे कि इस तरह चिल्लानेकी कोई जरूरत नहीं।

यह भी न सोचो कि निर्धनता ही एकमात्र बुराई है। लोग गरीब घरमें पैदा होते हैं, परन्तु उनके माता-पीता ऐसे अच्छे होते हैं कि धनकी कमीको वे आचरणकी श्रेष्ठतासे पूरी कर लेते है।

विपरीत दृष्टिसे यह बात है कि लोग अमीर घरमें पैदा होते हैं, परन्तु आराम-तलब, बेपरवाह और लाड़-लड़ानेवाले माता-पिताके कारण उनके चाल-चलन बिगड़ जाते हैं।

तुम्हारी प्रारम्भीक कठिनाइयाँ और सुविधाएं चाहें जो भी हों, उनसे फायदा या नुकसान उठाना बहुत कुछ तुम्हींपर निर्भर है।

यदि तुम अपनी आन्तरिक अवस्थापर गौर नहीं करना चाहते और इस ओरसे आँखें बन्द किये हो कि तुम किधर बहे जा रहे हो तो ऊपर लिखी बात तुमपर लागू नहीं होती। मनपर तकलीफोंकी या बेहद लाड़-प्यारकी जो खरोंचे पड़ गयी हैं तुम उन्हींके इशारोंपर चलोगे और यह नहीं जान सकोगे कि ऐसा क्यों होता है।

यदि तुम समय रहते सम्हल जाओ तो कोई जरूरत नहीं है कि ऐसी अवस्था आये।

विषयान्तर हो रहा है, फिर भी मैं एक ऐसे विषयपर अपनी व्यक्तिगत राय दे देना चाहता हूँ जो शायद अपने भविष्यके सम्बन्धमें सोचनेपर तुम्हारे खयालमें भी आया हो।

बहुतेरे लड़के और जवान यह अनुभव किया करते हैं कि उन्हें वैसे मौके नहीं मिले जैसे औरोंको मिले हैं, परन्तु वास्तवमें, सीमा उल्लंघन करनेवाली अवस्थाओंको छोड़कर, अन्य विषयोंमें उनकी यह धारणा निरर्थक है।

यदि तुम्हारा शरीर और मन समुचित रूपसे स्वस्थ है, तुम अपनी आन्तरिक अवस्थाका निरीक्षण करना सीख गये हो और अपनी बुद्धि तथा आचरणका यथासाध्य सदुपयोग करनेकी चेष्टा करते हो तो तुम सदैव सफल होगे।

तुम आजकल सुनते होगे कि धनी होना बड़े सौभाग्यकी बात है। सभी लोग धनी बननेके लिए पागल हो रहे हैं। आजकल पुस्तकों और बायस्कोपके चित्रोंसे तुम्हें साहस और दयाभावकी सराहनेकी इतनी शिक्षा नहीं मिलती जितनी कि शीघ्र धनवान बन जाने और धनाढ्य बने रहनेकी शक्ति प्राप्त करनेकी।

सारा विचार मानों इसी बातपर केन्द्रित है कि तुम किसी तरह धनी बन जाओ, इसकी कोई परवाह नहीं है कि किन उपयोंके अवलम्बनसे, अथवा अपने मनके सन्तोष और शान्तिको किन दामोंपर बेचनेसे तुम्हें धन प्राप्त होगा।

यह बहुत बड़ी भूल है। हममेंसे प्रत्येक व्यक्तिकी 'पैतृक स्मृति" के एक भागमें उचित और अनुचित, भले और बुरेका ज्ञान होता है जिसे विवेक-बुद्धि या साधारणतया अन्तरात्मा भी कहते है। आदिकालसे जो लाखों-करोड़ों भले-बुरे कार्य होते आ रहे हैं उनमें वास्तवमें क्या भला है, क्या बुरा है, क्या गौरवपूर्ण है, क्या गौरवहीन है—इसका स्थूल रूपसे विवेचन करनेमें मनुष्य जाति अब समर्थ हो गयी है।

गंभीर और जटिल नैतिक समस्याओंको छोड़कर अन्यान्य विषयोंमें हम भले-बुरेका भेद बखूबी समझते हैं। हमारे अन्दर कोई बोलनेवाला है जो इस भेदका बतला देता है।

उसकी आवाजपर यदि तुम कान नहीं देते हो तो अपनी, अपने व्यक्तित्वकी और अपनी अन्तरात्माकी बड़ी भारी हानि करते हो। यहीं नरक है। नरककी आग और कुछ नहीं है

सिवाय इसके कि अपनी सद्-असद्-विवेचक-बुद्धिको ठुकराकर अपनी हानि आप करना। यदि तुम इस मूल्य पर संसारका प्रभुत्व भी लाभ करते हो, तो दूसरी ओर अपनी आत्माका हनन करते हो।

यदि इस महत्वपूर्ण बातके सबूतमें तुम बचपनकी किसी घटनाका उदाहरण चाहते हो तो अपनी उस समयकी दशाको याद करो कि तुम्हें कैसी गहरी अनुभूति हुई थी जब तुमने जान-बूझकर कोई गलत या बुरा काम किया था।

कभी कभी ऐसा होता है कि तुम अपने गलत कामोंको बड़े विचित्र ढंगसे ठीक समझ लिया करते हो। मैं अपना ही उदाहरण देता हूँ। बचपनमें, मुझे याद है, मै कुछ दिनों तक छोटी-मोटी चीजें चुराता रहा।

मैं जानता था कि यह काम बुरा है। यह ज्ञान सब बाधाओं-को ठेलता हुआ कैसे आया? मैंने तो इसे स्मृति-कोष्ठमें इस तरह गहराईसे गाड़ दिया था कि मुझे कभी इसकी चिन्ता की न हो। यह ज्ञान तब उदय हुआ जब किसी चीजके चुरानेका झूठा इल-जाम मुझपर लगाया गया, हालाँकि मैंने वह चीज नहीं चुरायी थी। मैं क्रोधसे पागल-सा हो गया।

इतना क्रोध क्यों हुआ? इसलिए कि जिस विवेक-बुद्धिको मैं जबर्दस्ती गाड़कर दबा देना चाहता था वह तब भी जीवित थी। मुझे अपने ऊपर जो क्रोध था वह झूठा इलजाम लगाने-वालेके विरुद्ध दुगुना होकर उभर आया।

अमीरी और गरीबीके इस प्रसंगपर मैं तुम्हें कुछ ऐसी बातें बताना चाहता हूँ जिनपर एक डाक्टरकी हैसियतसे व्यक्ति-गत अनुभवके कारण मेरा विश्वास जम गया है।

इसमें सन्देह नहीं कि इस समय मेरी अवस्था बहुत अच्छी

है, परन्तु यह न समझो कि मैंने गरीबीके दिन नहीं देखे हैं और इस विषयपर मुझे कुछ कहनेका अधिकार नहीं है।

नहीं, ऐसी बात नहीं है। जब मैंने डाक्टरी शुरू की थी तब एक वक्त किसी तरह भोजन कर लेनेके बाद मेरी स्त्री और मैं यह नहीं जानते थे कि दूसरे वक्त रोटी कहाँसे आयेगी। यह सच है कि मेरी अपनी फिजूलखर्ची और गलतियोंकी वजहसे ही मेरी ऐसी फटी हालत हो गयी थी, परन्तु जो हो, हालत मेरी सचमुच खराब थी।

फिर भी जब मैं उन दिनोंको याद करता हूँ तब मुझे यही लगता है कि आजकी अपेक्षा उस समय मैं कहीं ज्यादा आरामके साथ और नियमित रूपसे सच्चा जीवन व्यतीत करता था।

डाक्टरकी हैसियतसे शुरू शुरूमें मैंने साधारण श्रेणीके मजदूरोंमें अनुभव प्राप्त किया। इसमें मुझे सभी तरहके लोग मिले—परिश्रमी, मितव्ययी, दरिद्र, हतोत्साह, इत्यादि।

उनमें कुछ ऐसे थे जिनके रहनेके घर गरीबीकी हालतमें होते हुए भी बड़े साफ-सुथरे थे। कुछ घर ऐसे थे जो घरके नामको बदनाम करते थे। वे जैसे गन्दे और घिनौने थे वैसे ही गन्दे लोग उनमें रहते थे।

परन्तु इन अवगुणोंसे कहीं अधिक जिस बातपर मेरा ध्यान आकर्षित हुआ वह यह थी कि अधिकतर लोग अपनी दीन-हीन दशामें भी बड़ी ईमानदारीके साथ उज्ज्वल जीवन व्यतीत करनेकी चेष्टा करते थे। यही नहीं, इन लोगोंके सन्तोष और सच्चे पारिवारिक सुखको देखकर मैं बहुत प्रभावित हुआ।

हालमें अध्यापक जोडने रेडियोपर एक पुरानी कहावतको दुहराया था—'कमसे कम मुझे सुखमें भी दुःखग्रस्त रहने दिया जाय।'

जब तुम ऐसे लोगोंके जीवनको देखोगे जो मानों सुख और आरामसे जकड़े हुए हैं, तब तुम्हें पता चलेगा कि दम घोटनेवाला अत्तका सुख और आराम बहुत कुछ दुःखका कारण बन जाता है। 'फट पड़े वह सोना जिससे टूटें कान।'

हम यह मानते हैं कि जीवनकी कुछ बुनियादी परिस्थितियों पर सभी लोगोंका एक-सा अधिकार होना चाहिये। जीवनको पीसनेवाली गरीबी और मुसीबतका काम तमाम कर देना चाहिये। परन्तु दम घोटनेवाले सुख और आरामसे भी ठीक उसी तरह जीवनका कौतूहल और आनन्द चला जाता है।

मुझे अपने अनुभवसे यह शिक्षा मिली है कि वस्तुतः मनका सन्तोष और शान्ति सांसारिक विभवसे कहीं अधिक मूल्यवान् है।

आजकल जिन लोगोंसे मैं मिलता हूँ उनमें अधिकतर पैसेवाले है। यह बड़े मार्केकी बात है कि उनमें जो लोग सचमुच सन्तोषी कहे जा सकते हैं उनकी संख्या उँगलियोंपर गिननेलायक है। जब मैं इनकी तुलना उन गरीब लोगोंसे करता हूँ, जिनमें सुखकी सामग्री, मैं देख चुका हूँ कि, नहींके बराबर थी, तब इनकी संख्या नगण्य हो जाती है।

इसलिए यदि बचपनसे अपनी गरीबीके प्रति तुम्हारी प्रतिक्रिया कठोर और आक्रामक रही हो तो उसे त्याग दो। साथ ही, यह सोचकर कि तुम्हें सदा असफलता ही होगी, अपने प्रयत्नोंमें कमी न करो।

अपने भविष्यको देखो, काम करो और खेलो भी, और आत्मनिर्भरतापर विश्वास करो। इस तरह तुम्हें उचित सफलता प्राप्त होगी।

हाँ, 'उचित' सफलता मिलेगी। तुम दिन रात कोल्हूके बैलकी

तरह पिसनेवाले सेठ-साहूकार तो बनना नहीं चाहते जो इस बात-पर घमण्ड करते हैं कि वे पैसा कमानेके लिए नित्य १६ घण्टे काम करते हैं और इस बातमें कोई उनसे बाजी नहीं मार सकता।

ऐसा पिसनेवाला मनुष्य मानों अपने अन्तस्तलमें सामञ्जस्यका अभाव बोध करता है और उसकी घोषणा संसारमें करता है। वह खटता है, पिसता है और इस बातका गौरा करता है क्योंकि उसका व्यक्तिगत जीवन सुखी नहीं हो सका।

जिन मानसिक खरोंचोंका मैंने जिक्र किया था, ये बातें उन्हींके कारण होती हैं। बचपनमें वह मनुष्य शायद बहुत गरीब और दीन-हीन रहा, इसीलिए वह अपनी चालाकीकी डींग मारता है। अपनी कोठी या आफिसमें पिसते रहनेके सिवाय यदि उसे फुरसत नहीं मिलती है और उसके कोई संगी-साथी नहीं हैं तो तुम समझ सकते हो कि अपने मनके अन्दर वह कितना सूनापन बोध करता होगा!

बचपनमें सजा

सभी बच्चोंकी ऐसी गरीबीकी हालत नहीं होती कि उनके मनके विकासपर बुरा प्रभाव पड़े। हाँ, यदि किसी बच्चेके माता-पिता यथेष्ट बुद्धिमान न हुए और वे उसे खामख्वाह सजा देते हों तो भी उसपर बुरा प्रभाव पड़ेगा।

यह सच है कि बच्चोंको संसारमें अन्य लोगोंके साथ मिलकर रहना है और ऐसी कोई हरकत नहीं करनी है कि जिससे औरोंको असुविधा हो।

बचपनके प्रारम्भमें ज्योंही तुम यह महसूस करने लगे कि तुम दूसरोंसे भिन्न व्यक्ति हो त्यों ही तुम्हें यह शिक्षा भी मिलने लगी कि और लोगोंकी इच्छाएं तुम्हारी इच्छाओंसे भिन्न हो सकती हैं। जो तुम्हें अच्छा लगता है वही सदा उनको अच्छा नहीं लग सकता है।

यह शिक्षा हम सभी लोगोंको ग्रहण करनी पड़ती है। यदि यह शिक्षा ठीक तौरसे ग्रहण न की जाय तो हमारा और साथ ही दूसरोंका भी नुकसान होगा।

हमारे ही समान दूसरोंको भी जीनेका अधिकार है। उनका यह अधिकार हमसे ज्यादा नहीं तो कम भी नहीं होना चाहिये। अतएव हमारे पारस्परिक जीवन और तत्सम्बन्धी सारी बातोंमें हमें अभ्यस्त होना चाहिये।

इस विषयमें भी हमें उचित्त अनुचितका ध्यान रखना चाहिये। अपने मित्रोंके साथ वर्ताव करनेमें तुम्हें यह समझना चाहिये कि उनकी हर बातके आगे सिर झुकानेसे वैसा ही नुकसान होगा जैसा कि प्रत्येक विषयमें अपनी बातको सिरे रखनेसे।

परिस्थितिपर बिना विचार किये हर बातमें औरोंके आगे सिर झुका देनेसे फल यह होगा कि और लोग तुमसे अपना मतलब गाँठनेके लिए उत्साहित होंगे। साथ ही, सदा अपनी मन-चाही बात रखनेका हठ करना एक प्रकारकी तानाशाही है। दूसरे शब्दोंमें यह कहा जा सकता है कि हमें न तो ऐसा दरवाजा बनना चाहिये जो दूसरोंके लिए सदा बन्द रहे और न ऐसा पाँव-पोंछ बनना चाहिए जिसपर जो चाहे पैर रगड़े।

अवसरके अनुसार हमें आदान-प्रदानकी शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये। बहुत छोटी अवस्थामें तुमसे यह आशा नहीं की जा सकती कि तुम इस बातको तुरन्त ठीक-ठीक समझ जाओगे।

जब तुमने पहले-पहल अपने अस्तित्वको महसूस किया होगा उस समय यह स्वाभाविक ही था कि तुमने प्रत्येक वस्तुको अपने ही दृष्टिकोणसे देखा होगा।

दुर्भाग्यवश बचपनकी उस अवस्था तक यह बात सीमित नहीं रहती। बहुतेरे बड़ी उम्रके लोग, जिनमें कुछ माता-पिता भी शामिल है, इस विषयमें निरे बच्चे ही बने रहते हैं क्योंकि वे अपने सिवाय और किसीके दृष्टिकोणसे किसी वस्तुको नहीं देख सकते हैं।

संसारमें इसी तरहके बड़ी उम्रके सब बच्चे ही हो जायँ तो सभीको तकलीफ होगी। इसे रोकनेके लिए यदि आवश्यकता हो तो, स्वार्थी बच्चेको उसके दुष्ट व्यवहारके कारण न्यायतः अवश्य दण्ड मिलना चाहिये।

बुद्धिमान माता-पिता बच्चोंसे बदला लेनेकी नीयतसे उन्हें सजा नहीं देते। जब तुम्हारा पालतू पिल्ला घरमें टट्टी-पेशाब कर देता है तब तुम बदला लेनेके लिए उसे नहीं मारते, बल्कि उसके मनपर इस बातको बैठा देना चाहते हो कि ऐसे बुरे कामका नतीजा मार है।

जो बच्चा बार बार समझानेपर भी स्वार्थवश किसी तरहका बुरा काम करता है, उसे दण्डकी शिक्षा मिलनी चाहिये। तुम्हें शायद इस तरहके दण्डपर विश्वास नहीं होगा, परन्तु आगे चलकर इससे तुम्हारी भलाई ही होगी। यदि अभी तक तुमने औरोंकी इच्छा-अनिच्छाका ख्याल रखना नहीं सीखा है तो आगे चलकर स्वयं तुम्हारा जीवन तुम्हें यह पाठ बड़ी कठोरतासे पढ़ायेगा।

अब तुम मेरे विषयमें सोचते होगे कि ये भी बच्चोंके पिता हैं, इसलिए ये हमारे प्रति भी अपने छिपे हुए अस्त्रका प्रयोग कर

रहे हैं। परन्तु मैं विश्वास दिलाता हू कि मेरा ऐसा विचार नहीं है। आज मैं पिता हूँ, परन्तु कभी मैं बालक भी था और मुझे अपने बचपनकी सब बातें बखूबी याद हैं। दोनों ही पक्षकी ओरसे बहुत कुछ कहा जा सकता है।

मेरा इस बातपर पूरा विश्वास है कि दूसरोंके बीचमें बच्चेको किस तरहसे रहना चाहिये इसकी शिक्षा उसे अवश्य मिलनी चाहिये। दूसरी ओर यह बात है कि उसे खामख्वाह सजा नहीं देनी चाहिये, खासकर ऐसी सजा जो अन्यायपूर्ण या मूर्खतापूर्ण हो। इससे बच्चेके मनपर अमिट छाप बैठ जाती है।

मैं जहाँ तक समझता हूँ, तुम्हें कोई ऐसे मूर्खतापूर्ण दण्ड नहीं भुगतने पड़े होंगे जिस तरहके दण्ड आजसे ५० वर्ष पहले अनजान लोग अपने अभागे बच्चोंको दिया करते थे।

सम्भव है इस तरहकी सजाएँ भी तुम्हें मिली हों, क्योंकि आज भी बहुतेरे बड़े लोग यह नहीं समझते हैं कि बच्चोंके मनकी क्रिया कैसी होती है और उस तरहकी सजाओंसे उनको कैसी स्थायी हानि हो सकती है।

बच्चेको ऐसी सजा देना जैसे, अंधेरी कोठरीमें बन्द कर देना या हौआका डर दिखाना, उसके मनपर डरकी छाप बैठा देता है। उसके जीवनमें आगे चलकर यही छाप अकारण ही डरपोकपनका कारण बन जाती है।

तुम्हारे छोटे भाई या बहन तुम्हें चाहे जितना दिक क्यों न करें—वे दिक अवश्य ही करते होंगे—परन्तु तुम उन्हें कोठरीमें बन्द न करना और सदा इस बातको याद रखना।

अन्यायपूर्ण दण्डका भी बड़ा बुरा प्रभाव बच्चोंपर पड़ता है। मैं समझता हूँ कि हममें बहुतेरे लोगोंको कुछ वैसे मौके याद होंगे जब उन्हें बेकसूर सजा मिली थी। उस समय उन्हें कितना दुःख

और क्रोध हुआ होगा। दुःखका सबसे बड़ा कारण यह होगा कि वे अपने हृदयमें इस बातको जानते थे कि जब सचमुच कसूर किया था तब सजासे बच गये थे।

जो माता-पिता भूलसे अन्यायपूर्ण दण्ड दे बैठते हैं, मैं उनके पक्षमें भी दो-एक शब्द कहना चाहता हूँ।

माता या पिता चाहे जितने सावधान क्यों न हों, उनके लिये यह सदा संभव नहीं होता कि वे परिवारके अन्दरूनी झगड़ोंका नपा-तुला ठीक-ठीक इन्साफ कर सकें।

अपने माता-पितासे उच्च श्रेणीके आदर्शज्ञान और आचरण-की आशा रखना तुम्हारे लिए स्वाभाविक है, परन्तु तुम्हें याद रखना चाहिये कि आखिर वे भी मनुष्य ही हैं और ऐसे मनुष्य हैं जो अभी जीवनकी बहुत-सी बातें सीख रहे है।

इसलिए कभी-कभी बेकसूर बच्चेको भी सजा मिल जाती है, खासकर ऐसे घरमें जहाँ एकसे अधिक बच्चे होते हैं। बिना कसूर सजा पानेपर बच्चेके मनमें बाप या माँके विरुद्ध उनकी बेइंसा-फीके लिए कठोर हिंसा-सी जाग सकती है।

शायद तुम्हारे जीवनमें भी ऐसी ही कोई घटना हुई होगी और उसकी तुम्हें याद होगी। शायद अपने भाई या बहनपर कसूर लादनेके सिवाय उस सजासे बचावका और कोई रास्ता न रहा हो।

ऐसी अवस्थामें मेरी सच्ची राय तो यही है कि सजा चुपचाप सह लेनी चाहिये और किसी तरहकी हिंसाका भाव मनमें नहीं लाना चाहिये, क्योंकि तुम इतने बड़े हो गये हो कि माँ-बापकी इस गलतीका कारण समझ सकते हो।

तुम देखते हो कि ज्यों ही तुम जरा सयाने होते हो त्यों ही अपने परिवारके एक सदस्य या अंग बन जाते हो। इस सद-

स्यतासे तुम्हें कुछ विशेष अधिकार और सुभीते प्राप्त हो जाते हैं।

जिस तरह तुम्हें अपने माता-पितापर हक है उसी तरह उन्हें भी तुम्हारे ऊपर कुछ हक है। तुम सदा लेते ही जाओ और कुछ बदलेमें दो नहीं—ऐसा नहीं हो सकता।

यह आदान-प्रदान जीवनका एक प्रधान तथ्य, एक प्राकृतिक नियम है। जिस तरह पहाड़ोंपर वर्षा करनेके लिए सूर्यकी किरणें समुद्रसे पानी खींचती हैं यह भी उसी तरहका प्राकृतिक नियम है।

चाहे कोई वस्तु हो या स्नेह हो—तुम सदा लेते ही जाओ और दो नहीं—इस तरह तुम्हारे जीवनका निर्वाह नहीं हो सकता। यदि तुम अपने जीवनको एक तरफको सवारी जाने देने-वाली सड़क बनाना चाहते हो अर्थात् सिर्फ लेना ही लेना चाहते हो और कुछ देना नहीं चाहते, तो तुम्हारी यह एक-तरफा हरकत थोड़े ही समय तक चल सकती है। इससे हमेशा काम नहीं चलनेका।

यही बात तुम्हारे घरेलू जीवनपर भी लागू है। तुम्हें अपने माता-पिताके स्नेहपर पूरा हक है और बहुतसे घरोंमें यह हक पूरे तौरसे अदा किया जाता है। तुम्हें उनकी सावधानी और यत्नपर पूरा हक है और बहुतसे घरोंमें माता-पिता अपने औका-तके मुताबिक बच्चोंको भोजन, वस्त्र इत्यादि देकर और उनके बीमार पड़नेपर उनकी दवा-दारू और सेवा-शुश्रूषा करके उस हकको अदा करते हैं।

परिवारके एक अंग होनेके नाते तुम्हें भी इसके बदलेमें कुछ देना चाहिये। तुम अब इतने बड़े हो गये हो कि इस बातको बखूबी समझ सकते हो। हाँ, बचपनमें तुम्हें यह बात सिखानी पड़ती थी।

यदि परिवारके सब सदस्य स्नेहका बदला स्नेहसे और सहायताका बदला सहायतासे दिया करें, तो वह परिवार जीवनका एक प्रबल और महत्वपूर्ण संगठन बन जायगा। यह संगठन ठीक उसी तरहका होगा जिस तरह एक अकेले एमीबाके बजाय अनेक जीवाणु-कोष्ठोंने मिलकर जीवन-क्रमका संगठन किया था।

यदि तुम अपने पारिवारिक जीवनमें इस लेन-देनको ठीक तौरसे सीख चुके हो, तो तुम वस्तुतः अपने सामाजिक और सांसारिक जीवनमें आदान-प्रदानकी अर्थात् एक सच्चे नागरिक बननेकी, शिक्षा प्राप्त करनेके मार्गपर अग्रसर हो रहे हो।

मनुष्य-समाजमें जीवन व्यतीत करनेकी शिक्षा देनेके उद्देश्य से ही सजा बुद्धिमानीसे और बिना किसी तरहकी हिंसाकी भावनाके देनी चाहिये। अभी छुटपनमें और आगे चलकर पिता होनेकी अवस्थामें इस तथ्यको अच्छी तरहसे समझ लेना हितकारी होगा।

क्षणभरके लिए पढ़ना बन्द कर दो, आँखें मींच लो और सोचो कि तुम्हारे जीवनमें घरेलू शिक्षा-दीक्षामें यह नियम कहाँ तक काममें लाया गया है। तात्पर्य यह है कि क्या इसी सिद्धान्त-पर तुम्हारा लालन-पालन हुआ है या तुम्हारे मनमें अभीतक यह बात बसी हुई है कि तुम्हारे साथ बे इन्साफी की गयी है?

तुमने सोच लिया? ठीक है। यदि अभी तक तुम्हारे मनमें यह बात बैठी हुई है कि तुम जिस कामको निर्दोष मनोरंजन या दिलबहलाव समझते थे, तुम्हें उसके लिए मना किया जाता था या व्यर्थ ही सजा दी जाती थी, तो मैं तुम्हें इसका एक अन्तिम कारण बताऊँगा।

तुम्हारे माता-पिता मनुष्य है। यह मैं पहले भी कह चुका हूँ, परन्तु इसे तुम्हें पूरे तौरसे महसूस करना चाहिये।

जिस समय तुम्हारे माता-पिता बच्चे थे, उस समय उनपर सचमुच बड़ी कड़ाईकी जाती रही। वे अदब-कायदेसे रहते थे, उनके मुंहसे आवाज नहीं निकलने पाती थी, उनका बहुत कम मन-बहलाव होता था, और वे अपनेको परिवारके पूर्ण-अधिकारी सदस्य नहीं बल्कि आश्रित जन समझते थे।

इसीलिए आज संसारमें ऐसे अनेकों माता-पिता हैं, जो ऐसे हानिकारक ढंगसे पाले-पोसे जानेके कारण, अपने माता-पिताकी गलतियोंको अपने बच्चेपर दुहराया करते हैं। वे बड़े हुए परन्तु उन्हें अपने मनको निरीक्षण करनेकी और अपने पालन-पोषणके परिणामको देखनेकी शक्ति नहीं प्राप्त हुई, क्योंकि उन्हें ऐसी शिक्षा ही नहीं मिली।

निहायत दर्जेकी हालतमें यही होता है कि बचपनमें उन लोगोंने जो मुसीबतें झेली थीं, उनका बदला वे अपने बच्चोंसे लेते हैं। उनका अनियन्त्रित अचेतन मन उन्हें अपना बदला लेनेके लिए उकसाता है। यदि वे अपनी हरकतको ठीक-ठीक महसूस करते, अर्थात् यदि वे अपने विवेकशील चेतन मनके द्वारा अचेतन मनकी क्रियाओंको रोकनेकी शिक्षा प्राप्त किये हुए होते, तो अपने कार्यपर आप भयभीत होते।

ऐसी निहायत दर्जेकी हालत कभी कहीं होती है। परन्तु जब भी ऐसी बात हो तब बुद्धिमान् बालकको इसका कारण समझ लेना चाहिये। इस समझदारीसे ऐसी गलतीको क्षमा करना सम्भव होगा और यह भी सम्भव होगा कि जब वह बालक स्वयं पिता बनेगा तब इस गलतीको नहीं दुहरायेगा।

अध्याय १७

बचपनकी समस्याएँ

जब तुम्हारी उम्र आठ-नौ वर्षकी हो जाती है और तुम अपने सुखी तथा सुसंगठित परिवारके अंग बन जाते हो तब भी तुम्हारा मन कुछ ऐसी उलझनोंमें परेशान हो सकता है जिन्हें तुम अपने-आप नहीं सुलझा सकते।

ऐसी अवस्थामें सम्भवतः तुम्हारी स्वाभाविक प्रवृत्ति पहले यही होती है कि तुम अपनी माता या पितासे इस विषयमें सहायता लेना चाहते हो। यह ठीक भी है।

परन्तु हो सकता है कि उनसे तुम्हें अपने प्रश्नका स्पष्ट उत्तर न मिले, विशेषतः यदि तुम्हारा प्रश्न जनन-क्रियासे सम्बन्ध रखता है तो वे या तो "चुप रहो"—कहकर डाँट देते हैं या ऐसी गोल-मोल बात कहकर टाल देते हैं जिससे तुम्हारी शंकाका समाधान नहीं होता है।

ऐसा होनेपर या तो तुम अपने प्रश्नको अपने ही तक रखते हो या और किसीसे पूछते हो। वह 'और कोई' या तो तुमसे उम्रमें बड़ा और समझदार होता है या बराबरकी उम्रका संगी-साथी।

तुम्हारे मनपर इसका क्या प्रभाव पड़ता है? तुम केवल यही नहीं सोचने लगते हो कि माता-पिता ऐसे प्रश्नोंके उत्तर नहीं दे सकते, बल्कि तुम्हारे मनमें यह बात भी बैठ जाती है कि उनसे ऐसे प्रश्न करना भी अनुचित है।

जब तुम्हारे बच्चा होगा और तुमसे ऐसे प्रश्न करेगा, तब तुम यह याद रखना कि जो माता-पिता बच्चेके प्रश्नोंका समझमें आने-लायक उत्तर नहीं देते वे अपना और उसका—दोनोंका ही अहित करते हैं।

माता-पिता और बच्चेमें जो परस्पर विश्वास होना चाहिये, वे उसे नष्ट करके अपनेको और बच्चेको नुकसान पहुँचाते हैं। बच्चेको इससे यह भी हानि होती है कि वह मनमें अपनेको अपराधी समझकर बेचैनी महसूस करता है, मानों किसी बातका ज्ञान प्राप्त करनेके लिए कुछ पूछना पाप है।

यदि तुम उन बालकोंमें हो जो अपने सवालोंका साफ-साफ जवाब माता-पितासे नहीं पाते हैं और उनसे ऐसी बातें पूछनेके लिए मन-ही-मन शर्माते है, तो मेरे कहनेसे तुम पिछले अध्यायके कुछ अन्तिम पैराग्राफ एक बार फिर पढ़ो।

और फिर यह समझनेकी कोशिश करो कि यदि कुछ प्रश्न पूछनेपर तुम्हारे माता-पिता झुँझला जाते हों, तो इसका कारण यही है कि जो बातें तुमने पूछी हैं, वे बातें उनके अपने बचपनमें उन्हें ठीक तरीकेसे और समझदारीके साथ नहीं बतायी गयी थीं।

उनका मन उसी समय क्षतिग्रस्त हो चुका था। उनके मनमें यह भाव बैठ गया था कि उन्हें बचपनमें जिन प्रश्नोंका उत्तर नहीं मिला वे प्रश्न कदापि नहीं पूछने चाहियें। वे अपने इस भावको इतने दिनोंके बाद बदल दें—ऐसी आशा तुम्हें नहीं करनी चाहिये।

जब एक बार माता-पिता और बच्चेका पारस्परिक विश्वास उठ जाता है, तब उसका फिर पैदा होना कठिन हो जाता है। बच्चा अपने साधारण विचार और अनुभव भी माता-पितासे

छिपाने लगता है और अपने मनकी बातें दूसरे लोगोंसे कहने लगता है। ये लोग अच्छे भी हो सकते हैं और बुरे भी।

बच्चा जब यह देखता है कि उसके माता-पिता वर्त्तमान कालकी समस्याओंके लिए वे ही पुराने सड़े-गले विचार काममें लाते हैं जिनका परिणाम अच्छा नहीं होता, तब वह सोचने लगता है कि मेरे जीवनकी समस्याओंसे मेरे माता-पिताका जरा भी लगाव नहीं है।

माता-पिता और बच्चेके बीचमें जो एक खाई-सी सदा मालूम देती है, इन बातोंसे वह और भी बढ़ जाती है।

अवस्थामें छोटे और असहाय बच्चे होनेके कारण यह स्वाभाविक ही है कि तुम चाहे जो करो, या चाहे जो सोचो, प्रत्येक विषयमें तुम्हारी आँखें अपने माता-पिताकी ओर उठती हैं। बच्चेको सयाना मनुष्य ऐसा दिखायी देता है मानो वह कोई देवता है, जब जो चाहे कर सकता है।

ज्यों-ज्यों तुम बड़े होते हो, त्यों-त्यों धीरे-धीरे समझने लगते हो कि बात ऐसी नहीं है। परन्तु अपने माता-पिताके सम्बन्धमें तुम्हारी यह धारणा बनी ही रहती है और उन्हें तुम मनुष्य नहीं देवता ही मानते रहते हो।

यहीं तुम भूल करते हो।

यदि माता-पिता और बच्चे समझ लें कि हम सभी मनुष्य हैं, हमसे गलतियाँ हो सकती हैं और हममें साधारण मनुष्योचित भावनाएँ भरी हैं, तो उनका आपसका सम्बन्ध बड़ा अच्छा बना रहे।

ऐसा हो तो वे एक दूसरेसे बहुत बड़ी आशा नहीं करेंगे और इसलिए एकको दूसरेसे निराश भी नहीं होना पड़ेगा।

बच्चेके लिए यह सम्भव होना चाहिये कि उसके मनमें जो

विचार उठें वह उन्हें बेखटके अपने माता-पितासे कह सके, उसे यह डर न होना चाहिये कि हमारी बात सुनकर उनके हृदयको धक्का लगेगा या वे अचम्भेमें आ जायंगे।

जब तुम अपने चतुर्दिक फैले हुए संसारकी वस्तुओंमें दिल-चस्पी लेते हुए बड़े होते हो, तब तुम अपनी शंकाओंको आप हल करनेकी चेष्टा करते हो।

"बच्चे कैसे पैदा होते हैं? संसार कैसे बन गया? क्या तलाक देना कोई अच्छी बात है? ईश्वर कहाँ है?"

जनन-क्रिया, धर्म, नीति इत्यादिसे सम्बन्ध रखनेवाले इस तरहके नाना प्रश्न अवश्य ही तुम्हारे मनमें उठा करते हैं। कोई कारण नहीं है कि इनके विषयमें तुम अपने विचार आप ही न स्थिर करो। परन्तु मैं तुम्हें यह सलाह जरूर दूँगा कि अपने निष्कर्षोंको तुम चाहे जितना ठीक समझो और दूसरोंके सिद्धान्तों-को गलत मानो, परन्तु अपने मनमें इतनी जगह जरूर बनाये रहो कि कोई सच्ची बात सामने आये तो उसे ग्रहण कर सको और जरूरत पड़े तो अपनी राय बदल सको।

अपने जीवनमें हमें कितनी तरहकी शिक्षाएँ मिलती हैं और इन शिक्षाओंके लिए कितनी तरहके अवसर आते हैं जिनका हिसाब नहीं। अतएव नये-नये तथ्योंसे केवल इसलिए आँखें फेर लेना कि वे हमारे माने हुए सिद्धान्तोंके अनुकूल नहीं हैं, निरी मूर्खता है।

तुम्हें शायद इस बातका अनुभव होगा कि जब तुमने इन विषयोंपर अपना विचार अपने माता-पिताके आगे प्रकट किया तब उन्होंने ऐसा तीखा और डपटकर जवाब दिया होगा कि सिवाय चुप कर जानेके और कोई चारा ही न रहा होगा।

बहुतेरे बच्चे बहुत छोटी उम्रसे ही यह समझ जाते हैं कि

माता-पितासे कोई बात बहुत सावधानीके साथ कहनी चाहिये। इसीलिए वे अपने मनकी बात अपने ही तक रखते हैं। तब फिर उनकी माँ किसी चाची या तायीसे शिकायत करती है कि 'मुनुआ मुझसे कुछ कहता ही नहीं।'

इस तरहकी शिकायत करनेवाले माता-पिता खुद ही कसूरवार होते हैं।

न तो माता-पिता देवता हैं और न बच्चे अक्लके पुतले हैं क्योंकि उन्हें अभी जीवनमें अनेकों अनुभव प्राप्त करने हैं।

जो माता-पिता बुद्धिमान् होते हैं वे अपनी सन्तानको भी बुद्धिमान् बनाते हैं।

यदि माता-पिता बच्चेका केवल इसी विषयमें पथ-प्रदर्शन कर सकें कि उसे क्या सोचना-विचारना चाहिये और किन बातों-पर विश्वास करना चाहिये तो उन्हें इसका बड़ा अच्छा एवज यह मिलेगा कि बच्चा अपने मनकी बात कहनेके लिए गैरोंको नहीं ढूंढ़ेगा।

जब बच्चा देखता है कि उसके प्रश्नोंका सीधा-सादा उत्तर बिना किसी झुंझलाहट या अचम्भेके दिया जाता है तब अपने परिवारसे उसका पूरा समझौता हो जाता है और इससे उसका बड़ा फायदा होता है।

यह ऐसी चीज है जो पारिवारिक जीवनकी जड़में पैठ जाती है। इसलिए जब बच्चा अपने अनन्त प्रश्नोंको पूछना आरम्भ करे, तब जीवन-पथके थके-हारे माता-पिताको थोड़ा धैर्यसे काम लेना चाहिये।

यदि घरमें बच्चेको अपके प्रश्नोंका सन्तोषजनक उत्तर नहीं मिलता है और वे प्रश्न उसके माथेमें चक्कर लगाते रहते है, तब वह उत्तरके लिए गैरोंको ढूँढने लगता है।

मैं कह चुका हूँ कि यह गैर आदमी अच्छा भी हो सकता है और बुरा भी। यदि यह उम्रमें बड़ा और समझदार हुआ तो ज्यादा नुकसान नहीं होगा। परन्तु होता यही है, जैसा कि शायद तुम्हारे सम्बन्धमें भी हुआ हो, कि बच्चे अपने सरीखे दूसरे बच्चोंसे ही उन प्रश्नोंको पूछने लगते है।

यहाँ वही बात होती है कि 'अन्धेको रास्ता दिखाने चला अन्धा'। यदि ये 'दूसरे बच्चे भी अपने प्रश्नोंका सन्तोषजनक उत्तर नहीं पा सके हों तो उन विषयोंमें उनका ज्ञान भी कुछ-नहीं-के बराबर होगा।

यही नहीं, इससे भी बुरी बात हो सकती है। 'दूसरे' बच्चे अपनी स्वाभाविक उत्सुकता मिटानेके प्रयत्नमें बिलकुल उल्टी बात समझ बैठे हों तो उनका 'ज्ञान' अज्ञानकी अपेक्षा कहीं बुरा होगा।

क्या तुमने बचपनमें यह ज्ञान अपने आप प्राप्त नहीं किया था?

हो सके तो याद करो कि अपने किसी संगी-साथीसे अमुक-अमुक विषयपर बहस करते हुए तुम्हें लज्जा और अपराधका अनुभव हुआ था या नहीं?

तुम्हारी शायद यह जाननेकी बड़ी इच्छा रही हो कि बच्चे कैसे पैदा होते हैं। बच्चोंका यह स्वाभाविक प्रश्न होता है।

पूछनेपर तुम्हारे माता-पिताने या तो कोई मनगढ़न्त बात बतला दी हो या यह कह दिया हो कि अभी बच्चे हो, इन बातोंको नहीं समझोगे। एक दिन अकस्मात् तुम्हें मालूम हुआ कि तुम्हारा अमुक साथी भी वही बात जानना चाहता था पर उसकी माँ या बापने तुम्हारी ही तरह उसे भी टाल दिया।

यह समझते हुए भी कि इस सम्बन्धकी बातचीत करना

अपराध है, तुम दोनों मित्र कुछ दुष्टता और साहसके साथ इस विषयमें अपनी अपनी अक्ल लड़ाते होगे और गलत विचारोंका आदान-प्रदान करते होगे।

यदि अपराधकी वह भावना तुम दोनों मित्रोंके मनमें ऐसी जमकर बैठ गयी हो कि आज भी तुम लोग उत्पादन-क्रियाको मन अपवित्र करनेवाली बुरी वस्तु समझते हो, तो यह सचमुच सौभाग्यकी बात है। छोटी उम्रमें मनपर कोई ऐसा दाग बैठ जानेसे बहुतेरे भावुक बालक जनन-प्रणालीको बहुत ही भयंकर वस्तु समझने लगते हैं।

ऐसी समझका होना कितनी मूर्खता है जब बच्चेका गर्भमें आना और जन्म लेना प्रकृतिका एक बहुत बड़ा चमत्कार है और मनुष्योंके स्नेह बंधन तथा सुखी और फूलते-फलते परिवारके दृश्यके जैसी और कोई सुन्दर वस्तु है ही नहीं।

तुम्हारे लिए ये संसारकी सबसे अधिक सुन्दर वस्तुएँ होंगी परन्तु यदि तुम इन्हें अपने माता-पिता और शिक्षकोंकी भूलोंके कारण नष्ट हो जाने दोगे तो यह तुम्हारी बड़ी भयंकर मूर्खता होगी।

तुम पूछ सकते हो कि उनकी भूलोंसे ऐसा क्योंकर हो सकता है?

मैं आशा करता हूँ कि तुम्हारे ऊपर ऐसी घटना नहीं घटी होगी। परन्तु तुम उस पौधेकी बात याद करो जिसपर पड़ा हुआ निशान हमेशा बढ़ता रहता है।

जिस बालकको कोई प्रश्न पूछनेके कारण लज्जित होना पड़ता है वह उस प्रश्नकी स्मृति और लज्जाके भावको अपने मनके निम्न गर्तमें ढकेल देनेका प्रयत्न करता है।

आगे चलकर वह लज्जाका भाव सिर उठाता है और उस बालककी जिन्दगी खराब कर देता है।

ऐसी लज्जाका सम्बन्ध बचपनकी कितनी ही समस्याओंके साथ है, जैसे,—झूठ बोलना, चोरी करना, छोटे भाई या बहनसे कुढ़ना, पुरुष या स्त्रीके अमुक अंग अमुक प्रकारके क्यों हैं इसे जाननेकी उत्सुकता इत्यादि। ये समस्याएँ चिन्ता-जनक हैं।

इनके अलावा और समस्याएँ भी हैं पर ये, सबसे ज्यादा और सभी बच्चोंको परेशान करती हैं। अपने पिताके प्रति मेरे मनमें जो हिंसावृत्ति जाग उठी थी, जिसका जिक्र मैं कर चुका हूँ, वह भी ऐसी ही एक समस्या थी।

मुश्किल तो यह है कि जिन बच्चोंको इन समस्याओंसे हैरान होना पड़ता है, उनमें बहुतेरे यही सोचते हैं कि बस हमीं दुनियाँमें एक ऐसे हैं जो इस तरह परेशान हो रहे हैं।

पर वास्तवमें बात ऐसी नहीं है।

प्रत्येक बालकको जिन अवस्थाओंसे होकर गुजरना पड़ता है उनमें ये या इनसे भी बढ़ कर दूसरी समस्याएँ सामने आती ही हैं। एक तो स्वतः ऐसी समस्याएँ और दूसरे ऐसी भावनाएँ कि संसारमें हमीं अकेले इनमें उलझे हैं, बचपनके आधे दुःखका कारण बन जाती हैं। यह दुःख कभी-कभी बड़ा ही कठोर होता है।

जब कोई लड़का बुरा कामकर बैठता है तब वह चाहता है कि किसीकी सलाह लें। पर वह किसकी सलाह ले? वह तो समझता है कि मेरे जैसा बदमाश पहले कभी कोई हुआ ही नहीं।

वह ऐसा क्यों सोचता है, इसका कारण है। हममें कोई यह स्वीकार नहीं करना चाहता कि उसने कभी कोई बुरा काम किया

है क्योंकि इससे वह दूसरोंकी नजरोंसे गिर जायगा; परन्तु बुरा काम किया सभीने है।

दूसरी ओर यह बात है कि जब कोई बालक अपने अपराधको मुक्त-कंठसे स्वीकार करता है और अपराधकी प्रवृत्तिको सच्चे जीसे रोकना चाहता है, तब उसे क्षमा कर देना चाहिये।

मेरे कहनेका यह प्रयोजन नहीं है कि जो लड़का सचमुच बदमाश है और एकके बाद दूसरा कसूर करता जाता है उसे सिर्फ इसीलिए सजासे बरी कर दिया जाय कि वह हरएक कसूरको मंजूर कर लेता है। तब तो कसूर मंजूर करना और उसके लिए पछताना झूठ-मूठका ढोंग होगा।

हाँ, सजा उस अवस्थामे नहीं देनी चाहिये जब कोई बालक अपने अपराधको स्वीकार करनेके साथ ही उस अपराधके प्रलोभनको रोकनेके लिए सहायता चाहे। परन्तु उसे वैसी सहायता पानेका भरोसा भी होना चाहिये।

यदि तुम्हारे बड़े-बूढ़े सचमुच तुमसे स्नेह करते हैं और तुम्हारे मनकी अवस्थाको समझना चाहते हैं तो वे तुम्हारे अपराधकी बात जानकर तुम्हें अपनी नजरोंसे नहीं गिरायेंगे। सभी बड़े-बूढ़ोंने अपने समयमें अनेकों अपराध किये हैं और आज जो अपराध तुम्हारी चिन्ताका कारण बना है वह भी उनसे हो चुका है।

आज बड़े-बूढ़ोंने अपराध करनेकी प्रवृत्तिपर जो विजय प्राप्त कर ली है वह इसीलिए कि जीवनकी जिन अवस्थाओंमें ये अपराध हुआ करते हैं वे उन्हें पार कर चुके हैं। छोटेसे बड़े होनेके लिए वे उन्हीं अवस्थाओंसे होकर गुजरे हैं जिनमें आज तुम हो और उनसे भी वे ही भूलें हुई हैं जो आज तुम कर रहे हो।

अन्तिम दो पैराग्राफमें बहुत सरल ढंगसे लिखूँगा। आशा

है, उन्हें पढ़कर तुम्हें अपने बड़े बूढ़ोंके प्रति श्रद्धा और विश्वास होगा।

पहले बताया जा चुका है कि जन्म लेनेके पहले बच्चा नौ महीने माँके गर्भमें रहता है और वहाँ वह बड़ी शीघ्रतासे उन सब अवस्थाओंसे गुजरता है जिनमें होकर हमारी मनुष्य जातिका जन्म हुआ।

जिस विकासके होनेमें लाखों वर्ष लगे वह सारा विकास जब नौ महीनेमें बच्चा पार कर लेता है तभी वह संसारमें जन्म लेनेके और स्वतन्त्र जीवन धारण करनेके योग्य होता है।

फिर भी नवजात शिशु पूर्ण विकसित मनुष्य नहीं होता। जिस तरह उसका शरीर क्रमशः बढ़ता है, उसी तरह उसका मन भी विकसित होता है।

इस विकासमें मन भी मानव-मनकी उन सभी अवस्थाओंसे, बर्बरताकी दशासे लेकर आजकी अवस्था तक गुजरता है।

वास्तवमें मानव-मनके निर्माणके लिए बचपन ठीक वही काम करता है जो काम मानव-शरीरके निर्माणके लिए माताका गर्भ करता है। यह उस विकासकी अवस्था है जो मनुष्यको स्वतन्त्र जीवन व्यतीत करनेके योग्य बनाती है।

विकासकी दोनों प्रणालियोंमें हम सभी लोग शारीरिक और मानसिक विकासकी उन अवस्थाओंसे बड़ी शीघ्रतासे गुजरते हैं जिन्हें हमारे पूर्वजोंको पार करनी पड़ी थी।*

---

*यूरोपके प्राणिशास्त्रविद् बहुत अन्वेषण और अनुसन्धानके पश्चात् इस तथ्यपर पहुँचे हैं कि लाखों करोड़ों वर्षोंमें एमीबासे आरम्भ करके सभी प्रकारके अगणित जीव-जन्तुओंके रूपोंमें क्रमशः विकसित होकर मनुष्य-जातिका आविर्भाव हुआ और गर्भस्थित प्रत्येक मानव-शिशुमें

यदि तुम इस बातको समझ लोगे तो तुम्हारे लिए यह समझना भी आसान होगा कि जो बड़े-बूढ़े अपने बचपनके अनुभवोंको भूल गये हैं उन्हें किसी बच्चेका चाल-चलन क्यों बेमसरफ और गलत जान पड़ता है। बच्चा जिस दुनियाँमें रहता है वह बड़े-बूढ़ेकी दुनियाँसे अलग होती है और उसमें सामाजिक और नैतिक नियम-कानून नहीं होते हैं।

इस मानव-इतिहासकी पुनरावृत्ति होती है, अर्थात् माताके गर्भमें मानव-शिशु बड़ी शीघ्रतासे उन सभी रूपों और अवस्थाओंसे गुजरता है, जिनमें होकर मनुष्य-जातिकी उत्पत्ति हुई। अतएव हम यह कह सकते हैं कि यूरोपके विद्वान् प्रकारान्तसे हमारे पुराणोंके इस कथनकी सत्यताको स्वीकार करते हैं कि चौरासी लाख योनियोंमें भ्रमण करनेके उपरान्त जीव मनुष्य-योनि धारण करता है।

—अनुवादक

अध्याय १८

छुटपनकी पशुता

आदिकालमें मनुष्य पशु-जीवन व्यतीत करता था। उसे इस संसारकी सब वस्तुओंको जानने और समझनेकी उत्सुकता थी। वह प्रायः वस्तुओंको नोच-खसोटकर या तोड़-फोड़कर यह देखा करता था कि ये काहेसे बनी हैं। उसे जीवन-रक्षाके लिए लड़ना पड़ता था। आहार और व्यायामके लिए आखेट करना पड़ता था।

जब बच्चा पशुकी-सी जिन्दादिलीके साथ हुड़दंगा मचाता है और चीजोंको तोड़ता-फोड़ता है, तब वह ऊपर लिखी विकासकी अवस्थासे गुजरता रहता है।

जिस तरह मनुष्य जाति उस पशुकी-सी अवस्थासे सभ्यताकी अवस्थामें आ गयी उसी तरह वह बालक भी नासमझीकी अवस्थाको पार करके समझदारीकी अवस्थामें आ जायगा। अतः उसका ऊधम मचाना स्वाभाविक है। परन्तु उसे यह शिक्षा भी अवश्य देनी चाहिये कि उसका यह आचरण सदा जारी नहीं रह सकता, क्योंकि इससे औरोंको तकलीफ होती है।

छोटे बच्चेको मक्खीके पंख उखाड़ते हुये देखकर बड़ा लड़का नाराज होगा। यह इसीलिए कि बड़ा लड़का कुछ नैतिक बातोंको समझ गया है और उन्हें मानकर चलता है।

इस तरहके बड़े लड़के यह समझ गये हैं कि यदि बलवानोंको निर्बलोंके साथ बुरा बर्ताव करने दिया जायगा, तो संसारमें जीवन

कठिन हो जायगा। वे यह भी समझते हैं कि अन्य जीवोंको भी हमारे समान जीनेका अधिकार है और यदि मक्खी-मच्छड़-जैसे जीवोंको रोगाणु फैलानेके कारण नष्ट करनेकी आवश्यकता हो तो भी उन्हें निष्ठुर होकर सताना नहीं चाहिये।

बच्चेको इन बातोंकी शिक्षा अवश्य मिलनी चाहिए।

बच्चेपर सिर्फ नाराज होनेका कोई नतीजा नहीं। जरूरत इस बातकी है कि बच्चा जो कुछ करता है वह क्यों करता है—इसे समझना चाहिये और उसे ऐसी सजा देनी चाहिये जिससे उसे सामाजिक रीति-नीतिकी शिक्षा मिल सके। विकासकी यह विनाशात्मक अवस्था अपने समयपर आप चली जायगी।

अच्छा हो कि अपनी आदिम पाशविक प्रवृत्तिको चरितार्थ करनेके लिए बच्चेको टूटे-फूटे खिलौने और अंगड़-खंगड़ दे दिये जायँ।

हालमें मेरे एक मित्रने मुझे बताया कि वह बचपनमें अपनी पाशविक प्रवृत्तिको चरितार्थ करनेके लिए अपने छोटे भाईको सताया करता था और इसलिए आज भी वह अपने मनमें बड़ा लज्जित होता है।

मेरे मित्रके माता-पिता बहुत ही नेकनीयत और अच्छे स्वभावके थे परन्तु आधुनिक विचारोंसे बहुत दूर थे। इसलिए घरमें मेल-मिलापके बजाय टन्टे-बखेड़े हुआ करते थे।

जब उसके माता-पिता आपसमें झगड़ते थे तब उसे बहुत बुरा मालूम होता था, परन्तु अवस्थामें छोटा होनेके कारण वह अपना विरोध उनपर प्रकट नहीं कर सकता था, इसलिए उसने इसके लिए दूसरा रास्ता ढूँढ़ निकाला था।

वास्तवमें उसने यह स्वीकार नहीं किया कि वह अपने छोटे

भाईको इसीलिए सताता था कि वह अपने माता-पितापर अपना गुस्सा नहीं उतार सकता था।

जो मनुष्य अचेतन मनकी कार्रवाईके बारेमें कुछ नहीं जानता है वह अपनी इस बुरी प्रवृत्तिको कभी स्वीकार नहीं करेगा। अपने छोटे भाईको सतानेके लिए मेरे मित्रको जरा-जरा-सी बातका बहाना मिल जाता था।

अतएव तुम समझ गये होगे कि मेरे मित्रका अपने माता-पितासे जो मत-भेद हुआ उससे कई तरहके नुकसान हुए। माता-पिताका यह नुकसान हुआ कि उनकी अपने बच्चेसे घनिष्ठता जाती रही। बच्चेके भी कई नुकसान हुए। माता-पितासे उसकी समीपता जाती रही, अपने भाईसे उसका झगड़ा होता रहा, तब उसे सतानेकी प्रवृत्ति उसमें जाग उठी। बचपनकी इस पशु-प्रवृत्तिकी अवस्था बीत जानेके बहुत दिन बाद भी वह इस बातको सोचकर लज्जित होता रहा कि वह व्यर्थ ही अपने भाईको सताया करता था। शायद उसके भाईका भी यह नुकसान हुआ कि बराबर सताये जानेका डर उसके मनमें समा गया।

इस तरहके या इससे मिलते-जुलते अनुभव हम सभी लोगोंको हो चुके हैं। यदि हम अपने बचपनकी पशु-प्रवृत्तिके कारण अपनेको दोषी समझते हैं, तो अब हम उसका कारण भी समझ सकते हैं कि वह हमारे विकासकी एक अवस्था थी। आज हम उसे पार करके बहुत दूर निकल आये हैं, इसकी हमें प्रसन्नता होनी चाहिये।

बचपनकी दूसरी समस्याकी चर्चा करनेके पहले मैं इस विषयमें एक बात और कहना चाहता हूँ। कुछ पुस्तकें और फिल्मोंमें हिंसा-वृत्तिको प्रशंसनीय बताया गया है। लुटेरे और जंगली लोग ऐसे दिखाये गये हैं मानों वे आदर्श पुरुष हों।

शरीर और चरित्र दोनोंकी ही शक्ति बड़ी अच्छी वस्तु है, और हमें वह जहाँ कहीं दिखायी दे, उसकी सराहना करनी चाहिये; परन्तु शेक्सपियरने कहा है—

दैत्यका बल प्राप्त करना अमित सुख-आधार है,
दैत्य-सा उपयोग उसका किन्तु अत्याचार है।

'हिंसाके बदले हिंसा'—की प्रशंसा और दूसरोंके जीवन और सुखको हरण करनेके लिए बल-प्रयोगकी सराहना संसारके शैशव-कालकी और हम लोगोंकी बाल्यावस्थाकी वस्तु है।

बाल्यावस्थामें जिनके मानसिक विकासकी गति रुक जाती है उन्हीं लोगोंमें ऐबी, निर्दयी और जनसाधारणके हत्यारे तक पाये जाते हैं।

हमारा कर्त्तव्य है कि विकासकी प्रत्येक अवस्थाको हम और हमारे बच्चे पार करते हुए बड़े और सयाने हों।

याद रक्खो कि जैसे चींटी एक एक कण मुंहमें दबाकर लाती है और अपना भण्डार भरती है, वैसे ही हमारा यह कर्त्तव्य-पालन मनुष्य-जातिके भावी विकासके लिए हमारी ओरसे छोटी-सी सहायता होगी।

यदि मनुष्योंकी पीढ़ियोंपर पीढ़ियाँ आदिकालकी अनैतिक प्रवृत्तियोंको नियन्त्रित करनेके लिए नित्य बढ़ती हुई शक्ति उत्तरोत्तर हस्तान्तरित करती जाय तो एक महामहिम मानव-जातिका आविर्भाव हो सकता है।

बचपनका झूठ बोलना

खास तुम्हारे विषयकी बात कहते-कहते हमने दूसरे विषयकी चर्चा छेड़ दी, परन्तु पिछले विभागको पढ़कर संभवतः तुम्हें

अपने बचपनके आवेश और ऊधमीपनके कारण समझनेमें सहायता मिली होगी। अतएव इससे लाभ ही हुआ।

अब हम बचपनकी दूसरी विशेषतापर आते हैं। यह विशेषता हम सभी लोगोंमें होती है।

मैं समझता हूँ कि अधिकतर लोग बड़े होकर अपने बचपनके आवेशोंपर कुछ नियंत्रण कर लेते हैं, यद्यपि भूल-चूक और गलती फिर भी उनसे हो सकती है। वास्तवमें बहुत बड़ी संख्या उन्हीं लोगोंकी है जिन्हें विनाश और हिंसाकी प्रवृत्तिमें कोई आनन्द नहीं आता।

इससे भी बढ़कर कठिन शिक्षा है सच बोलनेका अभ्यास डालना। हम लोगोंमें बहुत ही कम ऐसे होंगे जो कह सकें कि हम कभी झूठ नहीं बोलते।

इतना ध्यान रहे कि मैं कुछ अवसरोंपर 'सफेद झूठ' को न्यायसंगत समझता हूँ।

तुम मेरी इस रायसे स्तम्भित हो सकते हो। बहुतेरे बालकोंमें विकासकी एक ऐसी अवस्था आती है जब उनका प्रत्येक काम पराकाष्ठाको पहुच जाता है। ये बालक जब निश्चय कर लेते हैं कि हम झूठ नहीं बोलेंगे तब वे सचाईसे तिलभर भी नहीं डिगते, फिर चाहे उसका परिणाम उन्हींके हकमें या औरोंके हकमें कुछ भी क्यों न हो।

सच बोलनेका परिणाम स्वयं अपने ऊपर जो कुछ होता है उसपर ध्यान नहीं देना चाहिये—यह मैं मानता हूँ। परन्तु यदि सच बोलनेसे किसीकी हानि होती हो और वास्तवमें कोई प्रयोजन सिद्ध न होता हो, तो ऐसे अवसरपर मैं सचाईको दूरसे नमस्कार कर दूँगा।

उदाहरणके लिए मान लो कि मेरी एक स्त्री मित्र है। वह

बाल्यावस्थामें यह सोचकर बड़ी दुःखी रहती थी कि मेरी शक्ल बड़ी भद्दी है। वास्तवमें वह भद्दी नहीं थी बल्कि 'बाढ़' या 'उठान'की एक विशेष अवस्थामें थी। स्त्रीत्व प्राप्त करनेके पहले कुछ बालिकाओंमें ऐसी भी एक अवस्था आती है और इसमें उनका रूप-रंग भद्दा हो जाता है।

जब वह बड़ी हुई तब एक बार किसीने उससे कहा—'तुम्हारे हाथ अच्छे हैं।' यह बात उसके लिए उत्साहवर्द्धक थी और उसके छिपे हुए आँसू पोछनेमें सहायक हुई। परन्तु उसे इतनी-सी प्रशंसासे ही सन्तोष नहीं हुआ और वह अपने हाथोंको परम सुन्दर समझने लगी।

यह सोचकर कि 'मैं भद्दी हूँ, बेहूदा हूँ', उसके अभिमानको जो चोट पहले लग चुकी थी उसे मिटानेके लिए उसके हाथोंको 'अच्छे' नहीं बल्कि 'परम सुन्दर' बनना आवश्यक था।

अब यदि वह मुझसे कहे, और सचमुच कभी कभी कहती भी है, कि "मेरे हाथ बड़े सुन्दर है, हैं न ?" तो मैं क्यों हील-हुज्जत करूँ ? आखिर उसके हाथ एक तरहसे बिलकुल ठीक ही है।

यदि वे बिलकुल ठीक न भी होते तो भी मैं उसके विचारमें बाधा नहीं देता क्योंकि मेरे सिर्फ हाँ कहनेसे उसे प्रसन्नता होती है और किसीका कुछ बिगड़ता नहीं है।

अतएव तुम देखते हो कि मैं सच और झूठके विषयमें कोई बहुत कड़ा और अटल नियम नहीं बना रहा हूँ। मेरी समझसे यदि तुम कोई गलती करके उसके परिणामसे अपनेको बचानेके लिए झूठ बोलते हो तो यह एक प्रकारकी कायरता है। परन्तु झूठ बोलकर किसी दूसरेको नुकसान पहुँचाना बेईमानी और बदनीयती है।

इसके अतिरिक्त, यदि तुमने अपने मनको कार्य-पद्धतिका

निरीक्षण करना सीख लिया है तो तुम्हारी अन्तरात्मा स्वतः तुम्हारा पथ-प्रदर्शन करेगी और तुम अन्य अनेक लोगोंकी तरह झूठ बोलकर अपनेको आप धोखा देनेमें सफल नहीं होगे।

अतएव सामाजिक-नीति-सम्मत 'सफेद झूठ' को अपवाद की मान लेनेके बाद हमें चाहिये कि बचपनमें जिस तरहके झूठ हम सभ लोग बोल चुके हैं उसके विषयमें अपने विचारोंको उदार बनायें।

उस समय हम आत्मरक्षाके लिए झूठ बोलते थे। इस तरह-का झूठ हमारे उन आदिम पूर्वजोंसे आयी हुई विरासत है जिनका एकमात्र ध्येय था जीवित रहनेके लिये किसी भी उपायसे अपनी रक्षा करना।

बालक प्रायः इस तरहके झूठ बोला करते है—'यह काम मैंने नहीं, उसने किया है; अम्मा, यह तो अपने आप गिर पड़ा; मैंने इसे खोया नहीं, एक आदमी इसे मुझसे छीन ले गया।

वास्तवमें इस तरहके झूठ बोलनेमें आत्मरक्षाकी प्रवृत्ति काम करती है।

ये झूठ कोई बहुत संगीन नहीं हैं और जो माता-पिता इन्हें अनर्थकारी समझते हैं वे तिलको ताड़ बनाते हैं। इसमें सन्देह नहीं कि बच्चोंको यह शिक्षा अवश्य मिलनी चाहिये कि झूठ बोलकर छोटी-मोटी सजाओंसे बचनेकी अपेक्षा कुछ बड़ी उत्तम बातें हैं जिन्हें उनको सीखना चाहिये।

इनमें एक तो यह है कि यदि प्रत्येक व्यक्ति झूठ बोलने लग जाय तो किसीको असलियतका पता ही न चले। दूसरी बात यह है कि एक निश्चित उम्रके बाद भी झूठ बोलते रहना अपने किये हुए कामोंकी जिम्मेदारीसे भागना है।

अपना कसूर दूसरेके मत्थे मढ़नेसे कहीं अच्छा है सजा भोग लेना और उससे शिक्षा ग्रहण करना।

आत्मरक्षाके लिए जो झूठ बोला जाता है उसके अलावा भी बचपनके कई तरहके झूठ होते हैं। इनमें एक तरहका झूठ तो ऐसा है जो प्रायः सभी बच्चे बोलते हैं। इसकी उत्पत्ति भी आदिकाल-की एक प्रवृत्तिसे हुई है। यह प्रवृत्ति है आत्ममहत्ता या आत्म-प्राधान्यस्थापन।

जो हो, इसका होना स्वाभाविक है। बचपनमें तुम जब-तब अपना महत्व, अपना बड़प्पन, दूसरोंके मनमें बैठना चाहते थे। आखिरकार बच्चा एक छोटा-सा जीव होता है। सोचो, वह अपनेको क्या समझता है?

मान लो बचपनमें तुमने अपने किसी संगी-साथीपर रोब जमाया हो—"मेरे पिता बड़े अमीर हैं और उनके लड़के होनेके नाते मेरा क्या कहना है!" अथवा अपने चाचाकी पुरानी 'फोर्ड' मोटरकारको तुमने नयी चमचमाती रोल्स-रायस बताकर डींग हाँकी हो। इन बातोंसे तुम्हारे अभिमानको सहायता ही मिली होगी।

जबानसे या सिर्फ हरकतसे ही इस तरहका झूठ बोला जा सकता है।

जब मैं छोटा था तब मुझे 'बन' नामक मिठाईके लिए एक अधन्ना मिलता था। उन दिनों एक अधन्नेकी आजसे कहीं ज्यादा कीमत थी। आज एक अधन्नेमें आधा 'बन' भी नहीं मिलेगा और उन दिनों जहाँ तक मुझे याद है, पैसेमें दो 'बन' मिलते थे।

मेरे संगी-साथियोंको जेब-खर्चके लिए इससे ज्यादा मिलता था। पता नहीं क्यों मुझे इससे बड़ी डाह होती थी। या तो मुझसे कभी कुछ कहा गया होगा या मेरे मनसे ही कोई बात उपजी होगी जिससे मैं अपनेको उनकी तुलनामें गरीब और नाचीज महसूस करने लगा।

खैर, मुझे याद है, मैं सबकी आँख बचाकर खेलके मैदानमें इस इरादेसे कई बार गया कि कहीं किसी लड़केका फेंका-उछाला हुआ 'बन' मुझे मिल जाय।

मैं 'बन'का भूखा नहीं था। भूखका तो प्रश्न ही नहीं था। मैं केवल इस बातका बहाना करके कि मेरे पास बेइन्तहा 'बन' हैं और बहुत पैसे भी हैं मैं यह जतलाना चाहता था कि मैं अपने साथियोंसे बड़ा नहीं तो कुछ छोटा भी नहीं हूँ।

कुछ लोग उम्रमें बड़े होकर भी ऐसी ही हरकतें बड़े पैमानेपर किया करते हैं। ये लोग कितने ही विषयोंमें अपना बड़प्पन जतलाते रहते हैं। इसका कारण यही है कि अन्दरसे वे अभी तक बच्चे ही बने हैं और उनके मनपर अभावकी खरोंच लगी हुई है।

बहुतेरी स्त्रियाँ जो तड़क-भड़कदार कपड़े पहनती हैं, वह इसलिए नहीं कि उन्हें इनसे कोई खास आराम मिलता है, बल्कि इसलिए कि वे संसारको अपनी सजावट दिखाना चाहती हैं।

ऐसी स्त्रियोंपर तरस आता है। ये भीतरसे उन्हीं बच्चियों-सी बनी हैं जो किसी कारणसे अपनेको औरोंसे नीची समझती हैं और इस मनोभावपर विजय नहीं पा सकतीं।

यदि ऐसी स्त्री अपने मनका निरीक्षण करना और समयपर उसे रास्तेपर लाना बचपनमें ही सीख जाती, तो वह जिस अवस्थामें होती, उसे उसीमें सन्तोष रहता; उसे अपनी हीनताके लिए खेद प्रकट करनेकी या अपनी यथार्थ अवस्थापर पर्दा डालकर झूठे दिखावेकी आवश्यकता न होती।

यदि तुम इस विषयमें बचपनका उदाहरण चाहते हो तो मैं झूठे दिखावेका एक दृष्टान्त देता हूँ।

मान लो तुम पढ़ने-लिखनेमें तेज थे पर स्पोर्ट और खेल-कूदमें कमजोर थे। ऐसी अवस्थामें जैसा कि होता है, तुम पढ़ने-लिखनेमें और भी कड़ी मेहनत करते थे और क्लासमें उत्तर देनेके लिए सबसे पहले कूदा करते थे। इस तरह तुम यह दिखाते थे कि तुम पढ़ाईमें बहुत तेज-तर्रार हो। तुम अपने मनमें तथा दूसरोंसे कहा भी करते थे कि 'खेल-कूदमें क्या धरा है ?'

यह भी सम्भव है कि तुमने दूसरा रास्ता अख्तियार किया हो। खेल-कूदमें तुम बहानेबाजीसे अपनेको और दूसरोंको धोखा दिया करते थे।

यदि ऐसा था तो तुम्हारी अवस्था उन्हीं बड़े व्यापारियों-जैसी थी जो अपना उल्लू सीधा करनेके लिए सभी तरहके उपाय काममें लाते हैं और जिनका मुँह पैसेके कारण सभी जोहा करते हैं।

ऐसे व्यापारी सत्यका महत्व नहीं समझते और उन्हें कठिनाइयोंका सामना करते हुए सत्यके मार्गपर अग्रसर होनेका आनन्द नहीं मिलता।

किसीका नुकसान न करते हुए सचाईके साथ अपने भरसक प्रयत्न करनेपर भी यदि तुम्हें सफलता न मिले तो अच्छा है क्योंकि तुम जानते हो कि तुमने कोई बुरा काम नहीं किया। परन्तु नीच उपायोंसे प्राप्त की हुई सफलता अच्छी नहीं, क्योंकि तुम जानते हो कि यह कैसे प्राप्त की गयी है।

ध्येय-प्राप्तिके लिए बुरे उपायोंसे काम लेते हुए तुम्हारे मनके भीतर जो लज्जाका भाव उदय होता है उसे तुम चाहे जितना दबाओ, वह सदा बना रहेगा।

क्या कारण है कि हममें बहुतेरे लोग अपने यथार्थ रूपको छिपा कर दूसरोंकी दृष्टिमें कुछ और दिखना चाहते हैं और इसके

लिए कभी-कभी बहुत गलत रास्ता अख्तियार करते हैं ? यह एक महत्वपूर्ण प्रश्न है।

इसके लिए हम एक दूसरी तरहका उदाहरण देंगे।

मान लो कि जब तुम छोटे थे तब संसारमें तुम्हारे सभी गुणोंका—अर्थात् सूरत-शक्ल, जेहन, औकात इत्यादिका कुल मिलाकर १०० नम्बर थे। यह नम्बर एक औसत बच्चेका समझना चाहिये। इस हिसाबसे तुम न तो बहुत [illegible] प्रतिभाशाली थे और न निरे मूर्ख।

परन्तु लोगोंके बर्ताव-व्यवहारसे या और किसी कारणसे तुम समझते थे कि तुम्हें कुल ७५ नम्बर मिले हैं। अपनी आहत भावनाके सन्तोषके लिए तुम अपने लिए कौन-सा नम्बर लोगोंके मुँहसे सुनना चाहते थे ?

१०० नहीं, बल्कि १२५ !!

यदि तुम ऐसे लोगोंको देखो जो झूठ और फरेबसे दुनियाँमें रोब गाँठते है और अपना सिक्का जमाना चाहते हैं, तो तुम्हें समझ लेना चाहिये कि ये लोग १२५ नम्बर पानेकी चेष्टा कर रहे हैं। पर साथ ही तुम्हें यह भी समझना चाहिये कि इन विचारोंको पहले कभी अपना नम्बर ७५ मानना पड़ा था।

वास्तवमें उनका नम्बर पूरा १०० है। यदि वे इस सचाईको महसूस करके इसीपर सन्तोष कर लेते और अपने असली रूपमें रहकर बनावटी रूप दिखानेकी चेष्टा न करते तो वे और उनके सम्पर्कमें आनेवाले लोग कितने सुखी होते !

निःसन्देह यदि किसीका स्वभाव कोमल होता है तो उसके विषयमें एक दूसरी ही बात होती है। यदि उसके समस्त गुणोंका नम्बर है १००, और वह यह समझनेके लिए विवश हुआ कि उसे मिले हैं कुल ७५ नम्बर, तो उसका आत्मविश्वास जाता रहता

है और उसे विश्वास हो जाता है कि उसका नम्बर केवल ५० है। इस प्रकार बननेके समयमें ही एक स्वभाव और चरित्र बिगड़ जाता है।

अपने गुणोंका अन्दाजा न तो बहुत बढ़ा-चढ़ाकर लगाओ और न बहुत कम, बल्कि मुनासिब अन्दाजा लगाओ। इसके बाद जीवनका एक लक्ष्य स्थिर करो, जो बहुत दूर और तुम्हारी पहुचके बाहर न हो, बल्कि ऐसा हो जिसतक तुम पहुंच सकते हो।

बचपनमें औरोंसे झूठ मत बोलो और बड़े होकर अपनेतई आप झूठ बोलना छोड़ दो।

अपनेतईं आप झूठ बोलनेका एक तरीका है और उसे हम सभी लोग समय समयपर अख्तियार करते है। शायद बचपनमें तुम बहुत सुखी नहीं थे और दूसरोंपर प्रभाव जमानेके लिए झूठ न बोलकर खयाली पुलाव पकाया करते थे।

कैसा अच्छा लगता था अकेलेमें बैठकर खयालोंका तूमार बाँधना और अपनेको राम या कमला न समझकर कोई विजयी राजकुमार या कैदमें पड़ी हुई राजकुमारी मान लेना ?

इस तरह खयाली घोड़े दौड़ानेसे कुछ ज्यादा नुकसान नहीं होता बशर्ते कि तुम इन सपनोंको सच न समझ लो और इनमें ऐसे निमग्न न हो जाओ कि अपनी साधारण अवस्थाकी सचाईको ही भूल जाओ।

बचपनमें ऐसे सपने देखना स्वाभाविक है। बड़े होकर जो लोग बच्चोंके ऐसे स्वप्नोंकी खिल्ली उड़ाते हैं उन्हें बच्चोंकी इन बातोंसे सहानुभूति नहीं होती। बड़ी उम्रके लोग भी यदि ऐसे दिवा-स्वप्न देखें तो कोई हानि नहीं बशर्ते कि वे जीवनकी

वास्तविकताको न भूल जायँ और अपनी कठिन समस्याओंका सामना करनेकी दृढ़ता न खो दें।

दिवा-स्वप्नोंसे हमें अपनी अवस्थाकी उन्नति करनेमें और संसारमें कुछ कर दिखानेकी प्रेरणा प्राप्त हो सकती है। परन्तु उम्र बढ़नेके साथ-साथ हमें उनका वास्तविक मूल्य समझना चाहिये और उन्हें मनको भुला रखनेका साधन न बनाना चाहिये।

यदि बचपनमें तुमने कुछ ऐसी झूठी बातें कही हैं जो आज भी तुम्हारे चित्तको साल रही हैं तो तुम उन्हें भूल जाओ; हाँ, सचमुच भूल जाओ। अमुकने तुम्हारी झूठी बातोंकी पोल खोलकर तुम्हें सबके सामने लज्जित किया था—इस तरहकी लज्जाकी भावनासे तुम अपनी कही हुई झूठी बातोंको अचेतन मनकी कोठरीमें मत ठेलो।

किसी रातको तुम अपनी कही हुई झूठी बातोंपर उदारतासे विचार करो और उनके कारणोंको समझकर अपने ऊपर आप हँसो। झूठकी शरण तुम्हें इसीलिए जाना पड़ा होगा कि उस समय तुम अपनी गलतियोंकी सजा भुगतनेमें कमजोर थे या अपनी सच्ची अवस्था छिपाकर अपनेको कहीं ज्यादा चुस्त-चालाक साबित करना चाहते थे।

इस सचाईको जानकर तुम्हें सन्तोष होना चाहिये कि प्रत्येक व्यक्तिने ऐसी ही गलतियाँ की हैं और ऐसे ही दिवा-स्वप्न देखे हैं। अतएव तुम किसीसे अच्छे नहीं तो बुरे भी नहीं हो, बशर्ते कि आज तुममें ज्यादा समझ आ गयी हो।

अध्याय १९

बचपनमें चोरी

जिस तरह कोई अपने जीवनमें झूठ बोलनेसे नहीं बच सका उसी तरह, मैं समझता हूँ, कोई चोरी करनेसे भी बरी नहीं रहा। चोरी छोटी हो या बड़ी, है तो चोरी ही।

मैं समझता हूँ कि चोरी करनेका और बचपनमें झूठ बोलनेका साथ है। ये दोनों काम एक-सी ही प्रवृत्तिसे उत्पन्न होते हैं और वह प्रवृत्ति है अपनी सच्ची अवस्थाको औरोंकी आँखोंसे या अपनी ही आँखोंसे छिपाकर झूठी शान दिखाना।

क्या तुमने कभी कोई चीज इस इरादेसे चुरायी थी कि तुम उसे किसी औरको दे दोगे और वह उसे पाकर तुम्हें बड़ा उदार और दयावान समझेगा? अथवा जो छोटी-मोटी चीज,—छुरी, कैंची इत्यादि—तुमने चुरायी थी वह तुम्हारे विचारसे तुम्हारी ही होनी चाहिये थी और तुम्हीं उसके उपयुक्त अधिकारी थे? अथवा तुमने कोई चीज इसलिए चुरायी थी कि अपनी शान जतानेके लिए तुम उसे किसी साथी या साथिनको भेंट दोगे? अथवा पकड़े जानेकी और अभिभावकके सामने पेश किये जानेकी जोखिम उठाना तुमने कोई बहादुरीका काम समझा था?

क्षणभरके लिए पढ़ना बन्द करके जरा याद करो कि तुमने कौन-कौन-सी चोरी की थी जिसे सोचकर तुम समय-समयपर शर्माते हो। साथही यह भी सोचो कि क्या उन चोरियोंके मूलमें ऐसा ही कोई उद्देश्य नहीं था?

यह सच है कि सभी चोरियाँ इस श्रेणीमें नहीं आतीं, परन्तु यह कहना गलत न होगा कि बचपनकी अधिकांश चोरियाँ इन्हीं कारणोंसे होती हैं। चोरी भी क्रियात्मक झूठ या असत्य आचरण है।

आत्मरक्षाके लिए भी चोरी होती है, जैसे,—माँकी दी हुई इकन्नी तुमसे खो गयी; माँ डाँटेगी इस डरसे उन्हींके बटुएसे इकन्नी चुराकर तुम उन्हें दे देते हो।

आत्म-महत्व-प्रदर्शनके लिए भी चोरी होती है। अधिकांश चोरीका यही प्रधान उद्देश्य होता है। तुम औरोंको या अपने आपको ही अपनी शान दिखाना चाहते हो।

प्रेमके लिए भी चोरी होती है। तुम्हारी प्रेमिकाने कोई वस्तु छू ली, तुम उसे स्मृति-चिह्न बनाकर अपने पास रखना चाहते हो या अपनी प्रेमिकाको देना चाहते हो। उसे खरीदनेके लिए तुम्हारे पास पैसा नहीं है, इसलिए तुम चोरी करते हो।

यदि इन मुख्य कारणोंको देखते हुए तुम यह सोचोगे कि तुमने बचपनमें छोटी-मोटी चोरी क्यों की तो समझ जाओगे कि मानव-हृदयकी प्रधान प्रवृत्तियोंके साथ उनका कितना निकट सम्बन्ध है। हमारे पूर्वजोंकी दी हुई ये प्रवृत्तियाँ अत्यन्त प्राचीन कालसे हम सभी लोगोंमें चली आ रही हैं।

बचपनकी चोरी उस प्राचीन कालकी एक पुनरावृत्ति है जब सामाजिक नियम नहीं बने थे। बहुतेरे बच्चोंमें यह अवस्था आती है और वे इसे शीघ्र ही पार कर जाते हैं।

यदि कोई बच्चा इस अवस्थाको पार नहीं कर सकता है तो यह उसके जीवनमें स्थायी हो जाती है। उसके शरीरका विकास होता है पर भीतरसे उसके मनका विकास नहीं होता।

संसारमें ऐसे लोग कम नहीं हैं जो बड़े होकर भी चोरी करते

हैं। सामाजिक नियमोंकी दृष्टिमें चोरी बहुत बुरा और बेवकूफीका काम है। इसके कई बड़े अच्छे कारण हैं।

एक कारण तो यह है कि किसी वस्तुको पानेके लिए काम न करना, कमाई न करना बल्कि चोरी करना कोई सन्तोषजनक बात नहीं है। सचाईके साथ प्रयत्न करनेमें जो आनन्द और सन्तोष है वह चोरीमें कहाँ है ?

यदि संसारमें सभी लोग चोरी करने लगे तो ऐसे संसारमें कोई चैनसे रह ही न सके। यदि कोई तुम्हारी ऐसी वस्तु चुरा ले जो तुम्हें बहुत प्यारी है और जिसे पानेके लिए तुम्हें बड़ा प्रयत्न करना पड़ा था, तो तुम क्रोधसे पागल हो जाओगे।

जब किसीकी चोरी पकड़ी जाती है तब उसके सगे-सम्बन्धियोंको लज्जित होना पड़ता है और इस प्रकार उसके परिवारवालोंके जीवनकी जड़ोंमें तेल पड़ता है। चोर कोई स्वतन्त्र व्यक्ति तो है नहीं, वह अपने परिवार और समाजका एक अंग है। उसका कोई काम ऐसा नहीं हो सकता जिसका प्रभाव इनपर न पड़े।

यदि किसीकी चोरी न भी पकड़ी जाय तो भी उसके मनपर इसका बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। वह अपनी लज्जाको चाहे स्वीकार न करे परन्तु वह लज्जा उसके अचेतन मनकी गहराईमें घुस जाती है और इससे बहुत ही भयंकर परिणाम होते है।

अतएव तुम समझ गये होगे कि नागरिक बननेकी उम्र आते-आते मनुष्यको उन आदिम प्रवृत्तियोंसे अपना पिंड छुड़ा लेना चाहिये जिनके कारण वह बचपनमें चोरी किया करता था।

कभी-कभी माता-पिता चोरीकी बड़ी सख्त सजा दिया करते हैं। बच्चा इस बातको महसूस करता है कि जितना बड़ा कसूर नहीं है उससे बड़ी सजा मिल रही है।

यदि वास्तवमें बच्चेकी उम्र छोटी है तो कड़ी सजा देना, मेरी समझसे, बहुत बड़ी भूल है; इससे बच्चेका भीतरी विरोध बहुत बढ़ जाता है और फल यह होता है कि वह कहना नहीं मानता और दूनी चोरी करने लगता है।

यदि तुम्हें कभी ऐसी कड़ी सजा मिली हो जो तुम्हारे चोरीके अपराधको देखते हुए तुम्हारी रायमें अत्यन्त अनुचित है तो मैं यही कहूँगा कि अपने माता-पिताके दृष्टि-कोणको समझनेकी चेष्टा करो और अपनी विरोधकी भावनाको त्याग दो, क्योंकि इससे तुम्हारा ही नुकसान होता है।

तुम्हारे माता-पिता जानते है कि संसारमें चोरी बहुत नीच नजरोंसे देखी जाती है। वे शायद यह नहीं जानते कि तुममें विकासकी एक विशेष अवस्था आयी है और समयपर चली जायगी। उन्हें यह भी डर है कि सजा नहीं देंगे तो तुम्हें चोरीकी बान पड़ जायगी।

यदि तुम्हारे माता-पिता ही विवेकशील और बुद्धिमान् हों तब तो कोई बात नहीं, परन्तु यदि वे ऐसे नहीं हैं तो वे जितना ही अधिक तुम्हें चाहते है उतनी ही कड़ी सजा तुम्हें देंगे। उनके हृदयमें तुम्हारे लिए जितना गहरा स्नेह होता है उतनी ही गहरी चिन्ता उन्हें तुम्हारे भविष्यकी होती है।

तुम्हारे माता-पिताका स्नेह ही तुम्हारी सजाका कारण है—यही बात तुम्हें समझनी चाहिये। यदि उनसे ज्यादती हुई हो तो इसका कारण यही है कि मनुष्य होनेके नाते वे अपने मनोभावकी लहरोंमें बहुत दूर बह गये।

यदि तुम्हारे बचपनमें यह चोरीकी अवस्था आ चुकी है और अब तुम उसे पार कर चुके हो तो कोई कारण नहीं है कि बीती बातोंको याद करके तुम आज भी बेचैन बनो।

तुम इन बातोंको अपनी स्मृतिसे निकाल फेंको, उनके कारणों-पर गौर करो और स्वस्थ चित्तसे उन्हें भूल जाओ।

मैं जब छोटा था तब मुझसे भी ऐसी बहुतेरी गलतियाँ हुई थीं। वास्तवमें जब मैं एक मनोवैज्ञानिकके पाले पड़ा तभी मैं यह ठीक-ठीक समझ सका कि उन गलतियोंके सम्बन्धमें मेरे मनके भीतर जो लज्जाके भाव छिपे हुए थे उनका कितना गहरा प्रभाव मेरे चरित्रपर पड़ा था। यदि तुम मनोवैज्ञानिक बननेकी शिक्षा चाहते हो तो उसकी शिक्षाका एक हिस्सा यह भी है कि तुम अपनेको किसी मनोवैज्ञानिकके हाथों सौंप दो।

खाने-पहननेके लिए कुछ पैसे या चीजें चुरानेवाले तुम अकेले ही नहीं हो। यदि इस समय तुम वह आदत छोड़ चुके हो तो उसके फिर होनेका कोई डर नहीं है, जैसे चेचक जीवनमें केवल एक बार होकर फिर नहीं होती।

बचपनमें डाह

भाई या बहनसे डाह करना मैंने बचपनके साधारण अपराधोंमें शामिल कर रक्खा है, क्योंकि बच्चे आमतौरसे डाह किया करते हैं और यदि समय रहते इसे रोका न जाय तो इसका बहुत बुरा नतीजा होता है।

जो बालक अपनेको माता-पिताका एकमात्र दुलारा समझता है, उसे उस दुलारका हिस्सा बँटानेके लिए किसी अजनबी बच्चे-का आना बुरा लगे तो इसमें विचित्रता क्या है?

सच तो यह है कि जबतक वह 'अजनबी' बहुत छोटा रहता है तबतक माता-पिताका ज्यादा ध्यान उसीपर रहता है। ऐसी

हालतमें पहले जन्मा हुआ बालक कोनेमें उदास बैठा सोचता है कि मेरा दुलार अब नहीं होता।

क्या तुम्हारे ऊपर भी यह बात बीती है? शायद पहले कुछ वर्षों तक तुम यही अनुभव करते रहे कि माता और पिता तुम्हारे ही है। मै समझता हूँ, तुममे इतना स्वार्थ भरा था कि तुमने यह कभी नहीं सोचा कि तुम्हें चाहनेके साथ ही आखिर उनका आपसमें भी तो प्रेम-सम्बन्ध है।

यदि तुम्हारे माता-पिताने तुम्हे पहलेसे इस बातके लिए तैयार नही कर रक्खा था कि एक नया बच्चा आनेवाला है, तो तुमने अकस्मात् एक दिन देखा कि उनका सारा ध्यान कपड़ेकी एक छोटी-सी भद्दी पोटलीपर आकर्षित हो गया है और अब वे एकमात्र तुम्हारे ही नहीं रह गये।

यदि तुम्हारे माता-पिता बुद्धिमान होते तो वे किसी तरह तुम्हें पहले ही समझा देते कि तुम्हारे संग खेलनेके लिए एक साथी आनेवाला है।

तब तुम भी उन्हीं की तरह उस बच्चेके आनेके दिनके लिए उत्सुक होते और इस बातका इन्तजार करते कि वह जरा बड़ा हो ले तो सचमुच साथ-साथ खेलें।

यदि तुम्हें यह समझा दिया जाता कि जब बच्चा आवेगा तब वह बहुत छोटा और असहाय होगा, तो तुम अपनेको बड़ा समझकर खुश होते और उसकी देख-भालमें माता-पिताका हाथ बँटाते।

यदि तुम्हें उस बच्चेके आनेके बारेमें पहलेसे कुछ भी मालूम नहीं हुआ होगा तो उसके जन्मसे तुम्हारी छोटी-सी दुनियाँ में तहलका मच गया होगा। यदि होनेवाली बात तुम्हें पहलेसे मालूम हुई होगी और तुम उस दिनका इन्तजार करते होगे तो,

पारिवारिक जीवन सुखद और निरापद जान पड़ता होगा क्योंकि एक बच्चेके जन्मसे कुटुम्ब आखिर पहलेसे कुछ तो बड़ा हो ही जाता है।

इस तरह जो आत्मरक्षाका भाव तुम्हारे लिए बहुत आवश्यक है वह या तो मिट जाता है या बना रहता है।

यदि वह मिट जाता है तो तुम सचमुच नये जन्मे बच्चेसे घृणा करने लगते हो और संसारसे ही घृणा करने लगते हो जहाँ हृदयमें ऐसे धक्के लगा करते हैं।

यदि वह बना रहता है तो अपने ऊपर और अपने जीवनपर तुम्हारा विश्वास और भी दृढ़ हो जाता है।

यदि तुम्हें यह विश्वास दिलाया गया होगा कि तुम्हारे माता-पिताका सारा स्नेह एकमात्र तुम्हींपर है और तुम्हींपर सदा बना रहेगा, तो उस स्नेहका साझा बँटता देखकर तुम्हें दुःख होगा और तुम हताश होकर यही कहोगे कि मेरा सारा लाड़-प्यार चला गया। दूसरी ओर यदि तुम्हें पहले ही से यह समझा दिया जाता कि दूसरे बच्चेके आनेसे स्नेहके आदान-प्रदानमें अधिकता हो जायगी तो तुम उस छोटे बच्चेसे स्नेह करने लगते और वह भी तुमसे स्नेह करता।

इस तरह स्नेहकी जिस भावनाकी तुम्हें जरूरत है वह या तो चली जाती है या बनी रहती है।

यदि वह चली जाती है तो तुम बड़े दुःखके साथ यह अनुभव करते हो कि स्नेहका कोई भरोसा नहीं, आज है, कल नहीं। साथ ही, जिसे तुम समझते हो कि वह तुमसे स्नेह नहीं करता, तुम भी उससे स्नेह नहीं करते हो।

यदि स्नेहकी भावना बनी रहती है तो तुम्हारी स्नेह-शक्ति बढ़ जाती है और तुम अपने माता-पिता तथा भाई-बहनसे जो

स्नेह करते हो उसके कारण वे लोग भी तुमसे अधिक स्नेह करते हैं।

यदि तुम्हारी सुरक्षा और स्नेहकी भावना नष्ट हो जाती है तो उसका बुरा प्रभाव तुम्हारे और तुम्हारे परिवारवालोंके सम्बन्धपर पड़ता है और तुम्हारे बड़े होनेपर भी बना रहता है।

क्या तुमपर यही बात बीती है ? यदि हाँ, तो अपनी गलतीको समझो और उसे सुधारनेकी चेष्टा करो। जितना ही बड़ा कुटुम्ब होगा, स्नेहकी मात्रा उसमें उतनी ही बड़ी होगी। बचपनकी डाह और नासमझीके कारण शुरू शुरूमें जो विरोधकी भावना उभर पड़ी हो उसे जारी रखनेसे क्या लाभ ?

यदि घरमें और बच्चोंके जन्म लेनेपर भी तुम्हारी सुरक्षा और स्नेहकी भावना बनी रहती है तो तुम्हें अपने माता-पिताकी बुद्धिमानीके लिए ईश्वरको धन्यवाद देना चाहिये। ऐसी अवस्थामें इस विषयपर तुम्हें मुझसे कुछ अधिक सलाह लेनेकी जरूरत ही नहीं।

बचपनके कौतूहल

मैं चाहता हूँ कि तुम फिर एक बार सत्रहवें अध्यायको देखो जिसमें बचपनकी समस्याओंकी चर्चा की गयी है।

वहाँ मैंने खासकर यह बात कही है कि कुछ समस्याएँ ऐसी होती हैं जिन्हें माता-पिताके सामने रखना बच्चोंके लिए कठिन होता है।

तुम माता-पितासे झूठ, चोरी, डाह इत्यादिके सम्बन्धमें अपने मनकी बातें कह सकते हो, परन्तु कुछ ऐसी चीजें भी हैं

जिन्हें जाननेका स्वाभाविक कौतूहल तो तुम्हें होता है फिर भी तुम उनकी चर्चा माता-पितासे नहीं कर सकते।

तुम्हें याद होगा कि मनुष्य मात्रमें जितनी आदिम प्रवृत्तियाँ होती हैं उन्हींमें एक ज्ञानकी प्रवृत्ति भी है।

बिना इस प्रवृत्तिके मनुष्य विकासकी वर्त्तमान अवस्था तक कदापि नहीं पहुचता।

प्रत्येक वस्तुको जाननेके लिए जो खोज मनुष्य-जातिने की थी उसे बालक पूरे तौरसे दुहराता है। बोलना शुरू करते ही वह पूछने लगता है—यह क्या है? वह कैसे हुआ? सबसे बढ़कर उसका प्रश्न होता है—ऐसा क्यों है?

चलना क्या, खिसकना शुरू करते ही वह अपने चारों ओरकी चीजोंकी छान-बीन करना चाहता है। उस समय सीढ़ी चढ़ना-उतरना उसे वैसा ही उत्साह और आनन्द देता है जैसा समुद्रकी राहसे पृथ्वीकी परिक्रमा करनेमें कोलम्बसको हुआ था।

इसी तरह अपने शरीरके बारेमें कुछ जाननेकी उत्सुकता होना भी बच्चोंके लिए स्वाभाविक है।

जब तुम छोटे थे तब तुम्हें शरीरसे टट्टी या पेशाबका निकलना कुछ जादूका-सा काम मालूम पड़ता होगा। तुम्हें याद हो या न हो, पर मुझे विश्वास है कि उस समय तुम अपनेको बड़ा काबिल समझते होगे कि यह चीजें मैं ही बनाता हूँ।

वास्तवमें ये ही चीजें तुमने पहले पहल बनायी भी थीं। तुम्हें शायद यह जाननेकी उत्सुकता रही होगी कि आखिर ये चीजें क्या हैं और कहाँसे आती हैं?

तुम्हें अपने शरीरके विषयमें जो दिलचस्पी रही उसीके कारण तुम दूसरोंके शरीरके बारेमें भी दिलचस्पी लेने लगे होगे। तुम्हें कुछ अचरज होता होगा कि और लोग कपड़ोंके भीतर कैसे लगते

हैं। सामाजिक नियमोंकी दृष्टिमें चोरी बहुत बुरा और बेवकूफीका काम है। इसके कई बड़े अच्छे कारण हैं।

एक कारण तो यह है कि किसी वस्तुको पानेके लिए काम न करना, कमाई न करना बल्कि चोरी करना कोई सन्तोषजनक बात नहीं है। सचाईके साथ प्रयत्न करनेमें जो आनन्द और सन्तोष है वह चोरीमें कहाँ है ?

यदि संसारमें सभी लोग चोरी करने लगे तो ऐसे संसारमें कोई चैनसे रह ही न सके। यदि कोई तुम्हारी ऐसी वस्तु चुरा ले जो तुम्हें बहुत प्यारी है और जिसे पानेके लिए तुम्हें बड़ा प्रयत्न करना पड़ा था, तो तुम क्रोधसे पागल हो जाओगे।

जब किसीकी चोरी पकड़ी जाती है तब उसके सगे-सम्बन्धियोंको लज्जित होना पड़ता है और इस प्रकार उसके परिवार-वालोंके जीवनकी जड़ोंमें तेल पड़ता है। चोर कोई स्वतन्त्र व्यक्ति तो है नहीं, वह अपने परिवार और समाजका एक अंग है। उसका कोई काम ऐसा नहीं हो सकता जिसका प्रभाव इनपर न पड़े।

यदि किसीकी चोरी न भी पकड़ी जाय तो भी उसके मन-पर इसका बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। वह अपनी लज्जाको चाहे स्वीकार न करे परन्तु वह लज्जा उसके अचेतन मनकी गहराईमें घुस जाती है और इससे बहुत ही भयंकर परिणाम होते है।

अतएव तुम समझ गये होगे कि नागरिक बननेकी उम्र आते-आते मनुष्यको उन आदिम प्रवृत्तियोंसे अपना पिंड छुड़ा लेना चाहिये जिनके कारण वह बचपनमें चोरी किया करता था।

कभी-कभी माता-पिता चोरीकी बड़ी सख्त सजा दिया करते हैं। बच्चा इस बातको महसूस करता है कि जितना बड़ा कसूर नहीं है उससे बड़ी सजा मिल रही है।

लज्जा मालूम पड़ती है। बच्चेको डाँटकर या उसके प्रश्नको टालकर वे अपनी इस लज्जाको छिपाते हैं। इस तरहके प्रश्नोंसे उन्हें घबराहट भी मालूम होती है।

तुम पूछ सकते हो कि नम्बर तीनमें मैंने 'अत्यधिक लज्जा'का उल्लेख क्यों किया?

मैंने ऐसा जानबूझकर किया है क्योंकि मैंने यह सिद्धान्त स्थिर किया है कि जो काम हम सदा अकेलेमें या छिपकर किया करते हैं (जैसे, टट्टी-पेशाब करना, बच्चा जनना इत्यादि) उसकी खुले तौरपर चर्चा करते समय हमें कुछ न कुछ घबराहट और शर्म मालूम पड़ती है।

इसका एकमात्र कारण यही है कि ये काम परदेमें किये जाते हैं।

अतएव इन कामोंकी खुली चर्चासे कछ बेचैनी-सी होना स्वाभाविक है। परन्तु इन मामूली कामोंके सम्बन्धमें अत्यधिक लज्जा और अपराध अनुभव करना सचमुच अस्वाभाविक और हानिकर है। इधर कई पीढ़ियोंसे इनकी शिक्षा कुछ माता-पिता और शिक्षक बालकोंको देने लगे हैं।

सभी बालकोंमें अपने और दूसरोंके शरीरके विषयमें स्वाभाविक कौतूहल होता है। मैं अपनी कही हुई बातको फिर दुहराता हूँ और साफ तौरसे कहना चाहता हूं कि यह कोई बुरी बात नहीं है।

कौतूहल बिना, ज्ञानकी लालसाके बिना, अधिकसे अधिक बातोंको जाननेकी इच्छाके बिना जैसे मनुष्य-जातिका विकास नहीं हो सकता था, वैसे ही इन गुणोंके बिना एक बालकका भी विकास नहीं हो सकता।

तुम्हें शायद अपने बचपनकी छिपी हुई और लज्जाभरी

उत्सुकता और कौतूहलकी घटनाएँ याद हों। छिपी हुई इसलिए कि तुम्हारे बड़े-बूढ़ोंने पहले ही तुम्हारे मनपर यह बात जमा दी होगी कि जो कुछ तुम जानना चाहते हो वह गुप्त और लज्जाजनक बात है। लज्जाभरी इसलिए कि तुम्हें बताया गया होगा कि तुम जिस बातमें दिलचस्पी ले रहे हो वह एक प्रकारका अपराध है।

जिन बातोंको जाननेके लिए तुम्हें बिलकुल स्वाभाविक उत्सुकता रही उनके सम्बन्धमें इतनी अधिक लज्जा और अपराधकी भावनासे तुम्हें अवश्य ही हानि पहुची होगी।

अपराधकी भावना स्वीकार कर सकनेके कारण तुमने शायद इस तरहकी घटना शीघ्र ही भूल जानेकी चेष्टा की होगी, मानों यह हुई ही नहीं थी।

शायद तुम्हारी यह जाननेकी चेष्टा रही हो कि बड़ी उम्रके पुरुष या स्त्रीके अंग कैसे होते हैं, अथवा तुम अपने संगी-साथी-के अंगोंसे अपने अंग मापते रहे होगे। इसके लिए तुम्हें सजा मिली होगी, अथवा तुम्हें डाँटा गया होगा कि तुम बहुत ही बद-माश और शरारती हो। यदि तुम्हारी इन हरकतोंका भेद न भी खुला हो तो भी तुम यह जानते ही थे कि बात खुल जाने पर सजा मिलेगी। इससे भी तुममें वही अपराधकी भावना आ गयी।

हम सभी लोगोंकी स्मृतिमें इस तरहकी घटनाएँ बहुत गहरी गड़ी हुई हैं। हाँ, यदि कोई ऐसा ही बड़ा सौभाग्यशाली हो जिसके माता-पिता बड़े बुद्धिमान् हों तो उसकी बात दूसरी है।

मेरी जान-पहचानकी एक स्त्रीको आज भी अपनी एक घटनाकी याद बनी हुई है। यह घटना जब हुई थी, तब वह मुश्किलसे ६ वर्षकी थी।

उसके एक चाचा थे, जिनसे उसे बड़ा स्नेह था। वे एक बार रातको एक लम्बी समुद्र-यात्रासे लौटे थे। स्नेहके कारण यह

स्वाभाविक था कि वह उनसे मिलना चाहती थी। जिस उत्सुकताका अभी जिक्र किया गया है उसका उस लड़कीमें सान-गुमान भी नहीं था।

जिस कमरेमें वे सोये थे, उसका दरवाजा खोलकर वह अन्दर चली गयी।

उसी समय उसकी माँ उस कमरेमें आ गयी और लड़कीको वहाँ देखते ही उसे पकड़कर बाहर ले आयी। लड़की कमरेमें गयी थी—इस बातको लेकर बड़ी चर्चा हुई।

उसके माता-पिता यह समझ गये थे कि लड़की केवल चाचासे मिलना ही चाहती थी, इसके सिवाय और कोई बात नहीं थी। इसीलिए उन्होंने उसे कोई सजा नहीं दी। परन्तु यह वे नहीं समझ सके कि उनकी उस तरहकी चर्चासे लड़कीके कोमल मनपर क्या प्रभाव पड़ा।

वे लड़कीको सुना-सुनाकर इस बारेमें हँसी मजाक करते थे।

'मान लो इसके चाचा सोये न होते? कपड़े बदलते होते या नंगे-उघाड़े होते?'—इसी तरहके मजाक वे करते थे।

लड़की ये बातें सुनती थी पर इनका मतलब नहीं समझती थी। फिर भी उसे ऐसा लगा कि किसीको नंगे-उघाड़े देख लेनेमें कोई बड़ी शर्मकी और पोशीदा बात होती है।

उसके मनपर जो यह प्रभाव पड़ा, वह उसकी अपनी उत्सुकताके कारण नहीं पैदा हुआ, बल्कि उसके माता-पिताकी बिना सोची-समझी बातचीतने ही उसके मगजमें यह बात भर दी।

यह घटना बहुत ही छोटी थी और इसे हुए लम्बा अरसा हो गया और वह लड़की भी अब बड़ी-सी औरत हो गयी है; फिर भी वह इसे भूली नहीं है। उसके मनपर जो गहरा निशान पड़ गया था उसकी याद उसे आज भी है।

जिनके माता-पिता जरूरतसे ज्यादा बुद्धिमान होंगे उन्हें ये बातें मूर्खतापूर्ण मालूम पड़ सकती हैं, परन्तु इस घटनाका उल्लेख करनेमें मेरे दो प्रयोजन हैं।

एक तो इससे तुम्हें यह शिक्षा मिलेगी कि अभी अपने छोटे भाइयों और बहनोंसे और आगे चलकर अपनी सन्तानसे ऐसा बर्ताव करना चाहिये कि उन्हें अपने स्वाभाविक कौतूहलके कारण व्यर्थमें लज्जित न होना पड़े।

यदि बच्चेका इस तरहका प्रश्न बेमौके या गैर आदमीके सामने हो, तो भी उसका उत्तर धीरजके साथ और चलाऊ ढंगसे देना चाहिये। जहाँ तक हो उसकी उम्र और समझके मुताबिक सीधे और सहज तरीकेसे उसे ठीक बात समझा देनी चाहिये।

दूसरी बात यह है कि तुम अपने बीते हुए बचपनकी उन घटनाओंको याद करो जब तुम्हारे बड़े-बूढ़ोंने तुम्हारी उत्सुकताको ठुकरा दिया था और तुम्हारे मनमें सदाके लिए यह भावना जमा दी कि ऐसा काम नहीं करना चाहिये और यह बात नहीं पूछनी चाहिये।

ऐसी घटनाओंको अच्छी तरह याद करो और इस बातका निश्चय करो कि तुम ऐसे प्रश्नोंसे डरोगे नहीं बल्कि उन्हें हल करोगे।

शरीर और शरीरकी क्रियाओंमें कोई ऐसी बात नहीं है जिससे तुम्हें शर्माने या घबरानेकी जरूरत है।

आदिकालसे करोड़ों ही ऐसे शरीर बन चुके हैं जिनकी ऐसी ही क्रियाएँ रही हैं।

साथ ही यह भी ध्यान रहे कि यदि तुममें ऊपर लिखी बेवकूफीभरी शर्म नहीं है तो इसका यह मतलब नहीं है कि तुम प्राकृतिक क्रियाओंका खुल्लम-खुल्ला नग्न वर्णन करके अपने बड़े-बूढ़ोंको दहला दो।

यदि तुम संसारको यह बताना चाहते हो कि स्वतन्त्र विचारोंमें तुम बहुत अग्रसर हो, तो भी तुम्हारे चित्तमें पुरानी लज्जा कुछ न कुछ तो बनी ही हुई है अन्यथा तुम्हें इस तरह ढिंढोरा पीटनेकी चिन्ता क्यों होती ?

मैं जानता हू कि लोगोंको दहलानेमें बड़ा मजा आता है पर इसका एक दूसरा पहलू भी है ।

बिना जरूरत इन बातोंकी चर्चा समाजके सामने नहीं की जाती । इसके दो कारण हैं ।

१—बिना जरूरत ऐसी बातोंकी चर्चा क्यों की जाय जिन्हें सभी जानते और मंजूर करते है !

२—जो तुम्हारे जैसे स्वतन्त्र वातावरणमें नहीं पले, वे इन बातोंको सुनकर हैरान होंगे ।

सदाचारका आधार है औरोंके सुख-दुखका ध्यान रखना । इसका एक लक्षण यह है कि जहाँ तक बने कोई ऐसा काम न करो जिससे औरोंके मनको कष्ट हो चाहे उनके विचार कैसे ही मूर्खता-पूर्ण क्यों न हों ।

अध्याय २०

स्कूल जाना

पता नहीं बचपनमें तुम्हें स्कूल जाना पसन्द था, या नापसन्द था, या 'गले पड़ी ढोल बजाये सिद्ध'—के अनुसार जबरन स्कूल जाना पड़ता था, क्योंकि इसके सिवाय कोई चारा नहीं था।

बहुतेरे बच्चोंको शुरू-शुरूमें स्कूल जाना अच्छा लगता है पर कुछ आगे चलकर ऊँची पढ़ाईके समय वे स्कूल जानेसे नाराजगी दिखाते हैं और चाहते हैं कि इससे पिंड छूट जाय और कोई काम-धन्धा करें।

कितने ही बच्चोंको शुरूमें स्कूल जाना बुरा लगता है, पर जब ऊँची क्लासमें उन्हें कुछ अधिक स्वतन्त्रता मिलती है तब वे उसका लाभ उठाते हैं।

आखिर हमें स्कूल क्यों जाना पड़ता है ?

मेरे विचारसे इसके मुख्य दो कारण हैं।

एक तो बिलकुल स्पष्ट है। जीविका-उपार्जनके लिए शिक्षा आवश्यक है।

और भी कई कारण हैं। शिक्षा ऐसी योग्यता प्रदान करती है जिससे तुम अपने अवकाशके समयका सदुपयोग कर सकते हो। यदि तुम पढ़े-लिखे नहीं हो तो मनोरंजन और अनेक प्रकारके ज्ञान देनेवाली पुस्तकें तुम्हारी पहुँचसे बाहर हो जाती हैं। संगीत, कला, नाटक, कविता, नृत्य, इत्यादिका भी यथार्थ आनन्द तुम्हें

नहीं आ सकता, क्योंकि इन चीजोंके ठीक-ठीक समझनेकी शिक्षा तुम्हें नहीं मिली है।

प्राचीन मुद्रांकन, पुरातत्व इत्यादि अनेकों विषय ऐसे हैं जिनमें लोगोंको दिलचस्पी होती है पर इन्हें समझनेके लिए नियमित रूपसे शिक्षा प्राप्त करना आवश्यक है।

हमें स्कूली शिक्षा प्राप्त करनी चाहिए—इसका एक और बहुत बड़ा कारण यह है कि स्कूलमें ही हमें परिवारसे कहीं बड़े समाजके सदस्य बननेकी शिक्षा मिलती है।

तुम्हें यह समझ लेना चाहिये कि नागरिक बननेके लिए हमें ऐसी अवस्थाओंसे गुजरना पड़ता है जिनसे हमारी छोटी-सी दुनियाँ क्रमशः बड़ी होती जाती है। यह कितना उत्तम प्रबन्ध है कि जब हमें यह ज्ञान हो जाता है कि हम एक कुटुम्बके अंग हैं, उसके बाद हम स्कूलमें जाकर अनुभव करते है कि हम स्कूलके विद्यार्थी-समाजके अंग हैं।

इस तरह हमें जो अनुभव प्राप्त होता है, उसके सहारे हम अपने देशके और संसारके नागरिक होनेकी योग्यता प्राप्त कर सकते हैं।

जब तुम पहले-पहल स्कूल गये थे तब तुम्हें कुछ कठोर सत्य-का सामना करना पड़ा था।

घरपर तुम्हें स्नेहपूर्ण बर्तावका पूरा भरोसा था यहाँ तक कि तुम इसे अपना हक समझते थे।

स्कूलमें लड़कोंसे यदि तुम मित्रता करना चाहते थे तो इसके लिए तुम्हें कितने ही प्रयत्न करने पड़ते थे, जैसे—लड़कोंसे मेल रखना, उनके विचारोंको स्वीकार करना, और यदि कोई तुम्हारी मनचाही बात उन्हें न भाती हो तो उनकी खुशीके लिए उसे न करना।

बहुतेरे लोगोंको यह समझनेमें बड़ा अरसा लगता है कि दुनियाँसे दोस्तीकी उम्मीद करनेके लिए पहले अपनी तरफसे दोस्ती अदा करनी चाहिये।

कुछ ऐसे लोगोंको मैं जानता हूँ जिनकी दोस्ती किसीसे नहीं है। ऐसे लोग प्रायः बचपनमें बहुत शर्मीले होते हैं और उनके शर्मीलेपनसे यही प्रकट होता है कि वे किसीसे मिलना-जुलना नहीं चाहते।

इसीलिए कोई भी उनसे मिलना-जुलना नहीं चाहता और किसीसे उनकी दोस्ती नहीं होती।

यहाँ भी वही पुराना सिद्धान्त है कि यदि तुम दुनियाँसे कुछ लेना चाहते हो तो उसे कुछ दो। दोस्ती करनेके लिए यह जरूरी है कि तुम 'देने' के लिए तैयार हो जाओ। 'देने' से मतलब यह नहीं है कि कोई चीज दो बल्कि हृदयका स्नेह दो।

क्या तुम स्कूलमें सुखी नहीं थे

घरके सुरक्षित जीवनमें गिनतीके चन्द अपने ही आदमियोंसे हिले-मिले रहनेके कारण शुरू-शुरूमें तुम्हें स्कूल जाना बुरा लगता होगा।

शायद इसीलिए आज भी तुम्हारे मनमें स्कूली जीवनकी दुःखदायी स्मृति बनी हुई है।

यदि ऐसा है तो तुम्हें पहले बतायी हुई बातोंपर विचार करके अपने दुःखका यथार्थ कारण ढूँढ़ निकालना चाहिये और उससे जो कुछ नुकसान हुआ हो उसे धो बहाना चाहिये।

तुम्हें उस लड़केका किस्सा याद होगा जिसने अपनी माँसे

स्नेह करना छोड़ दिया था क्योंकि वह उसे नहीं चाहती थी और आगे चलकर उस लड़केका स्नेह फिर किसीसे नहीं हुआ। ठीक इसी तरह जो स्कूलमें किसीको दोस्त नहीं बना सकता, बहुत सम्भव है, वह जीवनभर किसीको अपना दोस्त न बना सके।

ऐसा मनुष्य पूर्ण जीवन उपभोग करनेके अनेक अवसर खो देता है क्योंकि और लोगोंसे हमारा जो सम्बन्ध होता है और उनसे हमें जो शिक्षा मिलती है उसीपर हमारे मनुष्यत्वका विकास निर्भर होता है।

बहुतेरे लड़कोंके लिए एक दुःख देनेवाली बात यह भी होती है कि वे उम्रके लिहाजसे औसत लड़कोंसे जेहनमें या तो 'बहुत आगे बढ़े हुए' या 'बहुत पीछड़े हुए' होते हैं। दोमेंसे कोई भी बात हो, इससे बालकोंके चरित्रपर अच्छा असर नहीं पड़ता।

यदि तुम जेहनमें 'पिछड़े हुए' लड़के रहे हो तो तुम्हें यह सच बात जानकर ताज्जुब होगा कि जो लड़का बहुत तेज और 'आगे बढ़ा हुआ' था और जिससे तुम डाह करते थे, उसकी तेजी ही उसके दुःखका कारण बनी। यदि तुम बहुत तेज लड़के रहे होगे तो यह दुःख तुम भोग ही चुके होगे और इसे जानते ही होगे चाहे शेखीमें आकर तुम इसकी सचाईको कबूल भले ही न करो।

तुम देखते हो कि स्कूलमें उम्र और योग्यताके अनुसार लड़कोंकी अलग-अलग क्लासें होती हैं। परन्तु समान उम्रके बालक दिल और दिमागमें समान नहीं होते।

अतएव तुम भी अपनी योग्यताके अनुसार स्थान पा सकते हो क्योंकि पिछड़े हुए लड़के आगे बढ़नेकी कोशिश करते हैं और अगाड़ी बढ़े हुए लड़के और भी आगे बढ़नेकी कोशिश करते हैं।

बहुतेरे लोगोंको यह समझनेमें बड़ा अरसा लगता है कि दुनियाँसे दोस्तीकी उम्मीद करनेके लिए पहले अपनी तरफसे दोस्ती अदा करनी चाहिये।

कुछ ऐसे लोगोंको मैं जानता हूँ जिनकी दोस्ती किसीसे नहीं है। ऐसे लोग प्रायः बचपनमें बहुत शर्मीले होते हैं और उनके शर्मीलेपनसे यही प्रकट होता है कि वे किसीसे मिलना-जुलना नहीं चाहते।

इसीलिए कोई भी उनसे मिलना-जुलना नहीं चाहता और किसीसे उनकी दोस्ती नहीं होती।

यहाँ भी वही पुराना सिद्धान्त है कि यदि तुम दुनियाँसे कुछ लेना चाहते हो तो उसे कुछ दो। दोस्ती करनेके लिए यह जरूरी है कि तुम 'देने' के लिए तैयार हो जाओ। 'देने' से मतलब यह नहीं है कि कोई चीज दो बल्कि हृदयका स्नेह दो।

क्या तुम स्कूलमें सुखी नहीं थे

घरके सुरक्षित जीवनमें गिनतीके चन्द अपने ही आदमियोंसे हिले-मिले रहनेके कारण शुरू-शुरूमें तुम्हें स्कूल जाना बुरा लगता होगा।

शायद इसीलिए आज भी तुम्हारे मनमें स्कूली जीवनकी दुःखदायी स्मृति बनी हुई है।

यदि ऐसा है तो तुम्हें पहले बतायी हुई बातोंपर विचार करके अपने दुःखका यथार्थ कारण ढूँढ़ निकालना चाहिये और उससे जो कुछ नुकसान हुआ हो उसे धो बहाना चाहिये।

तुम्हें उस लड़केका किस्सा याद होगा जिसने अपनी माँसे

स्नेह करना छोड़ दिया था क्योंकि वह उसे नहीं चाहती थी और आगे चलकर उस लड़केका स्नेह फिर किसीसे नहीं हुआ। ठीक इसी तरह जो स्कूलमें किसीको दोस्त नहीं बना सकता, बहुत सम्भव है, वह जीवनभर किसीको अपना दोस्त न बना सके।

ऐसा मनुष्य पूर्ण जीवन उपभोग करनेके अनेक अवसर खो देता है क्योंकि और लोगोंसे हमारा जो सम्बन्ध होता है और उनसे हमें जो शिक्षा मिलती है उसीपर हमारे मनुष्यत्वका विकास निर्भर होता है।

बहुतेरे लड़कोंके लिए एक दुःख देनेवाली बात यह भी होती है कि वे उम्रके लिहाजसे औसत लड़कोंसे जेहनमें या तो 'बहुत आगे बढ़े हुए' या 'बहुत पीछड़े हुए' होते हैं। दोमेंसे कोई भी बात हो, इससे बालकोंके चरित्रपर अच्छा असर नहीं पड़ता।

यदि तुम जेहनमें 'पिछड़े हुए' लड़के रहे हो तो तुम्हें यह सच बात जानकर ताज्जुब होगा कि जो लड़का बहुत तेज और 'आगे बढ़ा हुआ' था और जिससे तुम डाह करते थे, उसकी तेजी ही उसके दुःखका कारण बनी। यदि तुम बहुत तेज लड़के रहे होंगे तो यह दुःख तुम भोग ही चुके होगे और इसे जानते ही होगे चाहे शेखीमें आकर तुम इसकी सचाईको कबूल भले ही न करो।

तुम देखते हो कि स्कूलमें उम्र और योग्यताके अनुसार लड़कोंकी अलग-अलग क्लासें होती हैं। परन्तु समान उम्रके बालक दिल और दिमागमें समान नहीं होते।

अतएव तुम भी अपनी योग्यताके अनुसार स्थान पा सकते हो क्योंकि पिछड़े हुए लड़के आगे बढ़नेकी कोशिश करते हैं और अगाड़ी बढ़े हुए लड़के और भी आगे बढ़नेकी कोशिश करते हैं।

कौन लड़का तेज है, कौन कमजोर है - यह बुद्धिमान् शिक्षक जानते हैं। बहुतेरे लड़के उम्रमें छोटे होनेपर भी ऊँची क्लासमें चढ़ जाते हैं और कुछ लड़के अपने साथियोंसे बड़े होनेपर भी नीची ही क्लासमें पड़े रह जाते हैं।

परन्तु क्या इससे समस्या हल हो जाती है?

हर्गिज नहीं, बल्कि इससे नयी समस्याएं खड़ी हो जाती हैं।

आगे बढ़े हुए और पिछड़े हुए बालक

क्या तुम्हें याद है कि जब तुम छोटे होनेपर भी परीक्षामें प्रथम होनेके कारण ऊँची श्रेणीमें चढ़ गये थे, तब तुम्हारे मनकी क्या अवस्था हुई थी, अथवा जब परीक्षामें फेल हो जानेके कारण तुम अपनेसे छोटे लड़कोंकी क्लासमें रोक लिये गये थे उस समय तुम्हारे मनपर क्या बीती थी?

इन दोमेंसे कोई बात भी तुम्हारे सम्बन्धमें हुई होगी, परन्तु इसका तुम्हारे ऊपर क्या असर हुआ था—यह अच्छी तरहसे याद करो तब समझोगे।

ऊँची क्लासमें चढ़कर तुम समझते होगे हमारी बराबरी कौन कर सकता है? घरमें भी तुमने शान दिखायी होगी और स्कूलमें अपनेको बड़ा लगाते होगे।

जब और लड़कोंने देखा होगा कि तुम अपनेको बड़ा लगाते हो तब उन्होंने तुमसे दोस्ती छोड़ दी होगी। तुम्हारे दोस्त कम हो गये होंगे।

इस बातकी चोट मनपर न बैठे, इसलिए तुमने सोचा होगा—"ऊँह, ऐसे दोस्तोंकी परवाह नहीं: ऐसे दोस्त पड़े ऐसीकी

तेसीमें।" इस तरह तुमने अपने मनको समझा लिया होगा।

इसके बाद यदि तुम किसी बड़े या हाई स्कूलमें गये होगे तो तुम्हें मालूम पड़ा होगा कि तुमसे बढ़-चढ़कर लड़के पड़े हैं।

छोटे स्कूलमें या निचली क्लासोंमें, जहाँ लड़कोंका दायरा बहुत बड़ा न हो, तुम भले ही समझ लो कि इस आकाशमें हमीं अकेले चमकते हुए सितारे हैं, परन्तु बड़े स्कूलोंमें और ऊंची क्लासोंमें जहाँ बहुसंख्यक और चुने हुए मेधावी बालक होते हैं, वहाँ तुम्हारी दाल नहीं गलती और तुम्हें अपनी भूल मालूम हो जाती है।

इस सचाईके प्रकट होनेसे तुम्हें दुःख हो सकता है, परन्तु यदि तुम इससे कुछ सबक सीख लेते हो तो आगे चलकर लाभ भी तुम्हींको होता है। संसारमें तुमसे हर बातमें बढ़े-चढ़े लोग भरे पड़े हैं। यदि तुम अपनी अक्लमन्दीके गुमानमें फूलकर सांसारिक जीवनमें प्रवेश करोगे तो तुम्हारे हृदयको बार-बार ठेस लगेगी।

यदि तुम्हारी बुद्धि सचमुच तीव्र है तो इसे ईश्वरकी देन समझकर तुम्हें उसके प्रति कृतज्ञ होना चाहिये।

यदि तुमने परिश्रमके द्वारा अपनी मेधा-शक्ति बढ़ायी है तो इसका श्रेय तुम्हींको है। फिर भी अपनेसे पूछो कि तुमने इसकी धुनमें अपने चरित्रको उन्नत बनानेमें कितनी गफलत की है।

क्या तुम सचमुच मिलनसार हो? जो लड़के तुम्हारी तरह तेज नहीं हैं, क्या उनसे तुम्हारी मित्रता है? तुम उनके आगे अकड़कर तो नहीं चलते? उन्हें नीची नजरोंसे तो नहीं देखते? अथवा स्कूलसे इनाम वगैरः पाकर सचमुच तुम्हारा दिमाग सातवें आसमानपर चढ़ गया है?

जैसा कि तीसरे भागमें समझाया जायगा, स्कूली जीवनसे

इस समय तुम्हारा जो कुछ चरित्र और स्वभाव बन गया है उसीसे तुम्हारे सांसारिक जीवनकी उन्नतिके मौके बन या बिगड़ सकते हैं।

इससे बढ़कर खेदजनक बात क्या होगी कि एक कुशाग्र-बुद्धि शिक्षित युवक अन्तमें केवल इसलिए कहींका नहीं रहता कि उसके चरित्र अथवा स्वभावमें किसी चीजकी कमी है और वह ऐसी कमी है जो समय रहते जरा-सा ध्यान देनेसे ही दूर हो सकती थी।

अब एक शब्द पिछड़े हुए बालकके सम्बन्धमें भी कहना उचित होगा।

सम्भव है, तुम क्लासमें और घरपर भी नीची नजरोंसे देखे जाते रहे हो। तुमसे छिपा नहीं था कि तुम्हारे शिक्षकोंको और विशेषतः तुम्हारे माता-पिताको तुमसे बड़ी-बड़ी आशाएँ थीं, परन्तु तुम उन्हें पूरी नहीं कर सकते थे।

ऐसी अवस्थामें तुम्हारी प्रतिक्रियाके लिए दो रास्ते थे।

या तो, तुम अपने भरसक मेहनत करते रहे, पर साथ ही यह भी महसूस करते रहे कि तुमसे कुछ होना-जाना नहीं क्योंकि तुम परले सिरेके बेवकूफ हो।

या तुम यह सोचते रहे हो कि—"हटाओ इन झगड़ोंको। यदि मेरे पढ़ने-लिखनेके ढंगसे ये किसी तरह खुश ही नहीं होते तो अब मैं यह दिखा दूँगा कि मुझे पढ़ने-लिखनेकी परवाह ही नहीं है।" इस तरहकी हिम्मत करके तुम बेकहन लड़के बन गये होगे। तुम्हारे जो संगी-साथी तुम्हारे ही जैसे होंगे वे इसके लिए तुम्हारी तारीफ करते होंगे।

मुझे तुम्हारे साथ पूरी हमदर्दी है। कोई भी अपनेको सचमुच बेवकूफ नहीं मानना चाहता। दूसरी ओर, मैं समझता हूँ कि यदि ऊपर दोमेंसे किसी भी प्रतिक्रियामें तुमसे ज्यादती हुई तो तुम जरूरतसे ज्यादा बेवकूफ थे।

कुछ लोगोंकी मेधा-शक्तिके विकासमें बहुत समय लगता है। तुम देखोगे कि कोई भी जीवन ऐसा नहीं है जो अनूठा हो और जिसकी समता कहीं न हो। कुकुरमुत्ता रातोरात पूरे विकासको पहुँच जाता है पर बड़के पेड़के विकासमें वर्षों लगते हैं। 'पाँचे आम पचीसे महुआ।' आमका पेड़ पाँच वर्षमें फल देता है पर महुआ पचीस वर्षमें फल देता है।

किसी किसीकी मेधा अथवा अन्य शक्तियोंका विकास बहुत धीरे-धीरे होता है। इसका यह अर्थ नहीं है कि प्रयत्न करनेपर भी विकास नहीं होगा।

जो विकास-मार्गमें सुस्त-कदम हैं और मन ही मन चिन्तित रहते हैं कि हम बिलकुल निकम्मे हैं उन्हें धैर्यपूर्वक परिश्रम करते रहना चाहिए। समय आनेपर उन्हें परिश्रमका फल मिलेगा। संसारमें अनेकों ऐसी वस्तुएँ हैं जो अपने लम्बे विकास-कालमें बिलकुल रद्दी और वाहियात होती हैं पर पूरे विकासको पहुँचकर बड़ी ही उत्तम और सुन्दर हो जाती हैं।

यदि तुम हिम्मत न हारो और घबराओ नहीं, बल्कि धीरजसे काम लो, तो कोई कारण नहीं है कि 'तेज-तर्रार' कहलानेवाले लड़कोंसे यदि आगे नहीं बढ़ सकोगे तो कमसे कम उनके पास तक नहीं पहुँचोगे।

हिम्मत मत हारो और न हँसी-मज़ाकमें समय गँवाकर पढ़ने-लिखनेके अमूल्य अवसरोंको बर्बाद करो।

इसका यह अर्थ न समझो कि थोड़ा-बहुत हँसी-मज़ाक कर लेना बुरा है। किसी भी उम्रमें इसके बिना जीवनमें आनन्द ही क्या आयगा? पर आठों पहर भाँड़ों-की-सी हँसी-दिल्लगी भी उतनी ही बुरी लगनेवाली चीज है जितनी मनहूसियत। अपना सारा समय बर्बाद करना अपने भविष्यपर कुल्हाड़ी चलाना है।

अतएव क्या स्कूलमें और क्या सांसारिक जीवनमें, यह सोचकर कि मैं, किसीसे भी गया-बीता हूँ कभी अपना जी छोटा मत करो और न अपने ऊपर झुँझलाओ। संभव है, तुम देरसे फलने-फूलनेवाले पेड़ हो। इस सन्देहसे ही लाभ उठाओ।

इसी तरह यदि तुम हमेशा तेज-तर्रार रहे हो तो यह सोचनेकी ग़लती मत करो कि दुनियाँमें अकेला मैं ही अक़्लमंद हूँ और सब बेवकूफ है। अपने गुणोंका सुन्दरसे सुन्दर उपयोग करो परन्तु साथ ही विनय और नम्रता भी सीखो। तुम्हें यह समझना चाहिये कि करोड़ों मनुष्यके संसारमें कमसे कम दो-एक करोड़ मनुष्य तो तुम्हारे ही सरीखे बुद्धिमान होंगे।

मैंने अभी 'आगे बढ़े हुए' और 'पिछड़े हुए'-दोनों ही प्रकारके बालकोंको उपदेश दिया है। अब प्रश्न है औसत बालकके विषयमें। क्लासमें एक औसत बालकका स्थान न तो सबसे ऊपर होता है और न सबसे नीचे, बल्कि बीचमें होता है। पढ़ने-लिखने और खेल-कूदमें वह बढ़ा-चढ़ा नहीं होता पर साधारणतया योग्य होता है।

ऐसा बालक सबसे अधिक सुखी होता है क्योंकि उसे ऊपर लिखे दोनों प्रकारके बालकों-की-सी चिन्ताएं और विपत्तियाँ नहीं सतातीं।

ऐसे बालकके विषयमें केवल एक डर रहता है कि कहीं वह आवश्यकतासे अधिक सन्तोषी न बन जाय। जितनी योग्यता तुमने अबतक प्राप्त कर ली है उससे अधिकके लिए अपना एक लक्ष्य स्थिर करो। उस तक पहुंचनेपर या उससे भी कुछ आगे बढ़ जानेपर बड़ा ही आत्म-सन्तोष प्राप्त होगा।

आज और कलका स्कूल

तुम चाहे 'आगे बढ़े हुए' या 'पिछड़े हुए' या 'औसत' बालक हो, कभी कभी जब तुम पढ़ते-पढ़ते अपनी क्लासकी खिड़कीसे बाहर फैले हुए सूर्यके उज्जवल प्रकाशको देखते होगे तब तुम्हारे मनमें यह प्रश्न उठता होगा कि आखिर इस कैदखानेमें बन्द होकर पाठ्य-पुस्तक पढ़नेके लिए हम क्यों बाध्य किये गये ?

तुम्हारी इस कठिनाईको मैं समझता हूँ।

मैं नहीं समझता हूँ कि हमारी आज-कलकी शिक्षा-प्रणालीको कोई भी आदर्श मानता हो।

इधर कुछ वर्षोंसे कहीं-कहीं इस तरहका सुधार हुआ है कि छोटे-छोटे बच्चोंको खेल-कूदके द्वारा स्कूलके वातावरणसे परिचित कराते हुए शिक्षा दी जाती है। जब वे दिन लद गये जब दुधमुहे बच्चोंको मदरसेमें या गुरुजीकी पाठशालामें ढकेल दिया जाता था।

फिर भी, मेरी रायसे, पहले कुछ वर्षों तक स्कूलोंमें जहाँ तक हो बहुत कम पुस्तक पढ़नेकी व्यवस्था होनी चाहिये। किसी बच्चेको दूसरे बच्चोंके संग-साथसे ही समाजमें रहनेकी बहुत कुछ शिक्षा मिलती है और यह शिक्षा भविष्यके लिए बड़ी उपयोगी होती है।

आज-कल जिस तरह हमारे स्कूल चलाये जाते हैं और उनमें जिस तहरकी पढ़ाई होती है, उसमें बहुत कुछ रद्दोबदलकी गुंजायश है।

उदाहरणके लिए यदि क्लासें छोटी-छोटी कर दी जायँ तो पढ़ने और पढ़ानेवाले—दोनों ही को कुछ सुविधा हो सकती है।

ऐसी अवस्थामें शिक्षकका काम हलका हो जायगा और वह

प्रत्येक बालककी अलग-अलग आवश्यकताओंकी ओर विशेष ध्यान दे सकेगा। बालकको यह लाभ होगा कि उसे लड़कोंकी भीड़के पीछे बैठकर कुछ सुनने-समझनेकी कोशिशमें हाँफना नहीं पड़ेगा या अपनी उन्नतिके लिए लालायित नहीं रहना पड़ेगा।

हमें छोटी होंगी तो उनके लिए स्कूलमें काफी जगह होनी चाहिये और शिक्षक भी अधिक होने चाहिये। परन्तु वास्तवमें हमारे यहाँ दोनों ही बातोंकी कमी है। यह कमी बहुत दिनों तक पूरी नहीं हो सकती क्योंकि विगत महायुद्धके कारण अनेकों बाधाएँ उपस्थित हो गयी हैं।

इसलिए हमें वस्तुस्थितिका सामना करना पड़ेगा और उसके साथ समझौता करना पड़ेगा।

जब तुम बहुत छोटे थे तब यही चाहते होंगे कि ककहरा और पहाड़ा घोखना नहीं पड़ता तो बड़ा अच्छा होता।

मैं मानता हूँ कि पहले-पहल ये चीजें बड़ी वाहियात मालूम पड़ती हैं। बड़े लड़कोंको लम्बे-लम्बे पाठ रटनेके लिए देनेका भी कोई अच्छा नतीजा नहीं होता। इससे उन्हें कोई लाभ नहीं होता बल्कि हैरानी होती है और उनकी हिम्मत टूटती है।

परन्तु अब तुम समझते हो कि कुछ बुनियादी चीजोंको बिना रटे उनकी बुनियादपर बने हुए विषयों तक तुम नहीं पहुच सकते थे। ककहरा बिना रटे पुस्तकें कैसे पढ़ते और पहाड़ा बिना रटे हिसाब कैसे लगाते ?

तब तो तुम अपनी रोटी भी नहीं कमा सकते थे और न फुरसतके वक्तका ठीक-ठीक आनन्द उठा सकते थे।

स्कूल या पाठशालामें छोटी उम्रमें ही इन चीजोंका रटना इसलिए जरूरी है कि बड़ी उम्रमें यह काम और भी कठिन हो

जाता है। हम ज्यों-ज्यों बड़े होते हैं त्यों-त्यों हमारी तोता-रटन्त वाली शक्ति क्षीण होती जाती है।

आशा है, इस समय तुम यह समझ सकते हो कि कुछ चीजोंको रटनेकी क्यों जरूरत होती है। तुम पूछ सकते हो कि रेखागणित, बीजगणित इत्यादि क्यों पढ़ाये जाते हैं? इनका तो भविष्यमें कोई काम पड़ता नहीं है।

मैं तुम्हारी बातसे बहुत कुछ सहमत हूँ। वह समय आयेगा जब प्रत्येक बालककी प्रवृत्ति और इच्छापर विचार करके उसके लिए उपयुक्त शिक्षाकी व्यवस्था होगी।

आजकल मनोविज्ञानके द्वारा प्रत्येक बालककी मेधा और बुद्धिकी परीक्षा और नाप-जोख की जा सकती है। यदि मनोविज्ञानका उपयोग शिक्षाके सम्बन्धमें किया जायगा तो जिस बालकके लिए जिस विषयका पढ़ना लाभदायक नहीं प्रतीत होगा उसे उस विषयके सीखनेके लिये अपना समय नष्ट नहीं करना पड़ेगा। उसकी मेधाशक्तिमें जिन विषयोंके सीखनेकी गुंजायश होगी उसके लिए वैसी ही शिक्षाकी व्यवस्था की जायगी।

इस सम्बन्धमें हमें बहुत गहराई तक जानेकी जरूरत नहीं। जो लोग सिर्फ फायदेमन्दी या उपयोगिताको ही सब कुछ समझते हैं वे यह दलील पेश कर सकते हैं कि हाथसे काम करनेवाले मजदूरको पढ़ने-लिखनेकी क्या जरूरत है? हम कहेंगे कि तब तो हजारों मजदूर ज्ञान बढ़ानेके मौकोंसे हाथ धो बैठेंगे और फुरसतके वक्तको ठीक-ठीक काममें नहीं लायेंगे क्योंकि ये बातें पढ़ने-लिखनेसे ही हो सकती हैं।

हम अपने देशवासियोंके ऐसे विभाग नहीं करना चाहते जिनसे एक तरहका जाति-भेद-सा बन जाय।

हमारी शिक्षा उपयोगितापर इतनी अधिक अवलम्बित

होनी चाहिये जितनी कि अवसरपर। प्रत्येक बालकको यह अवसर मिलना चाहिये कि वह अपनी प्रवृत्तिका विकास कर सके और साथ ही शिक्षा तथा जीवन-विषयक विस्तृत ज्ञान प्राप्त कर सके।

इन प्रश्नोंपर विचार करनेका समय अभी बहुत दूर है। यदि इस समय तुम पाठशालासे निकलकर स्कूलकी ऊँची श्रेणीमें आ गये हो या स्कूलकी अन्तिम परीक्षामें भी उत्तीर्ण हो चुके हो, तो तुम जानते ही हो कि तुम्हें जबर्दस्ती बीजगणित, रेखागणित, अरबी, संस्कृत जैसे विषयोंको पढ़ना पड़ा है चाहे ये विषय तुम्हारे लिए रोचक न रहे हों या आगे चलकर अपने जीवनमें तुम इनका उपयोग न करना चाहते हो।

इसका कारण यही है कि व्यक्ति-विशेषकी आवश्यकताके अनुसार अभी तक हमारी शिक्षाकी व्यवस्था नहीं हो सकी है। सभी लोगोंको कुछ ऐसे विषय पढ़ने पड़ते हैं जिनसे बहुत थोड़े लोग ही लाभ उठा सकते हैं।

अभी जैसी व्यवस्था है उसीके अनुसार तुम्हें साँचेमें ढलना होगा क्योंकि इसके सिवाय दूसरा उपाय नहीं है। हाँ, अपने अनुभवके बलपर यदि तुम भविष्यमें नयी पीढ़ीके लिए इस व्यवस्थाको बदलनेका प्रयत्न करना चाहोगे तो कोई चीज तुम्हें रोक नहीं सकेगी।

आलोचना या नुकताचीनी करना बहुत सहल है पर किसी समस्याको इस प्रकार हल करना कि वह सभी दृष्टियोंसे सन्तोषजनक हो, कभी-कभी बहुत कठिन हो जाता है।

तुम्हारी दिलचस्पीके लिए मैं यह बता देना चाहता हूँ कि इधर कुछ वर्षोंसे इङ्गलैण्डमें कई 'प्रगतिशील' स्कूल बतौर आजमाइशके खोले गये हैं। साधारण स्कूलोंसे इनके नियमोंमें बड़ा अन्तर है।

इन स्कूलोंमें लड़कोंको वे विषय जबरन नहीं पढ़ाये जाते जो वे पढ़ना नहीं चाहते। जो लड़का कुछ नहीं पढ़ना चाहता उसे कुछ नहीं पढ़ाया जाता। 'अनुशासन' नामकी कोई चीज यहाँ नहीं है। शिक्षक और लड़के बराबरीकी हैसियतसे रहते हैं।

सिद्धान्त-रूपमें ये नियम बड़े अच्छे जान पड़ते है और इनकी सत्यतामें भी कोई सन्देह नहीं। कुछ अंशोंमें इनके परिणाम बड़े अच्छे हुए हैं, परन्तु इनसे कुफल भी फले हैं।

इन स्कूलोंमें रहते हुए कुछ लड़के बड़े ही आत्म-विश्वासी और अपना प्रबन्ध आप करनेके योग्य हो गये हैं और स्कूल चलानेकी जिम्मेदारीमें बराबरीका हिस्सा भी लेते हैं। कुछ लड़कोंके सम्बन्धमें यह हुआ कि उन्हें आगे चलकर जीवनकी कठोरताका अनुभव हुआ और इस तरहकी जोखों भरी पढ़ाईकी बुराई महसूस करनी पड़ी।

तुम देखते हो कि तुम चाहे गुस्ताखी करना चाहो या धमा-चौकड़ी मचाना चाहो—संसारमें तुम्हें अपने मनमाने काम करने-की पूरी स्वतन्त्रता नहीं दी जाती। यदि बचपनमें तुम्हारे दिमाग-में यह बात पैठ जायगी कि तुम्हारे मुहमें जो आये बक सकते हो, जो जी चाहे कर सकते हो, तो आगे चलकर बड़ी बुरी तरह-से तुम्हारा यह स्वप्न भंग हो जायगा।

जब रोजीका सवाल तुम्हारे सामने आयगा तब तुम देखोगे कि और लोगोंसे तुम बहुतेरी बातोंमें पिछड़े हुए हो। जिन विषयोंसे तुम्हें हालमें दिलचस्पी हुई है उनमें तुम्हारी ही उम्रके और लोग बहुत आगे बढ़ गये हैं।

यदि मौलिक और आवश्यक विषय पहले किसी तरह जबरन तुम्हें सिखा दिये गये हों, तो उन विषयोंकी आगेकी शिक्षा तुम सरलतासे प्राप्त कर सकते हो। यदि ऐसा न हुआ हो, तो किसी

विषयको एकदम आरम्भसे पढ़ना तुम्हारे लिए बड़ा कठिन हो जायगा क्योंकि तुममें तब बचपनकी तोता-रटन्त शक्तिका लोप हो जायगा।

मेरा व्यक्तिगत विचार है कि संसारमें सर्वांगपूर्ण शिक्षा-प्रणाली यदि असम्भव नहीं तो कमसे कम अभी बहुत दिनोंतक होनेवाली चीज नहीं है।

आवश्यकता ऐसी शिक्षा-प्रणालीकी है जो बीचकी हो, अर्थात् उसमें न तो 'प्रगतिशील' स्कूलकी तरह पढ़ाई-लिखाईसे बरी रहनेकी स्वतन्त्रता हो और न साधारण स्कूलकी तरह ऐसे विषयोंके पढ़नेकी जबर्दस्ती हो जो आगे चलकर काम नहीं आते।

यदि तुम इस समय स्कूलमें पढ़ते हो तो आजकलकी शिक्षा-प्रणालीके अनुसार ही तुम्हें पढ़ना होगा और परीक्षाएँ भी देनी होंगी। यदि तुम उचित रूपसे जीवन आरम्भ करना चाहते हो तो इसके अलावा तुम्हारे लिए दूसरा उपाय नहीं है। अतएव इसी प्रणालीसे जहाँतक हो सके, तुम्हें फायदा उठाना चाहिये।

यदि स्कूलमें पढ़कर तुम्हें इस बातकी कुछ शिक्षा मिली हो कि समाजमें कैसे रहना चाहिये और यदि वहाँकी पढ़ाई-लिखाईसे तुम रोजी कमाने लायक हो गये हो और फुरसतके वक्त तुम्हारे दिलचस्प शगल रहते हों, तो यही मानना पड़ेगा कि यह शिक्षा-प्रणाली चाहे जैसी हो, तुमने इससे यथेष्ट लाभ उठाया है।

यदि कभी तुम्हारे मनमें यह विचार आता हो कि स्कूलमें तुम्हारा कुछ समय व्यर्थ ही नष्ट किया गया या कुछ उपयोगी अवसर तुमसे जबर्दस्ती छीन लिये गये तो यह तुम्हारा काम होगा कि आगे चलकर तुम इस शिक्षा-प्रणालीको इस तरह बदलनेमें सहायक हो जिसमें औरोंको लाभ हो।

अध्याय २१

पढ़ना-लिखना और मनकी प्रसन्नता

पिछले अध्यायमें मैंने 'फुरसतके वक्त दिलचस्प शगल'की बात कही है।

'दिलचस्प शगल'का दायरा बहुत बड़ा है और इसके बहुतसे मतलब हो सकते हैं। यदि 'शौक' कहा जाय तो यह भी ठीक नहीं है क्योंकि इसमें भी वही बात है।

मेरे कथनका तात्पर्य केवल यही था कि पढ़ने-लिखने या काम-धन्धेसे अवकाश मिलनेपर अपने समयको मनोरंजक और उपयोगी कामोंमें लगाना चाहिये।

यह बड़े आश्चर्यकी बात है कि जो लोग अपने काम-धन्धेमें कड़ी मेहनत करते हैं और उसका ठीक-ठीक एवज या मेहनताना नहीं पाते है, वे ही लोग अपने अवकाशके समयका उचित उपयोग नहीं जानते हैं।

कुछ लोगोंको ऐसे ही काम सुहाते है जिनमें अधिक मानसिक परिश्रम नहीं करना पड़ता। वे ऐसे काम-धन्धे खुशीसे करते हैं जिन्हें करते हुए कुछ लोग ऊब जाते है जैसे,—मोटरकारके जुदा-जुदा हिस्सोंको जोड़नेवाले कारखानोंमें काम करना।

तुम जानते हो आजकल कल-कारखानोंमें चीजें कैसे बनायी जाती है।

विगत शताब्दिके पहले जीवनोपयोगी सभी वस्तुए हाथसे या पुराने जमानेके औजारोंकी सहायतासे बनायी जाती थीं। कपड़े

हाथसे बुने जाते थे। बुननेवाले जुलाहे अपने बनाये हुए कपड़ोंकी तरन्दाजी और अपनी कारीगरीपर अभिमान करते थे। सभी सामान बड़ी खूबीके साथ हाथसे बनाये जाते थे। उस जमानेके बने हुए जो सामान पाये जाते है वे अपनी प्राचीनता और सुन्दरताके लिए लोगोंको बहुत पसन्द आते हैं।

उस जमानेमें लोग अपने-अपने काममें बड़ी दिलचस्पी लेते थे और सच पूछो तो यही उनका शौक था।

आज उस जमानेकी बहुत-सी बातें बदल गयी हैं।

उदाहरणके लिए आज एक मोटरकार बनानेके लिए बहुत-से आदमियोंकी जरूरत होती है। समूची मोटरकार एक अकेला आदमी नहीं बना सकता। हाँ, नमूना बनानेवाला सबसे पहले अपने दिमागमें उस समूची मोटरकारकी शक्ल देखता है।

कुछ मजदूर पहले मोटरकारकी 'बाडी' (Body) का ढाँचा तैयार करते हैं। यह ढाँचा रेल-की-सी पटरियोंपर आगे बढ़ाया जाता है। पटरियोंके दोनों ओर लाइन बाँधकर मजदूर खड़े रहते है। ज्यों ज्यों वह ढाँचा आगे बढ़ता जाता है त्यों त्यों वे मजदूर उसमें कुछ छोटे-मोटे टुकड़े जोड़ते जाते है।

इस तरह वह ढाँचा अन्तमें पूरी मोटरकार बन जाता है। लाइन बाँधकर खड़े हुए मजदूरोंको इसके सिवाय और कोई दिलचस्पी नहीं रहती कि जब खिसकता हुआ ढाँचा उनके सामने आता है तब वे उसमें कोई सिटकिनी या बिल्ली लगा देते हैं या कोई हिस्सा जोड़कर पेंच कस देते है और उस ढाँचेके आगे बढ़ जानेके बाद वे अपना ध्यान दूसरे ढाँचेपर लगाते हैं जो फिर उनके सामने आता है और उसमें भी वे वैसी ही कार्रवाई करते हैं।

यह काम सारा दिन और रोज ही करना पड़ता है।

कारखानेके मालिकोंकी दृष्टिसे, मोटरकार तैयार करनेका यह सबसे जल्दीका और सस्ता तरीका है। यदि प्रत्येक मजदूर पूरी दिलचस्पीके साथ एक-एक मोटरकार बनाता तो बहुत समय लगता और बहुत खर्च बैठता।

बहुतेरे लोगोंका ऐसा स्वभाव होता है कि एक ही तरहका काम बार-बार और हमेशा करते रहनेपर भी उनका जी नहीं ऊबता, बल्कि वे इस बातसे प्रसन्न होते हैं कि उन्हें अपने काममें दिमाग नहीं लड़ाना पड़ता।

इससे उन्हें खयाली सपने देखनेका बहुत मौका मिलता है। वे अपनी असली हालतको भूलकर उन सपनोंमें डूबे रहते हैं जिनमें उन्हें औपन्यासिक नायक या योद्धाका स्थान प्राप्त होता है।

हम प्रायः देखते हैं कि जिन लोगोंका नित्यप्रतिका काम-धन्धा आनन्ददायक नहीं होता, वे ही मनोरंजनके लिए बनावटी आमोद-प्रमोदकी ओर झुकते है। काम-धन्धेमें मानसिक आलस्य होनेके कारण वे आमोद-प्रमोदके विषयमें भी मानसिक आलस्यमें डूबे रहते हैं।

दूसरी ओर यह बात है कि जिन लोगोंका काम धन्धा उनके जीवनका अंग बन जाता है, वे अपने आमोद-प्रमोदका सृजन आप ही कर लेते हैं।

तुम सोचते होगे कि लेखक इस प्रश्नपर तर्क-वितर्क करता हुआ तुम्हारे स्कूली जीवनसे दूर चला गया है। वास्तवमें बात ऐसी नहीं है।

स्कूलमें तुम्हारी ठीक वही दशा है जो कारखानेमें मजदूरकी या और काम करनेवालोंकी। या तो तुम स्कूलकी बँधी

पढ़ाई, बिना उसका अर्थ-प्रयोजन जाने हुए ही, पढ़ते होगे, या उसमें पूरी दिलचस्पी लेते होगे।

स्कूलके सम्बन्धमें तुम्हारे जो विचार हैं, उनकी प्रतिक्रिया छुट्टियोंमें कैसी होती है?

शायद तुम्हारे माता-पिता तुम्हारे बहुत बायस्कोप जानेपर कभी-कभी नाराज होते हों। दूसरी ओर यह भी हो सकता है कि वे तुमसे कहा करते हों कि दिन-रात कीड़ेकी तरह पुस्तकोंसे चिपके न रहकर जरा बाहर जाकर खुली हवामें भी घूमा करो।

उनकी दोनों ही बातोंमें तत्त्व है, परन्तु उनके कहनेका ढंग ऐसा होता है जो शायद ही तुम्हारे लिए कारगर हो।

चूंकि वे कभी-कभी तुममें ऐब ढूंढते हैं और तुम्हें डाँटने-डपटते हैं इसलिए यह न समझना चाहिये कि उनकी बातें गलत हैं। उनमें दानापन न हो या उन्हें मनोविज्ञानका ज्ञान न हो—यह हो सकता है, पर इसका यह अर्थ नहीं है कि उनकी सब बातें सदा गलत होती हैं।

बचपनसे ही अपना ऐसा ढंग अख्तियार कर लेना चाहिये जिससे 'बनावटी' आमोद प्रमोदपर ही पूरे तौरसे निर्भर न होना पड़े।

मैं यह जानता हूँ कि पूरे सप्ताह भर स्कूलकी चक्कीमें पिसने-के बाद तुम शनिवारको बायस्कोप देखना चाहते हो। इसमें कोई हानि नहीं है।

हानि तो तब है जब तुम छुट्टीका सारा समय बायस्कोप या इसी तरहके बने-बनाये आमोद-प्रमोदमें गंवा देते हो। मैं तुम्हें इसका कारण बताता हूँ।

तुम जानते हो कि एक क्षुद्र जीवाणु एमीबासे पृथ्वीपर

जीवनका विकास इसीलिए सम्भव हुआ कि जीवनको विस्तारित करनेके लिए लगातार प्रयत्न होता रहा।

इसका उलटा सिद्धान्त भी ठीक ही है। यदि जीवनका कोई रूप अपने किसी अवयव या अंगको व्यवहार करना छोड़ दे तो वह अंग सूख जायगा।

यदि हम पैरोंसे चलनेका काम कभी न ले और घरके अन्दर भी पहियेदार खड़ाऊँपर उकड़ू बैठकर इधरसे उधर फिसला करे तो वह समय आ जायगा जब मनुष्य-जातिसे पैरोंका व्यवहार ही उड़ जायगा। उपयोगमें न आनेके कारण अन्तमें पैर ही गायब हो जायगे।

यही बात उस व्यक्तिपर भी लागू है जो सिर्फ एक बंधा हुआ धन्धा दोहराता रहता है और अपनी बुद्धि और मेधाका उपयोग नहीं करता। यदि बुद्धिको वह अन्य दिशाओंमें भी नहीं लगायेगा, तो वह बिलकुल निकम्मी चाहे न हो जाय, पर भोंथी जरूर हो जायगी, जैसे बिना सान धराये छुरी भोंथी हो जाती है।

यदि बचपनसे ही तुम्हें ऐसे ही कामोंमें आनन्द आता है जिनके लिए शारीरिक या मानसिक परिश्रम नहीं करना पड़ता है और तुमने इसी तरहका अपना अभ्यास बना लिया है, तो ऊपर लिखी बात तुम्हारे जीवनपर भी लागू होगी।

हमेशा बायस्कोप जानेवाला व्यक्ति आरामसे कुर्सीपर बैठा रहता है; जिस तरह छोटे बच्चेको चम्मचसे दूध पिलाया जाता है उसी तरह रोमांचकारी कहानियाँ और विचार उसके मस्तिष्कमें भरे जाते है और उसका मस्तिष्क स्वयं ऐसे विचारोंकी सृष्टि अपने लिए नहीं कर सकता।

धीरे-धीरे वह वास्तविक जीवनसे सामना करनेवाली और

विचारोंको कार्यमें परिणत करनेवाली शक्तिको खो देता है। वास्तविक जीवन दिलचस्प सिनेमा नहीं है।

जो लड़के पुस्तकके कीड़े होते हैं, यही खतरा उनके लिए भी है। पुस्तकोंमें भरे हुए विचारोंसे वे अपने मस्तिष्कको पुष्ट कर सकते हैं, परन्तु नित्य प्रतिके जीवन और जनसाधारणका उन्हें कोई ज्ञान नहीं हो सकता।

यदि तुम चुन चुनकर अच्छी अच्छी पुस्तकें पढ़ोगे और प्राचीन समयके मनस्वियोंके विचारोंको मनन करोगे तो तुम्हारी बुद्धि तीव्र और तीक्ष्ण बन सकती है। पर साथ ही पूर्ण विकास और स्वास्थ्यके लिए तुम्हारे शरीरको व्यायामकी जरूरत होगी। तुम्हारी व्यावहारिक बुद्धिको भी व्यायाम करनेकी जरूरत पड़ेगी।

तुम्हें समझ लेना चाहिये कि जीवित रहनेके लिए सभी बातोंमें स्वाभाविक संतुलन या वजन बराबर रखनेकी आवश्यकता है। काम करो तो खेलो भी, छुट्टीमें आराम करो तो रचनात्मक काम भी करो, मानसिक परिश्रम करो तो शारीरिक परिश्रम भी करो, जीवनका अनुभव प्राप्त करो तो जनसाधारणसे हिल-मिलकर रहनेका अनुभव भी प्राप्त करो।

छुटपनमें ही वे आदतें डाली जा सकती हैं जिनकी बदौलत व्यक्तित्वका पूर्ण विकास हो सकता है। तुम्हारे स्कूली जीवनका समय ही उन आदतोंको शुरू करनेका सबसे अच्छा समय है क्यों कि विद्यार्थी-अवस्थामें इन बातोंको सीखनेके लिए अवसरकी कमी नहीं होती।

शिक्षक भी मनुष्य हैं

तुम न तो स्कूलमें अकेले हो और न संसारमें अकेले रहोगे। स्कूलमें तुम्हारे सहपाठी हैं और शिक्षक हैं। शिक्षक तुम्हारे पिताके समान है। सहपाठियोंसे ही तुम्हारी पहली मित्रता होती है।

शिक्षक एकसे नहीं होते। कोई किसी तरहका होता है तो कोई किसी तरहका। इसलिए उनके पढ़ानेके ढंग और लड़कोंके प्रति व्यवहार जुदा-जुदा होते हैं।

बुरा शिक्षक रोचक विषयको भी ऐसे बुरे ढंगसे पढ़ाता है कि जी ऊबने लगता है। परन्तु अच्छा शिक्षक इस ढंगसे पढ़ाता है कि तुम्हें पढ़नेमें आनन्द और उत्साह मिलता है।

इसलिए तुम्हें यह समझ लेना चाहिये कि शिक्षक भी मनुष्य है। यह इसलिए कि आगे चलकर तुम्हें कुछ ऐसे लोगोंसे साबका पड़ेगा जिनसे तुम्हारा सम्बन्ध करीब-करीब इसी तरहका होगा जैसे,-तुम्हारे आफिसके मैनेजर, डिपार्टमेण्टके अफसर इत्यादि।

ये मैनेजर, अफसर इत्यादि शिक्षककी भाँति तुम्हें पढ़ायेंगे नहीं, हालाँकि जिस आफिस, फर्म इत्यादिमें तुम काम करने जाओगे वहाँ तुम्हें पहले काम सीखना पड़ेगा।

अपने मालिक या अफसरसे ठीक-ठीक व्यवहार-बर्ताव करना तुम्हें जान लेना होगा और उनके रोब-दाबको बिना कुछ चीं-चपड़ किये चुपचाप मानना होगा।

तुम्हारे अफसर, मालिक और शिक्षक भी तुम्हारे माता-पिताके समान ही मनुष्य हैं। घरेलू झगड़े-झंझट, अकारण हठ, मनकी कमजोरी, निठल्लापन इत्यादि बातोंमें वे भी उसी तरह फसे रहते हैं जैसे अन्य मनुष्य। इन्हीं कारणोंसे वे कभी-कभी चिड़-चिड़े और अन्यायी जान पड़ते हैं।

कुछ अभिभावकोंके समान ये लोग भी अपने बचपनकी कुशिक्षाके बुरे प्रभावसे पीड़ित होते हैं।

ऐसे ही शिक्षक बड़े कड़े मिजाजके होते हैं और लड़कोंपर जुल्मी हुकूमत करते हैं। इनमें हंसी-मजाकका कोई माद्दा नहीं होता। ये सूत्र-रूपमें पढ़ाते हैं और किसी विषयको ठीक ठीक समझाते नहीं।

ऐसी अवस्थामें तुम्हें चाहिये कि तुम अपने आप हंसीका माद्दा पैदा करो और जो विषय जैसा हो उसको उसी ढंगसे समझनेकी चेष्टा करो। ऐसे शिक्षकके पाले पड़कर तुम न तो उनके प्रति विद्रोही बनो और न अपना मन छोटा करो, नहीं तो तुम्हारा ही नुकसान होगा, उनका कुछ नहीं बिगड़ेगा। यह जाननेकी चेष्टा करो कि तुम्हारे शिक्षकका आखिर ऐसा कठोर स्वभाव क्यों है।

जो लड़का यह जानता है कि उसके शिक्षक उससे चिढ़े हुए हैं, वह उनका घोर विद्रोही बन जाता है और उन्हें चिढ़ानेके लिए सबक सुनानेमें जान-बूझकर बेवकूफ बन जाता है। उसके साथ जो अन्याय किया जाता है, वह उसका इसी तरह बदला लेता है। लड़केके मनका यह भाव मैं समझता हूँ और कुछ अंशोंमें मैं उसका पक्षपाती हूँ।

परन्तु साथ ही यह बात भी है कि यदि तुम चिढ़े हुए मास्टरको चिढ़ानेकी गरजसे अपना पाठ याद नहीं करते हो, तो तुम अपने भविष्यके लिए काँटे बोते हो।

अपने गुस्सैल शिक्षकके बारेमें तुमको यही सोचना चाहिये कि उन्हें कोई पीड़ा सता रही होगी या उन्हें अपनी घरवालीसे फिर झगड़ा होनेका अंदेशा होगा, इसलिए उनके दिमागका पारा चढ़ गया है। तुम्हें शिक्षकका इतना घोर विद्वेषी नहीं बनना

चाहिये कि उन्हें चिढ़ाये बिना और उनसे बदला लिये बिना तुमसे रहा ही न जाय।

आखिर, अभी कुछ समयके लिए अधिकार उनके हाथमें है। तुमपर उनका अनुशासन सदा नहीं रहेगा। तुम्हारे लिए सारा जीवन पड़ा है। उस जीवनमें उनका कोई स्थान नहीं रहेगा, पर उसमें उनके पढ़ाये हुए विषयका ज्ञान लाभदायक सिद्ध हो सकता है।

यही बात उस विद्यार्थीके सम्बन्धमें भी है जो सचमुच क्लासके साथ नहीं चल सकता और मास्टरोंका उपहासास्पद बनता है।

ऐसे विद्यार्थीको हताश और हतोत्साह नहीं होना चाहिये। मैं यह मानता हूँ कि दूसरोंकी दृष्टिमें हेय जचनेसे बढ़कर और कोई जघन्य बात नहीं है। वास्तवमें उस शिक्षककी अपने विषयमें जो कुछ राय है उसका समर्थन वह अपने छात्रका मजाक उड़ाकर करता है। ऐसे शिक्षकमें अवश्य ही कोई अन्दरूनी खराबी है।

यदि तुम ऐसे प्रहारोंके अस्थायी प्रभावसे ऊपर उठ सकोगे और यह निश्चय करके कि अपने मनको कुम्हलाने या मुरझाने नहीं दोगे, धीरताके साथ अथक परिश्रम करते रहोगे, तो अन्तमें औरोंकी तरह तुम भी क्लासमें आगे बढ़ जाओगे।

एक बात और भी ध्यानमें रखनेकी है। पुलिसके सिपाहीकी तरह शिक्षकका काम भी सदा सुख देनेवाला नहीं होता। यदि कोई शिक्षक किसी विषयका पंडित है और उसे वह विषय प्रिय है तो उसके लिए यह बड़ा ही कष्टकर होता है कि वह उस विषयकी केवल प्रारम्भिक बातें ही पढ़ाया करे और सो भी कभी कभी ऐसे छात्रोंको जो पढ़नेमें जान-बूझकर बेवकूफी या शरारत करते हों।

यदि शिक्षकके धैर्य्यका बाँध टूटता है तो वह इसलिए कि दिन-भरकी मगज-पच्चीके बाद तुम्हारी छोटी-मोटी बेवकूफी या शरारत उन्हें असह्य हो उठती है और वे सारे दिनका गुस्सा तुम्हींपर उतार देते हैं।

अपने शिक्षकके साथ, और आगे चलकर अपने मालिक, अफसर इत्यादिके साथ तुम्हें मिलनसारका रिश्ता बैठानेकी कोशिश करनी चाहिये और अपनेको उनका सिर्फ फर्मांबर्दार न समझना चाहिये।

तुम्हारे मित्र

अब हम तुम्हारे मित्रोंका विषय लेते हैं।

मैं समझता हूँ कि कुछ निश्चित आधारपर तुम अपने मित्र चुन लेते हो, अथवा यह भी कहा जा सकता है कि यह परस्पर-का चुनाव होता है, तुम जिससे मित्रता करना चाहते हो वह तुमसे मित्रता करना चाहता है।

जैसे बड़ी उम्रमें प्रेमी-प्रेमिका परस्पर आकर्षित होते हैं, उसी प्रकार आकर्षणके कुछ निश्चित नियमोंके कारण मित्र भी परस्पर एक दूसरेसे आकर्षित होते हैं।

तुम किसीकी ओर इसलिए आकर्षित हो सकते हो कि तुम्हें जिस विषयसे दिलचस्पी है उसे भी उसी विषयसे दिलचस्पी है, जैसे खेल-कूद, पुस्तक-संग्रह इत्यादि।

किसीसे तुम्हारा सम्बन्ध इसलिए स्थापित हो सकता है कि तुम जिन गुणोंके प्रशंसक हो और अपनेमें जिन गुणोंको देखना चाहते हो वे गुण उसमें मौजूद हैं, जैसे खेल-कूद या पढ़ने-लिखने-

में योग्यता। ऐसी अवस्थामें तुम संभवतः अपने मनमें अपने आपको वही मान लेते हो, और इसीलिए उसकी सफलताएं तुम्हें ऐसी जान पड़ती है मानों वे तुम्हारी अपनी सफलताएं हैं।

इसी तरह जब तुम देखते हो कि कोई व्यक्ति तुम्हारे गुणोंका प्रशसक है तब तुम्हें उससे सम्बन्ध स्थापित करनेमें प्रसन्नता होती है।

ऐसी मित्रता कोई आकस्मिक घटना नहीं होती। अतएव तुम्हें यह देखना चाहिये कि तुममें ऐसी कौन-सी बात है जिससे तुम्हारे मित्र आकृष्ट होते है और तुम उनकी ओर आकृष्ट होते हो।

उदाहरणके लिए मान लो तुम कुछ दुस्साहसिक हो और इस "गुण" को बनाये रखनेके लिए हर तरहकी शैतानी करते हो। किसी हद तक इसमें कोई बुराई नहीं है।

परन्तु यदि तुम्हारे प्रधान-प्रधान मित्र तुम्हारी ही तरह हिम्मतवर नहीं हैं और जो कुछ तुम कर सकते हो वह उनके किये नहीं हो सकता है, तो वे तुम्हारी तारीफके पुल बाँधने है और तुम्हें बढ़ावा देते हैं। इसका फल यह होता है कि तुम्हारी शैतानी बढ़ जाती है। तुम ऐसे ऐसे काम करने लगते हो जो मुनासिब नहीं है और पहले शायद तुम्हें खुद पसन्द न होते।

इस तरह, तुम्हें ऐसी खतरनाक बदमाशियोंके लिए उकसाया जा सकता है जो सचमुच आफत ढाती है। इससे भी बढ़कर यह खराबी होती है कि अपनी तारीफ सुननेका चस्का लग जाने-पर,—और अपनी तारीफ किसे अच्छी नहीं लगती—तुम दिन-दूनी रात-चौगुनी वाह-वाही चाहते हो और उसे हासिल करनेके लिए सारी जिन्दगी बुरेसे बुरा काम करनेपर आमादा रहते हो।

यदि तुम केवल ऐसे लोगोंसे घिरे रहते हो जो स्वाभाविक गुणोंमें तुम्हारी बराबरीके नहीं हैं, तो तुम्हें वह लाभ नहीं हो

सकता जो विद्या-बुद्धि-साहसमें अपनी टक्करके लोगोंका संग-साथ करनेसे हो सकता है।

प्रतिद्वन्द्विताके बिना तुम अहम्मन्य, अभिमानी और जरूरतसे ज्यादा आत्म-विश्वासी हो जाओगे। यदि तुम सच्ची प्रशंसा चाहते हो, तो अपने जीसे पूछो कि तुम प्रतिद्वन्द्विताका सामना क्यों नहीं कर सकते और क्यों छोटे-मोटे लोगोंकी ठकुर-सुहाती सुनकर फूले-फूले फिरते हो ?

शरारती लड़कोंके सरदार और अच्छे कसरती लड़के जिस तरहकी गलती करते हैं वैसी ही गलती 'मेधावी' कहे जानेवाले लड़कोंसे भी होती है।

जब वह देखता है कि उससे कम मेधावी बालक उसकी बड़ी प्रशंसा करते हैं तब वह अपना बनावटी प्रदर्शन करने लगता है और इसे कोई पसन्द नहीं करता। जो बालक अपनेको उससे नीचा समझता होगा वही ऐसे रँगे सियारसे मित्रता करना चाहेगा, और कोई उसका साथ नहीं चाहेगा।

स्कूलमें जिस बालकका प्रबल व्यक्तित्व होता है, विशेषतः जो शरीरसे भी बलवान होता है, उसके निर्बल मित्रोंका बर्ताव उसे दलका सरदार बननेके लिए उत्साहित करता है। फल यह होता है कि जिस हुड़दंगेकी प्रवृत्ति बीस वर्षकी अवस्था तक पहुंचते पहुंचते सुधर जानी चाहिये वह और भी पनप जाती है।

अब तुम समझ गये होंगे कि हम लोग अपने स्वभावके अनुसार उन्हीं लोगोंमेंसे अपने मित्र चुनते हैं जो हमारी प्रशंसा करते हैं या जिनके हम प्रशंसक हैं।

परन्तु जब तक गुण, स्वभाव, योग्यता, इत्यादिमें बराबरी न हो, तब तक न तो उपयुक्त मित्रता हो सकती है और न उपयुक्त प्रेम हो सकता है।

यदि हम अपने प्रशंसकोंमेंसे मित्र चुनें तो हमें इस बातके लिए सावधान रहना चाहिये कि उनकी प्रशंसाके प्रलोभनमें पड़कर हम अपनी शारीरिक, मानसिक और चरित्र सम्बन्धी शक्तिको इस प्रकार न पनपने दें कि अन्तमें हमें हानि उठानी पड़े।

यदि हम अपने मित्र उन लोगोंमेंसे चुनें जिनकी वीरता और योग्यताके हम स्वयं प्रशंसक हैं, तो हमें ध्यान रखना चाहिये कि हम अपनी सारी क्रियात्मक शक्ति उन्हें इस तरह न सौंप दें कि वे हमें जिधर जी चाहे हाँका करें।

मित्रतासे प्रथम प्रेमका आविर्भाव

तुम जानते हो कि बच्चोंको जिन वस्तुओंकी पहले-पहल आवश्यकता होती है उन्हींमें एक है—प्रेम। तुम बड़े होते हो पर तुम्हारी यह आवश्यकता बनी रहती है। पारिवारिक स्नेह, मित्रता और दाम्पत्य प्रेममें यह व्यक्त होती रहती है।

जब तुम तेरह-चौदह वर्षके होते हो, तब एक ऐसी अवस्थामें पहुँच जाते हो जिसमें प्रेमकी अभिव्यक्ति मूर्खता-सी जान पड़ती है। अपने चाचा या चाचीसे चुम्बनकी रस्म अदा करते हुए तुम्हारा मन बौखला पड़ता होगा, क्योंकि तुम्हें यह प्रथा निरर्थक जान पड़ती होगी और इसे करते हुए तुम्हें झिझक मालूम पड़ती होगी। ❀

प्रायः हम सभी लोग इस अवस्थासे गुजरते हैं। हममें अधि-

❀ अंग्रेजोंमें यह प्रथा है कि बड़ोंके प्रति स्नेहपूर्ण सम्मान-प्रदर्शनके लिए छोटे उन्हें चुम्बन करते हैं।

कांश लोग जब कुछ और बड़े और समझदार हो जाते हैं तब यह झिझक चली जाती है। जब हम देखते है कि हमारी माँ इस प्रकारके स्नेह प्रदर्शनसे प्रसन्न होती है तो उसकी प्रसन्नताके लिए हम झिझक छोड़कर उसे चुम्बन करते हैं और अपने कर्त्तव्यका पालन करते है। माँ निहाल हो जाती है।

जब उम्र काफी हो जाती है और अनुभव प्राप्त हो जाता है, तभी हम यह समझ पाते हैं कि उस समय माँके ऊपर क्या बीतती है जब वह हमारी राहसे अलग होकर हमे स्वतंत्र जीवन-यापन करनेका अवसर देती है और हम अनुभवहीन होनेके कारण जो भूल करते हैं, वह हमें उनसे बचा नहीं सकती। कर्त्तव्यपरायण माँका यही कर्त्तव्य भी है।†

यदि हमें माँकी इस ममताका बोध है तो हमें उचित है कि हम उसकी अबोध प्रसन्नताके लिए अपने विचारों या सिद्धान्तोंका यत्किंचित बलिदान करें।

बहुतेरे लड़के इसी तेरह-चौदह वर्षकी उम्रमें लड़कियोंसे भी झिझकने लगते हैं और उनसे कोई सम्पर्क नहीं रखना चाहते। लड़कियोंमें भी कभी-कभी ऐसी ही प्रतिक्रिया होती है।

इसका कारण यह है कि जन्मसे ही हम सबोंमें जो यौन-प्रवृत्ति छिपी रहती है वह इस समय अपने गुप्त स्थानमें हिलने-डुलने लगती है।

तुम्हारी पहली प्रतिक्रिया यह होती है कि तुम्हें इस प्रवृत्तिसे

---

† यूरोपमें भारतवर्षकी तरह सम्मिलित परिवार-प्रथा (Joint Family System) नहीं है। वहाँ पुत्र विवाह करनेके पश्चात् अपने माता-पितासे जुदा होकर अपनी स्त्रीके साथ स्वतंत्र जीवन व्यतीत करता है।

कुछ डर-सा लगता है क्योंकि तुम्हें जान पड़ता है कि तुम्हारे भीतर कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन हो रहा है, परन्तु वह क्या और कैसा है—यह तुम्हारी समझमें नहीं आता।

इसलिए इसके विरुद्ध तुम्हारी प्रतिक्रिया होती है। अपर योनिका अस्तित्व और प्रेमके ऊपरी दिखावेका अर्थ तुम्हारी समझमें आ जाता है और इससे जो स्वाभाविक आवेग तुममें पैदा होता है उसीके विरुद्ध तुम्हारी पहली प्रतिक्रिया होती है।

फिर भी तुम्हारे हृदयकी गहराईमें जमी हुई प्रेमकी भूख बढ़ने लगती है। तुम इसकी दिल्लगी भले ही उड़ाओ पर यह मनुष्यकी प्राकृतिक और अनिवार्य आवश्यकता है और तुममें भी वह वर्त्तमान है। सच तो यह है कि तुम जितनी ही इसकी दिल्लगी उड़ाओगे, यह तुम्हारे हृदयमें उतनी ही प्रबल होती जायगी।

बचपनके जाने और जवानीके आनेके बीचकी अवस्थामें प्रायः लड़कोंकी लड़कोंसे और लड़कियोंकी लड़कियोंसे बड़ी घनिष्ठ मित्रता हो जाती है। कभी कभी यह भी होता है कि लड़के मास्टरजीके और लड़कियाँ मास्टराइनजीकी भक्त हो जाती हैं।

तुम्हें याद होगा, क्योंकि तुम्हें बताया जा चुका है, कि प्रारम्भिक जीवनके कुछ रूप उभय-लिंगी होते थे अर्थात् एक ही जीवमें पुरुषत्व और स्त्रीत्व दोनों होते थे।

अन्तमें प्रकृतिने योनि-विभाजनकी प्रणाली चलायी क्योंकि विभिन्न वंशवालोंके मेलसे बहु-विभिन्न लक्षणोंवाली संतानकी सृष्टि करनेका यही सर्वोत्तम उपाय था।

परन्तु जीवनकी प्राचीन उभय-लिंगी-प्रणालीके अवशिष्ट चिह्न प्राकृतिक जगत्में सर्वत्र पाये जाते हैं।

जब शिशुका जन्म होता है तब उसकी बाहरी उत्पादक इन्द्रि-

यको देखकर ही उसे लड़का या लड़की जाना जाता है। इस छोटेसे चिह्नको छोड़कर और कोई लक्षण उसके शरीरकी बनावटमें ऐसा नहीं होता जिससे लड़के या लड़कीको पहचान हो सके।

तुरन्तकी जनमी लड़कीके स्त्रीत्वका चिह्न इतना छोटा होता है कि मुश्किलसे दिखायी पड़ता है। उसकी जड़ पुरुषका चिह्न भी हो सकती थी यदि गर्भमें उस लड़कीका विकास लड़केके रूपमें होता। इसी तरह लड़के या मर्दकी छातीकी भिटनियाँ भी उपयोगी हो सकती थी यदि गर्भमें उसका विकास लड़कीके रूपमें होता।

इस तरह तुम देखते हो कि प्रत्येक स्त्री-पुरुषमें अपर योनिकी शारीरिक बनावटका सूक्ष्म अंश वर्त्तमान है। पुरुष और स्त्रीके विभिन्न गुण और स्वभावके विषयमें भी यही बात है कि एकके गुण और स्वभावकी रचना दूसरेमें सूक्ष्म रूपसे हो जाती है।

यद्यपि हम जान नहीं पाते, तथापि हमारे सारे बचपनमें हमारी यौन-प्रवृत्ति निश्चित गतिसे चुपचाप काम करती रहती है। विरासतमें पायी हुई पीढ़ियोंकी मातृत्व-स्मृति लड़कीमें गुड़िया खेलनेकी प्रवृत्ति पैदा करती है। इसी तरह विरासतमें पायी हुई युगोंकी आखेट और युद्धकी स्मृति लड़केको अड़बड़ खेलोंकी ओर झुकाती है।

फिर तेरह-चौदह वर्षकी अवस्थामें यौन-प्रवृत्ति ज्यादा तेजी और जोरोंसे काम करने लगती है। हम प्रत्येक मनुष्यमें स्थित पुरुष और स्त्री-तत्व कुछ समयके लिए बड़ा जोर पकड़ते हैं।

इस समय हम एक ऐसी अवस्थामें पहुँचते हैं जब हमें दोमें से किसी भी योनिके मित्रोंके प्रति प्रगाढ़ प्रेम हो जाता है। यह यौन-प्रेम नहीं होता क्योंकि यौन प्रेमके लिए हम इस समयतक पूर्ण विकसित और योग्य नहीं हो पाते; परन्तु मानवी प्रेम और

मानवी यौन-क्रियामें इतना अधिक निकट सम्बन्ध है कि यौन-प्रेमकी प्रबलता भी हो सकती है क्योंकि इस समय यौन-प्रवृत्ति पूर्ण रीतिसे क्रियाशील होने लगती है।

बीस वर्षकी अवस्थाके नीचे लड़कों और लड़कियोंका अपनी ही 'जाति'या योनिवालोंसे प्रगाढ़ प्रेम होना स्वाभाविक है। लड़के लड़कोंसे प्रेम करते हैं और लड़कियाँ लड़कियोंसे अथवा अपनी ही योनिके शिक्षक या शिक्षिकाके प्रति उन्हें स्नेह हो जाता है।

जो माता-पिता इस बातको नहीं समझते हैं और अपनी सन्तानके मनमें यह बैठानेकी चेष्टा करते है कि ऐसी मित्रता गन्दी हैं, वे बहुत बड़ी भूल करते हैं।

यदि तुम लड़के हो और बारहसे सोलह वर्षकी अवस्थामें तुम्हारी घनिष्ठता किसी ऐसे लड़केसे हो जाती है जिससे पहले तुम्हारा कुछ स्नेह था तो इसमें कोई हानि नहीं है क्योंकि विकास की जिस स्थितिमें तुम पहुचे हो उसका यह स्वाभाविक परिणाम है।

इस घनिष्ठ मित्रताके विरुद्ध तुम्हारे माता-पिताकी जो प्रतिक्रिया होती है, वह ठीक वैसी ही है जैसी चोरीकी सजा देते समय उन्हें हुआ करती थी। इसका वर्णन उन्नीसवें अध्यायमें किया जा चुका है।

यदि बीस वर्षकी अवस्थाके बाद भी तुम अपनी ही योनि या 'जाति'के व्यक्तियोंसे घनिष्ठ सम्बन्ध रखते रहो तो यह मानना पड़ेगा कि तुम्हारे स्वाभाविक विकासमें कोई बहुत बड़ी गड़बड़ी हो गयी है। तुम्हारे माता-पिताको इसीकी चिन्ता होती है और इसीलिये वे तुमपर कड़ाई करते हैं, परन्तु यही उनकी गलती है क्योंकि उनकी कड़ाईसे वही बात पैदा हो सकती है, जिसे वे रोकना चाहते हैं।

जब कोई युवक अप्राकृतिक ढंगसे यौन-क्रियाकी बात सीखता

है तब उस विषयमें उसकी भ्रान्त धारणाएं हो जाती हैं और वह केवल अपनी ही योनिके व्यक्तियोंसे घनिष्टता रखता है। ऐसे आचारणको 'अप्राकृतिक क्रिया' कहते हैं।

यह बहुत ही दुःख, क्षोभ और लज्जाकी बात है क्योंकि जिसके ऐसे आचरण होते हैं, वह जीवनमें कोई सुख नहीं उठा सकता।

यदि 'घनिष्ठ-मित्रता' या 'श्रद्धा-भक्ति' सीमाके भीतर ही रहती है और उसे लाँघती नहीं है तो माता-पिता, शिक्षक लड़का या लड़की—किसीके लिए भी चिन्ताकी कोई बात नहीं है।

उक्त आचरणकी प्रतिक्रिया होनेपर युवकको युवती मित्र और युवतीको युवक मित्रकी तलाश करनी चाहिये।

अध्याय २२

पुरुषत्व या स्त्रीत्व प्राप्त होनेपर

अब हम एक ऐसी अवस्थापर आते हैं जो कुछ लोगोंके लिए कठिन होती है। पता नहीं, तुम्हें यह अवस्था कैसी जान पड़ी।

यह सच है कि यदि तुम्हारा गृह-जीवन सुख-पूर्ण हो और तुम्हारे माता-पिता बुद्धिमान हों तथा तुम्हें पहलेसे ही इस ज्ञानकी शिक्षा मिली हो कि मनुष्यत्वके विकासके लिए कौन कौन-सी अवस्थाएं होनी चाहिये तो बहुत सम्भव है कि तुम इस कठिन मार्गको बड़ी सरलतासे तय कर लोगे।

दुर्भाग्यवश, बहुतेरे लोगोंको लड़कपनसे जवानीमें कदम रखते हुए इस बातका कोई ज्ञान ही नहीं होता कि उन्हें किन परिवर्तनोंका सामना करना पड़ेगा। इसीलिए उन्हें इस अवस्थाकी बहुत-सी बातें अचरज-भरी जान पड़ती हैं।

इस स्थलपर अपनी पाठिकाओंसे क्षमाप्रार्थना करते हुए यह निवेदन करना अनुचित न होगा कि इस पुस्तकमें मैंने 'लोग', 'बालक', 'पुरुषत्व'--इत्यादि पुंल्लिंग-वाची शब्दोंका ही अधिकतर प्रयोग किया है, परन्तु इनसे प्रयोजनानुसार 'स्त्रियाँ', 'बालिकाएं', 'स्त्रीत्व'—इत्यादिका तात्पर्य निकाल लेना चाहिये। मुझे विश्वास है, तुमने मेरा तात्पर्य सरलतासे समझ लिया होगा। तुम इस कठिनाईको भी समझ रही होगी कि बालक और बालिकाके लिए पदपदपर अलग-अलग एकार्थी वाक्य लिखे जायं तो उन्हें पढ़ते हुए कितना जी ऊबेगा। जो वाक्य प्रायः बालकोंको सम्बोधन करके

लिखे गये हैं उन्हें बालिकाओंके लिए भी समझना चाहिये और 'पुरुषत्व' इत्यादि शब्दोंसे 'स्त्रीत्व' इत्यादिका भी बोध होना चाहिये। इसके बिना काम नहीं चल सकता। यह कोई स्त्रियोंके प्रति अनादर नहीं है, बल्कि पुनरुक्तिसे बचनेके लिए ही ऐसा करना पड़ा है। साथ ही यह बात भी है कि चूँकि मैं पुरुष हूँ, इसलिए मेरे मनमें पुरुष-सम्बन्धी विचार ही पहले आते है।

पुरुषवाची शब्दोंके व्यवहारसे यह न समझना चाहिये कि मैं स्त्रियोंको जीवन-क्रममें निम्न श्रेणीका जीव समझता हूँ या जीवन-प्रणालीमें उनके महत्वको भूल गया हूँ।

अतएव पाठिकाओंसे अनुरोध है कि वे मेरे इस स्पष्टीकरण और क्षमाप्रार्थनाको स्वीकार करें।

अब हम किशोरावस्था अर्थात् लड़कपन और जवानीके बीचकी अवस्थापर पुनः लौटते हैं। इस अवस्थामें कुछ लड़के-लड़कियोंको दिक्कतोंका सामना करना पड़ता है।

तुम यह समझ चुके हो कि किसी तरह बचपनसे तुममें आत्मरक्षा और आत्मप्राधान्यस्थापनकी प्रवृत्तियाँ और प्रेम, साहचर्य और ज्ञानकी आवश्यकताएँ काम किया करती हैं।

प्रधानतया इनके फल अच्छे होते हैं। तुम बड़े होते हो, शिक्षा प्राप्त करते हो और तुम्हारा विकास होता है। परन्तु यदि इन प्रवृत्तियों और आवश्यकताओंको नियंत्रित न रखा जाय तो इनसे कभी-कभी कुछ हानि भी होती है। तुम लड़ते-झगड़ते हो, झूठ बोलते हो, छोटी-मोटी चीजें चुराते हो। ये सब बातें हम सभी लोग कभी न कभी कर चुके है।

तुम निम्नलिखित बातोंका ज्ञान प्राप्त करते हुए अपना बचपन बिताते हो—

१. तुम 'तुम्हीं' हो।

२. तुम्हारे ही जैसे और लोग भी हैं जिन्हें तुम्हारे ही समान जीने और सुखी होनेका अधिकार है।

३. तुम एक मोहक संसारके घेरेमें हो, जिसमें छान-बीन करनेकी और जाननेकी ढेरों सामग्रियाँ हैं।

४. इस संसारमें अनेक शताब्दियोंका ज्ञान संचित है। उसकी परीक्षा करना बड़ा रोचक है।

५. संसारमें आदान-प्रदानके लिए मित्रता और प्रेम हैं।

६. तुम सफल होकर प्रशंसा प्राप्त करते हो और असफल होकर हतोत्साह होते हो।

जिन उपायोंसे तुम यह ज्ञान प्राप्त करते हो, उनसे तुम्हारा चरित्र बहुत ही प्रभावित होता है। किसी किसी अवस्थामें चरित्रपर बुरा प्रभाव भी पड़ता है।

यह तुम्हारा काम है कि अपनी जाँच-पड़ताल आप करो और यदि तुममें किसी बातका कोई हानिकारक प्रभाव पड़ता हो तो उसे अभी सुधार लो। आगे चलकर यह काम बहुत कठिन हो जायगा और फिर शायद इसके लिए समय ही नहीं रहेगा।

इस समय तुम ऐसी अवस्थामें पहुँचे हो कि जो यौन-प्रवृत्ति तुम्हारे जन्मकालसे तुममें धीरे-धीरे पनपती और काम करती आ रही है, वह अपनी पूरी क्रियाशीलता आरम्भ करती है। यह नाना प्रकारसे अपनी सत्ता तुमपर प्रकट करती है। इसके कुछ ढंग तो ऐसे होते हैं जिनसे तुममें बहुतेरी अन्दरूनी समस्याएँ उठ खड़ी होती हैं।

मेरे विचारसे, इस विषयमें आगे बढ़नेसे पहले यह अच्छा होगा कि तुम इस स्थलका पढ़ना यहीं बन्द कर दो और प्रथम भागमें 'जननक्रिया-मण्डली' वाले अध्यायको फिर एक बार पढ़ लो।

मनुष्योंमें यौन-जीवन

उस अध्यायमें मैंने कहा है कि मनुष्योंके यौन-जीवनके साथ कई बातोंका गहरा सम्बन्ध है। इसमें स्त्री-पुरुषके परस्पर शारीरिक समागमकी आवश्यकता पड़ती है जिससे सन्तानोत्पत्ति होती है। इसमें हृदयकी भावनाका भी लगाव होता है जो भावना पशुओंमें बहुत ही कम होती है। इसीलिए स्त्री-पुरुषके पारस्परिक प्रेम और इच्छाकी आवश्यकता पड़ती है। इसमें चरित्रका दृष्टिकोण भी होता है। यदि स्त्री और पुरुष एक साथ रहते-बसते हैं तो उनका पारस्परिक सम्बन्ध क्या है और वे इस सम्बन्धमें सुखी है या नहीं—इन स्थितियोंका बहुत बड़ा प्रभाव उनके चरित्रके विकासपर पड़ता है। इसे आत्मिक दृष्टिकोण भी कह सकते है।

अतएव जब यौन-भावना किशोर-अवस्थामें तुममें जोर पकड़ती है तब वह तुम्हारे अन्तस्तलको व्याकुल कर देती है। इसमें आश्चर्यकी क्या बात है? तुम्हारा यौन-जीवन तुम्हारे शरीर, हृदय भाव और चरित्र—इन तीनोंसे सम्बन्धित है।

किशोरावस्थाकी समस्याएँ

अब तक तुम्हारे शरीरका मुख्य काम रहा— बढ़ना या पनपना। माँके गर्भसे तुम नन्हें-से पैदा हुए थे पर अब माता-पितासे बड़े नहीं तो उनकी बराबरीके हो गये हो।

अब तुम्हारा शरीर अपने बढ़नेकी शक्तिको उन दिशाओंमें लगाता है जिनसे तुममें पूर्णता आती है और तुम वयः प्राप्त जीवनके योग्य बनते हो। बालकका कंठ फूटता है और उसके स्वरमें मर्दानगी आती है।

ये बातें विभिन्न व्यक्तियोंमें विभिन्न अवस्थाओंमें हुआ करती है। इनके लिए कोई निश्चित नियम नहीं है। ये बातें ग्यारह वर्षकी उम्रमें भी शुरू हो सकती हैं और किसी-किसीमें पन्द्रह सोलह वर्षकी अवस्था तक भी नहीं हो सकतीं। ये बातें लड़कोंकी अपेक्षा लड़कियोंमें कुछ शीघ्र होती हैं।

यदि इन वस्तुओंका विकास तुममें कुछ देरसे हो तो चिन्तित होनेकी कोई बात नहीं है। जैसे शारीरिक या मानसिक विकासमें बहुतोंको देर लगा करती है वैसे ही इसे भी समझना चाहिये। प्रकृति किसी भी कामके लिए अपना पूरा समय लेती है। बस, यही बात है।

मैं तो यही आशा करता हूँ कि इन आनेवाली घटनाओंकी बात तुम्हें पहले ही बता दी गयी होगी। जो विकासकी प्राकृतिक अवस्थाएं अवश्य ही आयगी उनके विषयमें बालक-बालिकाओंको अन्धकारमें रखना मूर्खता है क्योंकि इससे उन्हें व्यर्थकी चिन्ता होती है।

मुझे याद है, एक ग्यारह वर्षकी छोटी-सी लड़कीको छातियोंमें कुछ दर्द-सा जान पड़ने लगा। यह काहेका दर्द है—यह ठीक ठीक उसे किसीने नहीं बताया। न तो उसके माता-पिताने और न उसके स्कूलके डाक्टरने। सबने कह दिया—'यह कुछ नहीं है।'

यह 'कुछ नहीं' कैसे हुआ? यही स्वाभाविक और तर्क-सिद्ध प्रश्न उस लड़कीके मनमें उठा। उसने जितने रोगोंके नाम सुन रखे थे, अज्ञानके कारण उन सबकी ओर उसका ध्यान दौड़ने लगा और वह सोचने लगी कि उनकी शुरुआत इसी तरहके दर्दसे होती होगी।

उसके कोई रोग नहीं था। उसकी यौन-प्रवृत्तिने अपना

महत्वपूर्ण काम आरम्भ कर दिया था, इसलिए उसके बाल-शरीरमें यौवनका विकास होने लगा था।

उसकी छातीकी गिल्टियाँ क्रियाशील होने लगी थीं। ये स्त्री-जीवनके लिए आवश्यक होती हैं। दो-एक वर्षमें लड़कीकी यह शिकायत जाती रही और उसकी छातीकी आकृति स्वाभाविक तौरपर गोलमटोल और उभारदार हो गयी। इसकी क्या जरूरत है कि बालिका अपने शरीरके प्राकृतिक विकारको रोग समझकर चिन्तित हो? यह इसीलिए न कि बड़े-बूढ़ोंमें इतनी समझ नहीं होती कि वे उसे वस्तुस्थिति समझा दें? लड़कियोंके समान ही लड़कोंको भी ऐसी समस्याओंका सामना करना पड़ता है। फिर भी, लड़कोंकी परिपक्व अवस्था बहुत धीरे-धीरे आती है, इसलिए उनकी समस्याएँ इतनी चटपट नहीं आती हैं जितनी कि लड़कियोंकी।

प्रथम मासिक रजोदर्शन होनेपर लड़कीका यह समझना स्वाभाविक है कि यह घटना बाल्यजीवनसे पूर्ण स्त्री-जीवनमें प्रवेश करनेकी सूचना दे रही है। पूर्ण-पुरुष-जीवनमें प्रवेश करनेकी ऐसी कोई निश्चित तिथि लड़कोंके लिए नहीं होती। हाँ, कुछ लड़के जब पहले-पहल अपनी दाढ़ी बनाते हैं, तब उसे ऐसी ही घटना समझते हैं।

कभी-कभी कुछ लड़कियाँ अपनेमें लड़कोंसे इस तरहका अन्तर देखकर मूर्खतावश मन ही मन खिजलाती हैं। उनके मनमें प्रश्न उठता है कि लड़के तो भले-चंगे और मौजसे रहते हैं, फिर हमें ही क्यों खामखाह इस तरहके ला-इलाज और बँधे हुए मासिक झमेलेमें पड़ना पड़ता है?

यदि मेरे कहेका बुरा न माना जाय, तो मैं यही कहूँगा कि ऐसा सोचना समझदारी नहीं है।

जब बालिकाके वक्षस्थलकी ग्रन्थियाँ विकसित होकर पूर्ण सौन्दर्य और उपयोगिता प्राप्त करती हैं और मासिकधर्म उसे माता बननेकी योग्यता प्रदान करता है तब उसे यही अनुभव करना चाहिये कि केवल तरुणावस्थाके विकासके कारण ही नहीं, बल्कि इस गौरवमय गर्वसे भी उसका वक्षस्थल फूल उठा है।

उसे केवल पत्नी ही नहीं बल्कि माता होनेका भी दैवी आशीर्वाद मिला है। पुरुष इस आशीर्वादसे वंचित है। अतएव बालिकाको चाहिये कि वह पुरुषत्वका दम्भ करनेवाले युवाओंको तरह दे।

कुछ बिना दिये जीवनमें कुछ नहीं मिल सकता। जिस मातृत्वकी महान् पूर्णताकी प्राप्तिसे पुरुष वंचित होते हैं, उसका मूल्य स्त्रियोंको किंचित कष्ट-सहनके रूपमें चुकाना पड़ता है।

यदि तुम लड़की हो, तो मैं यह आशा करता हूँ कि मासिक-धर्मकी अवस्था प्राप्त करनेके पहले ही तुम्हें उसके सम्बन्धमें होनेवाली बातें बतला दी गयी होंगी। जिन लड़कियोंको इन बातोंका ज्ञान नहीं होता, वे प्रायः इस प्राकृतिक घटनाके होते ही बहुत डर जाती है।

इस प्राकृतिक घटनाके बारेमें हदसने और शर्मानेसे किसी-किसी लड़कीको व्यर्थकी शारीरिक पीड़ा और मानसिक चिन्ता हो जाती है।

तुम्हें याद होगा, क्योंकि हम बता चुके हैं, कि मनुष्यके शरीर और मन एक साथ मिलकर काम करते है। मासिक-धर्मके अकस्मात् प्रकट होनेसे जिस लड़कीको हदस या चिन्ता होती है, उसके मनका यह प्रभाव उसके शरीरपर पड़ता है। इसलिए उसे मासिक-धर्मके समय पीड़ा होती है।

इसमें सन्देह नहीं कि जब पहले-पहल मासिक धर्म होता है

तब कुछ लड़कियोंके अधिक स्राव हो सकता है और उन्हें बेचैनी भी हो सकती है। शरीर जबतक इस नयी अवस्थासे अभ्यस्त नहीं हो जाता, तब तक ये शिकायतें बनी रह सकती है।

मानसिक प्रभावसे भी ये शिकायतें हो सकती है। यदि तुम्हें भी ये शिकायतें मानसिक प्रभावके कारण होती हों तो तुम्हें यह विचार अपने मनमें अच्छी तरह बैठा लेना चाहिये कि यह क्रिया सर्वथा प्राकृतिक और आवश्यक है और संसारमें सभी स्त्रियोंके होती चली आ रही है। इसमें कोई भय या लज्जाकी बात नहीं है।

अब मैं लड़कोंसे कुछ कहना चाहता हूँ। लड़कियोंके स्त्रीत्वकी तरह तुममें पुरुषत्वके लक्षण एकाएक प्रकट नहीं होते। हाँ, समय-समयपर तुम्हें तंग करनेवाली कुछ बातें हो सकती हैं।

दिक्कत पैदा करनेवाली एक आम बात होती है और वह है, स्वप्नदोष। अण्डकोषोंमें बना हुआ वीर्य रातको शिश्नके द्वारा तुम्हारे शरीरसे बाहर निकल जाता है। जब ऐसा होता है, तब तुम्हें प्रायः विचित्र स्वप्न दिखायी पड़ते है अथवा तुम एकाएक जाग पड़ते हो और क्या स्वप्न देखा था—यह तुम्हें याद नहीं रहता।

यह केवल इसी बातका लक्षण है कि प्रकृतिने तुममें अपना कार्य आरम्भ कर दिया है। जिस तरह तुम किसी इंजिनको व्यवहारमें लानेके पहले उसकी आजमाइश करते हो, इसी तरह प्रकृति भी अपने बनाये हुए यंत्रकी परीक्षा करती है।

यदि ऐसे लड़कोंको या मासिक धर्मकी अवस्थामें पहुँचनेवाली लड़कियोंको स्वप्नदोष होता हो, तो यह कोई चिन्तित होनेका विषय नहीं है। बल्कि विपरीत इसके कि यह न हो, इसका होना जरूरी है। यदि यह कतई न हो, तो अवश्य चिन्ताकी बात है।

साथ ही, तुम्हें यह न सोच लेना चाहिये कि तुम्हें स्वप्नदोष होने लगा है, इसलिए अब तुम प्रेम करनेके, पति बननेके और पिता होने के योग्य हो गये हो।

हम यह ठीक नहीं बता सकते कि किस उम्रमें लड़के या लड़कीमें यौन-परिपक्वता आती है। यौन-विकासकी क्रिया बहुत धीरे-धीरे होती है। साथ ही, जैसा कि तुम्हें आगे समझाया जायगा, शरीरके तैयार हो जानेपर हम तुरन्त ही क्रियाशील यौन-जीवन क्यों नहीं आरम्भ कर देते—इसके कई कारण हैं। हमारे मन और आवेगोंको भी तैयार होनेकी आवश्यकता है। ये सब बातें एक साथ जल्दी नहीं होतीं।

कभी-कभी ऐसा भी होता है कि लड़केका शिश्न सीधा तन जानेका थोड़ा बहुत अभ्यास अपने आप होने लग जाता है। इससे लड़केको शर्म आती है यद्यपि वह जानता है कि यह जो कुछ होता है, वह बिना उसकी इच्छाके होता है। यौन-विषयसे सम्बन्धित पुस्तकों, चित्रों या संगी-साथियोंकी गपशपसे भी उत्तेजना हो सकती है।

यदि तुम्हें ये बातें होती हों, तो यह सोचकर दुखी मत हो कि तुम कोई बुराई या पाप कर रहे हो।

वंशपरम्परासे यौन क्रिया-प्रणाली चली आ रही है। इसने तुम्हें जन्म दिया है। इसकी पैतृक या मौरुसी स्मृति तुम्हारे अचेतन मनपर अंकित है। तुम्हारे शरीरमें भी नवीन यौन उत्तेजना होती है। ये सब वस्तुएँ सम्मिलित रूपसे काम करती हैं और तुम्हें पुरुषत्व प्राप्त करनेके योग्य बनाती हैं।

यह जो कुछ होता है बिल्कुल स्वाभाविक और साधारण बात है। यह कोई लज्जाजनक भयंकर रोग नहीं है कि इसकी सूचना माता या पिताको पत्र लिखकर दी जाय। अपने संगी-साथियोंको

ऐसा मौका मत दो कि वे इस विषयकी अश्लील और गन्दी चर्चा करके या दिल्लगी उड़ाकर तुम्हारी स्वाभाविक स्थितिपर कीचड़ उछालें। उन लोगोंकी इन हरकतोंसे यही प्रकट होगा कि वे लोग अबोध हैं और प्रकृतिके सुन्दर नियमोंसे अनभिज्ञ हैं।

अब तक मैंने यौन-क्रियाशीलताकी केवल ऐसी ही बातें बतायी है जिनसे तुम्हारी अपनी इच्छाका कोई सम्बन्ध नहीं है। ये बातें अपने-आप होती हैं और अन्यान्य लोगोंकी तरह तुमपर भी बीती होंगी।

अब मैं एक अन्य प्रकारकी यौन-क्रियाशीलताके विषयपर आता हूँ। यह भी प्रायः सभी लोगोंमें होती है पर इसमें उनकी इच्छाका भी सम्बन्ध रहता है।

कुछ लड़कियाँ और लड़के बहुत छोटी उम्रमें ही यह जान जाते हैं कि गुप्त अंगको छूनेसे एक आनन्द-दायक सनसनाहट-सी मालूम पड़ती है। शरीरके किसी अंगको केवल छूनेमें कोई दोष नहीं। स्त्री और पुरुषके अंगोंकी शैली कुछ विभिन्न होनेपर भी उनके अंग एक दूसरेके समतुल्य होते है। शरीरके किसी भागकी अपेक्षा कोई दूसरा भाग कम पवित्र और कम प्रशसनीय भी नहीं है।

परन्तु यह सच है कि कुछ लड़कियाँ और लड़के यह पता पा जाते है कि जननेन्द्रियको छूने या सहलानेसे जैसी सनसनाहट होती है वैसी अन्य अंगोंको छूनेसे नहीं होती। इस तरीकेसे सनसनाहट पैदा करनेका नाम 'हस्त-क्रिया' है।

इस आविष्कारके लिए किसी लड़के या लड़कीको दोष नहीं दिया जा सकता। हम क्यों न किसी भेदका पता लगायें, चाहे वह संसारसे सम्बन्धित हो या हमारे अपने शरीरसे? चूंकि जीवनका एक मुख्य काम है ज्ञान प्राप्त करना, इसलिए बालकके

मनमें यह जाननेकी इच्छा होना स्वाभाविक है कि उसके किस अंगसे क्या काम लिया जा सकता है। कितने ही माता-पिता और शिक्षकोंको इस तरहकी कार्रवाईमें बहुत बड़ा दोष दिखायी देता है। उनका अधिकतर यही विश्वास होता है कि उनके बालककी ऐसी कार्रवाईका बड़ा ही अनर्थकारी परिणाम होगा।

ये लोग बालकके भविष्यकी चिन्तासे व्याकुल होकर उसे इस बुरी तरहसे डाँटते-फटकारते हैं और अपनी नाराजगी दिखाते हैं कि वह यही समझता है कि उससे सचमुच घोर अपराध बन पड़ा है।

सच तो यह है कि यदि हस्तक्रिया किसीने की है तो यह उसके विकासकी एक सूरत है और जो विकासकी सूरतें तुम्हें बतायी गयी हैं, उन्हींकी तरह यह भी बीत जायगी।

इसका कोई बुरा प्रभाव नहीं होता, क्या शारीरिक और क्या मानसिक। हाँ, डाँट-डपटके डरसे या डाँटे-डपटे जानेसे इसके विषयमें जो ग्लानि और लज्जा होती है, उसका कुछ आघात मनको अवश्य लगता है।

यह सत्-असत्-कर्मका प्रश्न नहीं है बल्कि यह साधारण बुद्धिगम्य विषय है। अतएव जिस बालक या बालिकाने अपनी जननेन्द्रियमें छिपी हुई सनसनाहटका भेद पा लिया है, मैं सीधे उसीसे कुछ साफ-साफ बातें कहना चाहता हूँ।

यदि तुम्हारी यौन-प्रवृत्ति यहाँ तक बढ़ गयी है कि आवेगके वशीभूत होकर तुमने हस्तक्रिया की या अब भी करते हो तो चित्तको दुखी मत करो, तुमने कोई बहुत बड़ी गलती नहीं की है।

गलती न होनेपर भी यह ऐसी चीज जरूर है जिससे बचनेका प्रयत्न करना चाहिये।

मनके बहुतेरे आवेगोंको हमें दबाना पड़ता है यद्यपि वे बिल-

कुल स्वाभाविक होते हैं। हाजत मालूम होते ही टट्टी या पेशाब करना बिल्कुल स्वाभाविक है, पर यदि तुम सब जगह और सब समय यह हाजत रफा करते फिरोगे तो तुम्हारी भद्द होगी।

इसी तरह हस्तक्रियाको भी स्वाभाविक कहा जा सकता है। परन्तु इससे बचनेका प्रयत्न क्यों करना चाहिये—इसके कई कारण हैं। उन कारणोंपर विचार करना उचित और समझदारीका कम होगा।

किसी कामको बार-बार करते रहनेसे हमारे मन और शरीरको उसकी बान पड़ जाती है। एक बार धूम्रपान करना आरंभ कर दो तो देखोगे कि उसका छूटना कठिन हो जायगा। फिर यही कहोगे कि नाहक यह आदत डाली।

यही बात हस्तक्रियाके विषयमें भी है। यदि यह बार-बार की जाती है तो इसकी ऐसी कुटेव पड़ जाती है कि इसके बिना कुछ अच्छा ही नहीं लगता। यद्यपि तुम्हें इस समय इससे कुछ आनन्द मिल सकता है, फिर भी प्रेम और विवाहके सुखकी आशा रखते हुए क्या तुम जीवनभर यही आदत बनाये रखना चाहते हो?

इसीके साथ आत्म-सयमका प्रश्न भी लगा है। संयम बहुत बड़ा बल है और उसे अभ्याससे ही प्राप्त किया जा सकता है।

आत्मसंयमका प्रयत्न करनेसे इच्छा वशमें होती है। आत्मसंयमको सदाचरणका प्रश्न बनानेकी आवश्यकता नहीं और संयमका प्रयत्न करते हुए यदि कभी मन फिसल जाय, तो ग्लानिसे अपनेको हेय नहीं समझना चाहिये।

यह बड़े आश्चर्यकी बात है कि संसारमें जो मनुष्य व्यापार इत्यादिमें बड़े ईमानदार होते हैं और निष्कपट व्यवहार करते

है उनका बहुधा यही विचार होता है कि प्रेम करनेमें वे किसी तरहकी भी धोखा-धड़ीसे काम ले सकते हैं। *

जो मनुष्य जीवनके अन्यान्य विषयोंमें आत्मसंयमका पालन करते है और उसमें विश्वास रखते हैं, वे यौन-जीवनमें बहुधा उसका बहिष्कार कर देते हैं।

हमलोग नित्य ही तो सुनते हैं कि 'प्रेम' के नामपर हत्या-काण्डसे लेकर घर बिगाड़ने तकके सब दुराचरण और दुष्कर्म किये जाते हैं।

"प्रेम" का यह औपन्यासिक और फिल्मी दृष्टिकोण है। सबसे बढ़कर यही संसारको नुकसान पहुँचा रहा है।

कोई कारण नहीं है कि इज्जत-आबरू और भद्र आचरणके जो नियम व्यापार और सामाजिक जीवनमें बरते जाते हैं वे पूरे तौरसे यौन-जीवनमें भी क्यों न काममें लाये जायँ। परन्तु मैं समझता हूँ कि इसका एक बहुत बड़ा कारण है।

इन नियमोंका पालन उसी अवस्थामें होता है जब मनुष्य अपने वशमें रहता है। इसलिए यदि तुम अभीसे अपनी यौन-प्रवृत्तिपर नियंत्रण रखनेकी आदत डालोगे तो इससे तुम्हारी ही भलाई होगी।

इसके विपरीत यदि तुमने हस्तक्रियाकी आनन्ददायक सनसनीका रास्ता खोज निकाला है, और वह इसलिए नहीं कि उसके

---

* अंग्रेज-जाति एक वणिक-जाति है। वह व्यापारिक ईमानदारी और खरे व्यवहार (Honest dealings in business) को बहुत महत्व देती है। व्यापारमें धोखा-धड़ी बहुत बुरी समझी जाती है। ऐसी ही ईमानदारी 'प्रेम' करनेके सम्बन्धमें बहुधा नहीं बरती जाती है—लेखकका यहाँ यही तात्पर्य है।

लिए तुम्हारी बलवती इच्छाने जोर मारा, बल्कि इसलिए कि तुम जान-बूझकर एक अप्राकृतिक आवेश पैदा करना चाहते हो, तो तुमने चाहे गलती न की हो, पर बेवकूफी जरूर की।

इस जरासी सनसनाहटकी अपेक्षा स्त्री-पुरुषके वास्तविक समागममें इतना अधिक आनन्द आता है कि कह नहीं सकते, पर भविष्यमें आनेवाले उस असली चीजके असली आनन्दको तुम स्वयं अपनेसे छीन रहे हो।

यदि तुमने ऐसी बेवकूफी कभी नहीं की है, तो मुझे तुमसे कुछ भी नहीं कहना है और इसका कारण मैं पिछले पृष्ठोंमें बता चुका हूँ।

इस बातपर सदा ध्यान रखो कि नकली जोश और सनसनाहटके साथ पूर्ण समागमके आनन्दकी कोई तुलना ही नहीं हो सकती।

मनुष्यकी बनावट ही कुछ ऐसी है कि यौन-प्रवृत्तिका जहाँ तक शरीरसे सम्बन्ध है, वह उसके वयस्क जीवनका एक भाग मात्र है। हृदयकी भावना और चरित्र वैसा ही महत्वपूर्ण दूसरा भाग है। यह तो तुम चाहते नहीं कि अपने यौन-जीवनमें तुम अकेले ही रहो। अन्य व्यक्तिके साथ समागमका यही अर्थ है कि एककी कमी दूसरीसे पूरी होती है।

पुरुष और स्त्री जुदा-जुदा हैं। पुरुषमें शारीरिक शक्ति होती है, पर उसे कोमलता और सान्त्वनाकी आवश्यकता होती है और ये वस्तुएँ उसकी पत्नी उसके गृह-जीवनमें लाती है। जैसे बच्चेको माताकी छातीकी गर्माहटमें चिपटे रहनेकी आवश्यकता होती है, पुरुषकी यह आवश्यकता भी वैसी ही है।

स्त्री यदि एक 'अपने' कहे जानेवाले गृह-जीवनमें अपनी

पूर्णताकी उपलब्धि चाहती है, तो उसे पुरुषके आश्रय और संरक्षणकी आवश्यकता होती है।

शरीर, हृदयके भाव या चरित्र,—किसीमें भी स्त्रियाँ या पुरुष स्वयं पूर्ण नहीं हैं। उन्हें एक दूसरेसे कुछ सीखनेकी आवश्यकता होती है। सीखनेके विषय हैं,—प्रेमका आदान-प्रदान और यौन-अनुभूति। जीवनके अन्यान्य सभी रूपोंमें यौन-अनुभूति ही सबसे अधिक महत्वपूर्ण है, क्योंकि इसका आधार केवल शरीर नहीं है, बल्कि शरीर, हृदयके भाव और चरित्र,—ये तीनों इसके आधार है।

अध्याय २३*

क्या तुम पूरे मर्द या औरत हो गये ?

यहाँ तक मैंने तुम्हारी गर्भकी स्थितिसे लेकर मनोरंजक किशोरावस्था तकके विकासका वर्णन किया है। तुम्हारी इस अवस्थाके अन्तमें होनेवाली यौन-प्रवृत्तिका भी मैंने विशेष उल्लेख किया है।

तुम्हारे जीवनके प्रारम्भिक भागमें शारीरिक विकास बहुत महत्वपूर्ण वस्तु थी। फिर मानसिक विकास हुआ। अब यौन-विकासकी मुख्य बारी आयी है। परन्तु हमसे कुछ छूट भी तो गया है। चरित्र-विकासके विषयमें क्या बात है ?

सच पूछो तो चरित्र-विकासका क्रम जीवनभर चलता रहता है, अथवा इसकी सम्भावना जीवनभर लगी रहती है, बशर्ते कि हम कुछ सीखने-समझनेसे मुह न मोड़ लें और इस विका-

---

* इस अध्यायमें तथा अन्यान्य स्थलोंमें लेखकने यूरोपकी सामाजिक स्थितिको दृष्टिमें रखकर ही प्रेम, यौन-सम्बन्ध, विवाह, दाम्पत्य-जीवन, तलाक इत्यादि विषयोंपर अपने विचार प्रकट किये हैं। अतएव उसकी कुछ बातें हमारे देशके लिए पूरे तौरसे लागू नहीं हैं। फिर भी उन बातोंको जाननेसे हम न केवल यूरोपकी सामाजिक परिस्थितिका कुछ ज्ञान प्राप्त करेंगे, बल्कि उन बुराइयोंसे भी बचनेका प्रयत्न करेंगे जो विदेशी शिक्षा-दीक्षाके कारण हमारे देशमें घर कर रही हैं।

—अनुवादक

सको स्वयं न रोक दें। सब तरहके विकास-क्रममें चरित्र-विकास ही एक ऐसा है जिसे कभी बन्द होनेकी आवश्यकता नहीं है।

इसका कारण यह है कि हम जीवनका जो कुछ अनुभव प्राप्त करते रहते हैं और उसका जैसा उपयोग करते रहते हैं, उसीके फलस्वरूप सब समय चरित्रका विकास होता रहता है।

सब बातोंपर विचार करनेपर हम यही देखते हैं कि चरित्रकी दिशा पुरुषत्व प्राप्त करनेके समय तक स्थापित हो जाती है। फिर भी उसके परिवर्त्तनकी काफी गुंजाइश रहती है, पर इसके लिए चाहिये समझदारी और बलवती इच्छा।

चरित्रका विकास बहुत धीरे-धीरे होता है। इसलिए हमारे सामने एक समस्या आ जाती है। यह समस्या शायद तुम्हारे सामने भी आयी हो क्योंकि जहाँतक शरीरका सम्बन्ध है तुम पूरे मर्द या औरत बन चुके हो, अर्थात् तुम्हें यौन-क्रियाकी और सम्भवतः सन्तानोत्पादनकी शक्ति प्राप्त हो चुकी है।

यौन-क्रियाकी अनुभूति प्राप्त करनेकी परिपक्वता तुममें आ गयी है—क्या इस अर्थमें तुम पूरे मर्द या औरत बन गये हो ? यदि तुम्हारा शरीर इस कार्यके लिए तैयार हो गया है तो फिर क्या कारण है कि समाज अभी तुम्हें इस कार्यकी अनुमति नहीं देता है और तुम्हारे ऐसे किसी प्रयत्नपर क्रुद्ध होता है ?

यौन-क्रिया-विषयक पूर्व अनुभव न होनेके कारण बहुतेरे युवकोंमें इस कार्यके लिए एक शर्मीलापन और झिझक होती है। यह अनुभव कैसा होता है—इसके विषयमें कौतूहल होनेपर भी वे इसे प्राप्त करनेमें हिचकते हैं।

उनकी हिचकके कई कारण हैं। एक तो, जो चीज मालूम नहीं, वह क्या जाने क्या हो—इस बातका स्वाभाविक डर; दूसरे,

भोलापन जो कि युवावस्थाका मनोमोहक स्वाभाविक गुण होता है; तीसरे, हम जिस वातावरणमें पले हैं उसका प्रभाव।

युवतीमें आत्म-नियंत्रणकी एक बड़ी जबर्दस्त प्रवृत्ति होती है, जो कि युवकमें उस हदतक नहीं होती। इसका कारण यही है कि यौन-जीवन जितना वास्तविक महत्वपूर्ण स्त्रीके लिए होता है उतना वह पुरुषके लिए नहीं होता। संसारकी एक विशेष भूमिका-के लिए प्रकृतिने खास तौरसे स्त्रीको ही चुना है और उसके शरीर और चरित्रका निर्माण भी उसी ढंगसे किया है। वह भूमिका केवल पत्नीकी ही नहीं बल्कि माताकी भी है।

यह भूमिका पुरुषके भाग्यमें बदी नहीं है। इस विशेष भूमि-काके कारण ही स्त्रीके यौन-जीवनमें उसके द्रुत भावोंका बहुत गहरा और बड़ा हिस्सा होता है।

इसी प्रयोजनसे बड़ी बुद्धिमानी और दयापूर्वक प्रकृतिने युव-तीको ऐसा स्वाभाविक गुण प्रदान किया है कि यौन-जीवन स्वीकार करनेके पूर्व उसका जी बहुत आगा-पीछा करता है। इसका कारण स्पष्ट है। यदि वह यौवनके प्रारम्भमें अपने जीवन-संगीको पसन्द करनेमें किसी तरहकी गलती कर बैठती है तो वह बहुत ही मर्माहत होती है और जीवनके प्रति उसका सारा दृष्टि-कोण ही बिगड़ जाता है।

कई कारणोंसे, जिनका खुलासा मैं अभी करने वाला हूँ, यह उचित नहीं कि शरीरके अवयवोंके तैयार होते ही प्रत्येक व्यक्ति यौन-अनुभव प्राप्त करनेको दौड़ पड़े।

दूसरी ओर, मैं यह भी अच्छी तरह समझता हूँ कि इस विषयमें तुम्हारा कितना गहरा सम्बन्ध है और इसमें तुम्हें कितनी जबर्दस्त दिलचस्पी है। कभी-कभी, विशेषतः उस अव-स्थामें जब तुम्हारा किसीसे प्रेम हो गया हो, तुम्हारे मनमें यह

प्रश्न उठता होगा कि सब लायक हो जानेपर भी हमारी जो रोक-थाम की जाती है, उसके लिए सिवाय गला दबानेवाली सामाजिक प्रथाके और कौन-सा उत्तम कारण हो सकता है ?

विवाहित जीवनका आन्तरिक और बाह्य अनुभव

विवाह कोई ऐसी चीज नहीं है जिसे कानून या धर्मने हमपर बाहरसे लाद दिया हो।

हम जिस समाजमें रहते हैं उसकी अवश्यमेव कठोर आज्ञा है कि विवाहके सिवाय हम किसी और ढंगसे अपनी यौन-प्रवृत्तिको चरितार्थ न करें; और यदि हम इस आज्ञाकी अवहेला करते हैं तो समाज हमें वस्तुतः बहुत ही कड़े दण्ड देता है, कानून चाहे इतने कड़े दण्ड न दे।

इसका कारण स्वयं मनुष्यजातिकी प्रकृतिसे ही उत्पन्न हुआ है।

कुछ लोग यह नहीं समझते हैं कि हमें यौन-जीवनमें पूरी स्वतंत्रता क्यों नहीं मिलनी चाहिये। पर हमें यह समझना चाहिये कि जीवनके प्रत्येक विभागमें हमें सबसे पहले यही शिक्षा लेनी पड़ती है कि हम जब जो जी चाहे करें—ऐसी स्वतंत्रता हमें नहीं मिल सकती।

अपने हितके लिए और दूसरोंके हितके लिए हमारी प्राकृतिक प्रवृत्तियों और मनोभावनाओंको नियंत्रित और नियमबद्ध होना पड़ता है। फिर केवल यौन-प्रवृत्तिको ही इस नियमका अपवाद क्यों बनाया जाय, विशेषतः जब कि स्वार्थान्ध कामुकतासे अन्य व्यक्तियोंका बड़ा ही निर्दय अनिष्ट होना सम्भव है ?

साधारणतया पुरुषकी यौन-प्रवृत्ति स्त्रीकी यौन-प्रवृत्तिसे कहीं अधिक स्वार्थान्ध होती है। पुरुषमें जब यौन-समागमकी इच्छा होती है तब यह जरूरी नहीं है कि वह उस स्त्रीसे प्रेम करता हो; और स्त्रीमें जैसी मातृत्वकी भावना होती है वैसी पितृत्वकी भावना तो उसमें होती ही नहीं।

एक अर्थमें यह ठीक है कि प्रकृति पुरुषसे अधिक काम नहीं लेती। पुरुष नये जीवनका बीज बोकर प्रकृतिका प्रयोजन सिद्ध कर देता है। उसके बाद पुरुषकी कोई ऐसी आवश्यकता नहीं होती कि उसके बिना काम ही न चले। हाँ, माँके बिना बच्चेका काम नहीं चल सकता। इसीलिए स्त्रीकी यौन-भावनाएं मातृत्वकी प्रवृत्तिसे गुँथी रहती हैं। अतः जो यौन-प्रवृत्ति केवल शारीरिक तृष्णाकी तृप्ति चाहती है, वह स्वार्थान्ध होती है। ऐसी प्रवृत्ति स्त्रीकी और समाजकी आवश्यकताओं और अधिकारोंकी ओरसे आँखें बन्द कर लेती है।

परन्तु हमारी मानवताके अस्तित्वका सम्पूर्ण आधार,—जो आधार हमें निम्न श्रेणीके जीवोंसे अलग करता है और जिस आधारपर हमें गर्व है—इसी तथ्यपर स्थित है कि हम मानव-परिवारकी हैसियतसे अपने अधिकारों और कर्तव्योंको पहचानें।

अतएव विवाहका अस्तित्व हमारे इसी विश्वासका फल है कि हम जिस समाजमें रहते हैं उसके हितके लिए हमें अपनी आदिम पाशविक प्रवृत्तियोंको सदा नियंत्रणमें रखना चाहिये।

विवाहका अस्तित्व उस आवश्यकताकी पूर्तिके लिए भी है, जिसकी जड़ प्रत्येक स्त्री-पुरुषमें बड़ी गहराईतक चली गयी है। वह आवश्यकता है एक ऐसा सम्बन्ध स्थापित करनेकी, एक ऐसा नाता जोड़नेको, जो केवल शारीरिक न होकर मानसिक और आत्मिक भी हो।

विवाहका अस्तित्व इसलिए भी है कि बच्चेको माता और पिता—दोनों ही की, और साथ ही एक सुरक्षित गृहकी आवश्यकता होती है ताकि उसका स्वस्थ और सुखमय विकास सम्भव हो।

अब प्रश्न है तुम्हारे अपने सम्बन्धमें। जबतक तुम्हारा विवाह न हो तबतक तुम्हें क्यों इन्द्रियोंपर नियंत्रण रखना चाहिये और क्यों यौन-जीवनसे परहेज रखना चाहिये? इसके दोनों ही तरहके कारण है, व्यावहारिक भी और आत्मिक भी।

एक कारण तो एकदम व्यावहारिक है। वह यह कि ऐसे कार्यसे सन्तान उत्पन्न हो सकती है। किशोर-अवस्थामें कितने इस योग्य हैं कि स्त्री और बच्चेका भरण-पोषण कर सकते हैं? कच्ची उम्रमें इस तरहकी जिम्मेदारी सिरपर ओढ़ लेना क्या है, मानों जीवन-मार्गको आरम्भसे ही कठिनाइयोंसे पाट देना है।

जो युवक बच्चोंकी तरह इतना गैरजिम्मेदार है कि जिस परिस्थितिको उसने स्वयं पैदा किया उसका सामना करनेसे इनकार करता है, वह एक वास्तविक दुःखान्त नाटककी ओरसे भी आँखें बन्द कर लेता है। जो नवयुवती उस परिस्थितिका शिकार होती है और अपने बच्चे का भरण-पोषण अपने ही बलपर करनेके लिए छोड़ दी जाती है, उसका जीवन कितना कठिन और दुःखमय हो सकता है!

समाजने यह निश्चय किया है कि विवाहके जरियेको छोड़कर और किसी तरहसे बच्चे हरगिज न पैदा किये जायँ। इसपर हँसो मत। समाजका यह निश्चित नियम कोई मूर्खता और अन्धविश्वासपूर्ण प्रथा नहीं है जिसकी अवहेला की जाय।

मैं मानता हूँ कुछ ऐसे लोगोंके लिए जो संकीर्ण विचारोंके हैं और उपायको ही ध्येय समझते हैं, यह सामाजिक नियम एक प्रकारसे अन्धविश्वास ही बन गया है। परन्तु इससे यह सिद्ध नहीं

होता कि जब यह नियम बना था उस समय इसकी बुनियाद व्यावहारिकताकी नींवपर नहीं रखी गयी थी।

यह सच है कि जो गलतियाँ मनके आवेशके कारण या सच्चे प्रेमके कारण हो जाया करती हैं वे समझमें आती हैं और उन्हें क्षमा किया जा सकता है। विवाहके पूर्व पाँव फिसल जानेके कारण जो स्त्रियाँ माता बन जाती हैं उनपर निर्दयी और अदूरदर्शी लोग ही हँसा करते हैं। जो लड़की अविवाहित अवस्थामें माँ बन जानेकी भूल कर बैठती है, उस दुखियारीको सारा जीवन अपनी भूलका प्रायश्चित्त करना पड़ता है।

परन्तु सर्वसम्मत नैतिकता और सदाचारके व्यावहारिक कारण ही नहीं बल्कि आत्मिक कारण भी हैं!

यदि कोई नवयुवती किसी पुरुषपर विश्वास करके उसे आत्म-समर्पण कर देती है और वह पुरुष उसे धोखा देकर त्याग देता है, तो उस बिचारीके मनपर बड़ी गहरी चोट बैठती है। तुम उस चोटकी गहराई बखूबी समझ सकते हो। भविष्यमें उस युवतीका पुरुषोंके प्रति जो कुछ आचरण होता है, उसपर उस चोटका बहुत बुरा प्रभाव रहता है और उस अभागिनीका दृष्टिकोण और जीवन गलत रास्तेपर जा सकता है।

यह मनोविकार शायद उस नवयुवतीकी सन्तानको भी विरासतमें मिल सकता है, क्योंकि उस बच्चेके प्रति और साधारणतया पुरुष-जातिके प्रति युवतीके जो बुरे मनोभाव होंगे, उन्हींके अनुसार वह उसका लालन-पालन करेगी।

स्त्रीके शारीरिक अवयवों और मनोभावोंकी बनावट ही कुछ ऐसी होती है कि उससे मातृत्वका प्रयोजन सिद्ध होता है; इसीलिए यौन-सम्बन्ध पुरुषकी अपेक्षा स्त्रीके जीवनका बड़ा महत्वपूर्ण भाग होता है।

पुरुषके लिए यह सम्भव है कि उसके मनोभावोंके निकट उसके यौन-समागमका कोई विशेष अर्थ न हो। वास्तवमें पुरुषके लिए यह एक तृष्णाकी शान्तिसे अधिक और कुछ नहीं होता।

ऐसे स्वभावकी स्त्रियाँ भी होती है। परन्तु अधिकांश स्त्रियोंके लिए यौन-जीवन एक अत्यन्त गम्भीर मनोभावनाका द्योतक है। स्त्रीको जबतक अपनी मनोभावनाकी प्रेरणा नहीं मिलती, तबतक उसे यौन-समागमकी इच्छा नहीं होती और न उसे उसमे कुछ आनन्द आता है।

स्त्रियों और पुरुषोंको चाहिये कि वे स्त्री और पुरुष-जातिके इस मौलिक अन्तरको समझें। यदि नहीं समझेंगे, तो फल यह होगा कि पुरुष स्त्रीका सर्वनाश बड़ी आसानीसे कर डालेगा, क्योंकि वह यह महसूस ही नहीं कर सकेगा कि जो वस्तु उसके लिए जरा देरकी एक साधारण-सी घटना है वह स्त्रीके लिए कितनी महत्व-पूर्ण है। इस नासमझीसे उधर स्त्री समस्त सुख और शान्तिको खो बैठेगी क्योंकि वह यह समझ ही नहीं सकेगी और न इसपर ध्यान ही दे सकेगी कि पुरुष यौन-जीवनको कितनी हल्की वस्तु मानता है।

पुरुष और स्त्रीके विषयमें इस अन्तरको समझ लेनेसे पुरुष और स्त्रीपर कुछ जिम्मेदारियाँ भी आ जाती हैं।

अपने प्रति और गर्भमें आनेवाले बच्चेके प्रति स्त्रीका यह कर्त्तव्य हो जाता है कि वह अच्छी तरह ठोंक-बजाकर इस बातकी दिलजमई करले कि जिस पुरुषसे वह संयुक्त होने जा रही है वह उसे वासना-तृप्तिके लिए ही नहीं, बल्कि हृदयसे भी चाहता है।

स्त्रीके प्रति और पैदा होनेवाले बच्चेके प्रति पुरुषका यह कर्तव्य हो जाता है कि वह हर्गिज किसी ऐसी स्त्रीसे अपनी वास-

नाकी तृप्ति न करे जो उसे अन्तस्तलसे चाहती हो, परन्तु जिसे वह स्वयं हृदयसे नहीं चाहता।

बिना विवाह हुए ही यदि बच्चा पैदा हो जाता है तो उस बच्चेकी केवल इतनी ही खराबी नहीं होती कि उसकी माँ अपने बलपर उसका लालन-पालन नहीं कर सकती, बल्कि और भी कई तरहकी खराबियाँ होती हैं।

तुम्हें याद होगा, क्योंकि यह बताया जा चुका है, कि बच्चेको सबसे बढ़कर दो चीजोंकी जरूरत होती है—हिफाजत और मुहब्बत।

अविवाहित स्त्री या अविवाहित स्त्री-पुरुषके जोड़ेके लिए यह अत्यन्त कठिन है कि वे अपने बच्चेकी आवश्यकताके अनुसार उसे एक गृहस्थका सुरक्षित घर दे सकें।

प्रायः यही देखा गया है कि विवाहकी कैदके बाहर जो बच्चा पैदा होता है। उसके केवल माता ही होती है। वह माता चाहे जितनी अच्छी हो और बच्चेको चाहे जितना प्यार करती हो, पर बच्चेको पिता और माता—दोनोंका स्नेह तो मिलेगा नहीं। माता लाख प्रयत्न करे, पर वह इस अभावकी पूर्ति नहीं कर सकेगी।

सन्तानके पालन-पोषणके लिए माताको बड़ी-बड़ी कठिनाइयाँ झेलनी पड़ेंगी। वह लाड़-प्यारसे उसे सिर चढ़ा लेगी। स्नेहके अभावकी तरह अतिका स्नेह भी बुरा होता है। शिशु यदि लड़की न होकर लड़का हुआ तो उसके सामने पिताका आदर्श नहीं होगा और वह उसके प्रभावसे वंचित रहेगा। वास्तवमें बच्चेके पूर्ण विकासके लिए जिस गृह-जीवनकी पृष्ठ-भूमिकी आवश्यकता होती है, वह उसे प्राप्त नहीं होगी।

जब बच्चा बड़ा होगा, तब जानेगा कि वह वैध सन्तान नहीं

है। लोग चाहे कितने ही अच्छे क्यों न हों पर वे व्यंग्य-बाण छोड़ेंगे और उसे सब कुछ बर्दाश्त करना पड़ेगा।

इसमें सन्देह नहीं कि माता-पिताके अपराधके लिए बच्चेको दोषी ठहराना बड़ी भारी भूल और निर्दयता है। परन्तु बच्चे औरोंसे अपनेमें किसी तरहका फर्क नहीं बर्दाश्त कर सकते, फिर वह फर्क चाहे कितना ही छोटा क्यों न हो। तुम अपने लड़कपनकी बातें याद करके इस तथ्यको समझ सकते हो। हाँ, जब बच्चे किसी बातमें औरोंसे अपनेको ऊँचा समझते हैं तब बात दूसरी है। परन्तु क्या अवैध सन्तान अपनेको श्रेष्ठ समझ सकती है?

अच्छा, यदि बच्चा न होनेका विश्वसनीय उपाय कर लिया जाय, तो युवक-युवतीका संयोग उचित है या नहीं? इसका उत्तर यह है कि साधारण युवक-युवतियोंकी पहुँचके भीतर कोई भी ऐसा उपाय नहीं है जिससे शत प्रतिशत गर्भनिरोधका निश्चय हो।

यदि तुम विवाहित हो और तुम्हारा गर्भ-निरोधका उपाय किसी तरह असफल हो जाय तो कोई मुजायका नहीं। इस उपायके करनेसे तुम्हारी मशा यही होगी कि अभी कुछ दिन और सन्तान न हो, परन्तु यदि बच्चा हो ही जाय तो तुम्हारे लिए प्रलय तो हो नहीं जायगा। हाँ, यदि तुम विवाहित नहीं हो, तो स्थिति वास्तवमें विकट हो जायगी।

यदि तुम विवाहित नहीं हो और तुम्हारे किये हुए उपायमें कोई गड़बड़ी हो जाती है, तो तुम्हारा और तुम्हारी प्रेमिकाका आधा समय तो चित्तकी अशान्ति और चिन्तामें बीत जाता है।

अन्तमें सम्भवतः यह होता है कि तुम दोनों एक दूसरेके प्रति चिड़चिड़े और गुस्सैल हो जाते हो। अकारण ही आपसमें

खटपट होने लगती है। वास्तविक कारण तो तुम दोनोंके मनमें छिपा हुआ डर होता है। इस तरह तुम लोगोंकी प्रेम-लीलाका अन्त हो जाता है, क्योंकि इस चिन्ताजनक स्थितिसे प्रेमी और प्रेमिकाके बीच इतनी बड़ी दीवार खड़ी हो जाती है जितनी और किसी बातसे नहीं होती।

यदि ऐसी घटना घटित हो जाती है, तो युवक और युवतीके चित्तपर यह बात सदाके लिए अंकित हो जाती है कि एक बड़ी ही सुन्दर और महनीय वस्तुका विनाश हो गया: विशेषतः युवतीके मनमें तो इस बातका बड़ा ही क्षोभ और पश्चात्ताप होता है कि उसने व्यर्थ अपना कौमार्य नष्ट कर डाला।

पाँव फिसलनेका खतरा

अबतक मैंने ऐसी स्थितिका वर्णन किया है जिसमें युवक और युवतीका आपसमें प्रेम होता है। मुझे अच्छी तरह मालूम है, विशेषतः युवकोंके विषयमें, कि वे कभी-कभी प्रेमकी अपेक्षा आकस्मिक यौन-क्रियाके प्रलोभनमें बड़ी जल्दी फंस जाते हैं।

अतएव यहाँ मैं यह बता देना उचित समझता हूँ कि यदि तुम अपनी शय्या-संगिनीको चुननेमें सतर्क न होगे तो इस असावधानीके कारण सम्भवतः तुम दोनों ही छुतैले रोगोंसे पीड़ित हो जाओगे।

हाँ, यदि तुम्हारी संगिनी शुद्धाचरणकी होगी तो ऐसे रोगोंके होनेकी आशा नहीं है। जो पुरुष विश्वास न करनेयोग्य स्त्रीको संगिनी-रूपमें चुनता है या, जो स्त्री नाचघर या राह-बाटमें मिलने-जुलनेवालोंके फुसलावेमें आ जाती है, वे दोनों ही बहुत बड़ा खतरा मोल लेते हैं।

जननेन्द्रियके दो मुख्य रोग होते हैं, प्रमेह और उपदंश। प्रमेह बहुत बुरा रोग है और यदि इसका ठीक-ठीक इलाज न किया जाय तो इससे नपुंसकता हो जाती है। उपदंशका समुचित निदान और चिकित्सा शीघ्र ही न हो तो इससे मनुष्य अंग-भंग और विकलाङ्ग हो जाता है और उसकी मृत्युतक हो जाती है। जैसे और सब रोग होते हैं वैसे ही ये रोग भी है। यदि कोई युवक बेवकूफी कर बैठे और उसे रोगका सन्देह हो जाय, तो उसे तुरन्त डाक्टरके पास दौड़ जाना चाहिये और उससे सच्ची बात कह देनी चाहिये, फिर उसे चाहे कितनी ही शर्मिन्दगी क्यों न उठानी पड़े।

इलाज न करके रोग बढ़ा लेना और उसे औरोंमें यहाँ तक कि अपने स्त्री-बच्चों तकमें फैलाना ठीक नहीं। इससे कहीं अच्छा है कि रोग आरम्भ होते ही उसका ठीक-ठीक इलाज करा लिया जाय। उपदंशका रोग पीढ़ी-दर-पीढ़ी चल सकता है।

मैं यह अच्छी तरह समझता हूँ कि कुछ लोगोंकी प्रकृति ही ऐसी होती है कि उनमें काम-वासना अपेक्षाकृत कहीं अधिक होती है। यदि ऐसे लोग अपनेको किसी तरह भी काबूमें न रख सकें, तो उन्हें चाहिये कि वे स्वास्थ्य-विज्ञान-सम्मत उन उपायोंका सहारा लें जिनके अवलम्बसे इस तरहके रोग होनेका डर नहीं रहता।

हममें अधिकांश लोगोंके लिए सब दृष्टियोंसे यही सर्वोत्तम मार्ग है कि हम कोई भी ऐसा दुस्साहस न करें जिसके ऐसे भयंकर परिणाम हो सकते हैं। यद्यपि समयपर चिकित्सा करनेसे यौन-रोग सफलतापूर्वक अच्छे किये जा सकते हैं, फिर भी यह तो निश्चित है कि अपराध और लज्जाकी अनुभूतिके कारण रोगीको मानसिक आघातकी पीड़ा भोगनी ही पड़ेगी।

तुम्हारा कर्तव्य

अतएव तुम समझ लो कि तुम्हारी भलाई इसीमें है कि तुम समय-असमयकी आकस्मिक यौन-क्रियासे परहेज रखो।

अपनी और अपनी संगिनीकी भलाईके लिए, और उस मासूम बच्चेकी खातिर, जिसका हो पड़ना कोई मुश्किल नहीं, और साथ ही समाजके हितके लिए, बुद्धिका तकाजा यही है कि किसीके साथ शारीरिक, मानसिक और आत्मिक 'प्रेम' का नाता मत जोड़ो और विवाहकी अपेक्षा करो।

ऐसी अवस्थामें तुम यह पूछ सकते हो कि आजकल जिस उम्रमें विवाह होता है, उससे पहले ही समाज हमें विवाह करनेकी अनुमति क्यों नहीं दे देता ?

इसका सर्वप्रथम व्यावहारिक कारण है आर्थिक समस्या। स्थायी गृहस्थी निर्माण करनेके लिए युवककी सर्वप्रथम यथोचित आय होनी चाहिये।

परन्तु मैं यह अवश्य कहूँगा कि यदि उक्त कारण न भी माना जाय, तो भी मेरे विचारसे, यौवन प्राप्त करते ही तुरन्त विवाहके लिए दौड़ पड़ना बुद्धिमानीका काम कदापि नहीं होगा।

तुम देखते हो कि लड़की करीब तेरह वर्षकी अवस्थामें और लड़का करीब पन्द्रह वर्षकी अवस्थामें पूर्ण यौवन-विकास प्राप्त कर सकता है। परन्तु चरित्र और हृदयकी भावनाओंका विकास फिर भी पिछड़ा ही रहता है, क्योंकि तबतक संसारका यथेष्ट अनुभव नहीं हो पाता।

मेरे विचारसे, उस समय तक किसी लड़की-लड़केको इतनी शिक्षा नहीं मिली रहती कि वे अपने सम्बन्धकी ओर परस्पर

एक दूसरेके सम्बन्धकी जरूरी बातोंको जान सकें, और यह जानना जरूरी है।

मानव-समाजमें और विशेषतः स्त्रियोंके लिए यौन-सम्बन्धका अर्थ केवल काम-वासनाकी तृप्ति नहीं, बल्कि इससे बढ़कर कुछ और भी है। इसलिए यह आवश्यक है कि तुम जिससे विवाह करना चाहते हो उसके हृदय और मस्तिष्कमें ऐसे गुण हों जिनकी पटरी तुमसे बैठ सके।

कुछ लड़के-लड़कियोंमें एकका दूसरेके प्रति इतना तीव्र रूप-मोह हो जाता है, या एककी दूसरेके प्रति इतनी उद्विग्न वासना हो जाती है कि वे छोटी अवस्थामें ही चटपट विवाह-सूत्रमें बंध जाते हैं। विवाहके कुछ दिनों बाद वे देखते हैं कि उनके पारस्परिक मिलापका सुख उन्हें केवल शय्यापर ही मिलता है।

फिर जीवनके नित्य नैमित्तिक कामोंमें उनकी यह अवस्था हो जाती है कि बात-बातमें खटपट होने लगती है, एककी आदतें दूसरेको कुढ़ाने लगती हैं, अपनी-अपनी अलग-अलग पसन्द होने लगती है और जुदा-जुदा लोगोंसे उनकी जुदा-जुदा मित्रता होने लगती है।

अन्तमें ऐसे जोड़ोंका शय्या-सुख भी हवा हो जाता है।

यदि हम अभी तक निम्न श्रेणीके पशुओंकी सतहपर होते तो हम उनकी तरह किसी भी स्त्रीसे अपनी वासनाकी तृप्ति कर लेते और इस बातकी रत्तीभर भी परवाह न करते कि वह क्या करती है, क्या नहीं।

परन्तु इस समय तो परवाह करनी पड़ती है। यदि स्त्री और पुरुषको एक-दूसरेसे नफरत हो तो उनके यौन-सम्बन्धका स्वाभाविक सुख भी रफूचक्कर हो जाता है।

फिर रह ही क्या जाता है? यदि उनके बच्चा भी हो गया

रहता है, तो, भगवान् ही जाने, वह अभागा कैसे नित्यके विपत्ति-मूलक वातावरणमें पलता है ?

इसमें सन्देह नहीं कि छोटी उम्रका विवाह अन्य प्रकारसे भी दुःखदायी सिद्ध हो सकता है।

कोई-कोई युवक-युवतीका जोड़ा आरम्भमें इसलिए परस्पर आकर्षित होता है कि दोनोंकी एक-सी पसन्द होती है और एक-से लोगोंसे मित्रता होती है। परन्तु विवाहके बाद पता चलता है कि बचपनकी कुशिक्षाके प्रभावसे एक या दोनों ही यौन-जीवनको दुःखदायी या लज्जाजनक कार्य मानते हैं।

ऐसी अवस्थामें उन्हें यौन-जीवनका कोई सुख नहीं मिलेगा और अन्तमें उस जोड़ेके पारस्परिक स्नेह और मित्रताका सम्बन्ध विषमय हो जायगा।

अतएव तुम समझ सकते हो कि जीवन-संगिनी या जीवन-संगीको चुन लेना दाल-भातका कौर नहीं है कि चटसे खा लिया। इसमें कभी जल्दबाजी नहीं करनी चाहिये।

इसलिए जो सामाजिक व्यवस्था और आर्थिक तथ्य हमें एक निश्चित समय तक विवाहकी अपेक्षा करनेके लिए बाध्य करते हैं उनके पक्षमें भी बहुत कुछ कहा जा सकता है।

दूसरी ओर मैं इस बातसे सहमत हूँ कि यदि किसी नवयुवक और किसी नवयुवतीकी शारीरिक और मानसिक बातोंमें ठीक मिल्लत बैठती हो और उन दोनोंको जीवन-यापन करनेकी यथोचित शिक्षा मिली हो तो उनके छोटी उम्रके विवाहसे भी जीवन-व्यापी सुखकी नींव पड़ सकती है।

तुम कह सकते हो—"ये बातें इस समय तो हमारी कोई सहायता करती नहीं हैं। हम अभी विवाह कर नहीं सकते, किसीसे

बिना विवाह किये यौन-समागम करके जोखिम उठाना बुद्धिमानी है ही नहीं, तो फिर हम करें क्या ?"

किसीसे कुछ प्रेम करनेमें कोई हानि नहीं होती। तुम भी प्रेम कर सकते हो, पर इतनी बुद्धिमानी अवश्य करना कि यह बहुत दूर बढ़ने न पाये। यदि यह बढ़ जायगा तो तुम्हारे लिए आत्मनियंत्रण कठिन हो जायगा।

जबतक विवाह न हो जाय तबतक पूर्ण यौन-क्रियाकी अनुभूति कदापि न होनी चाहिये, खासकर कोरी लड़कियोंके साथ। इसके एक नहीं, अनेक कारण बताये जा सकते हैं।

एक कारण तो यह है और इसे तुम जानते ही होगे, कि जिस प्यारी चीजका जितना ही इन्तजार किया जाता है उसपर उतना ही प्यार बढ़ जाता है। तुम्हारे हकमें कहीं अच्छा होगा कि तुम इन्तजार करो और समय आनेपर उस सुखका पूरा स्वाद चक्खो बनिस्बत इसके कि इधर-उधर पत्तल चाटते फिरो और 'गुनाह बेलज्जत'-की आत्म-ग्लानिमें मरते रहो।

लड़कियाँ एक बात याद रखनेकी बुद्धिमानी अवश्य करें।

प्रत्येक पुरुष, चाहे उसके विचार कितने ही आगे बढ़े हुए क्यों न हों और वह चाहे कितना ही उदारचित्त क्यों न हो, हृदयसे यही चाहता है कि उसकी पत्नीको किसीने स्पर्श भी न किया हो। (मैं उन पुरुषोंकी बात नहीं कह रहा हूँ जो तुमसे केवल अपना मतलब निकालनेकी गरजसे तुम्हें अपनी उदारता दिखाते हैं।)

सम्भव है पुरुष मुँहपर यह बात न लाये। उसे अपने ऊपर यह विश्वास भी हो सकता है कि वह अपनी पत्नीके बीते हुए जीवनकी घटनाओंके लिए उससे नाराज नहीं होगा। यदि स्त्रीके पिछले जीवनमें कुछ ऐसी-वैसी घटनाएँ हुई हों और पुरुष स्त्रीको

जीसे चाहता हो, तो वह उन बीती बातोंको किसी तरह सह लेगा। परन्तु पुरुषके गुप्त अन्तस्तलमें इस विश्वासका होना कि उसकी पत्नी केवल उसीकी रही है—एक ऐसी महनीय वस्तु है जो पुरुषके लिए बड़ी ही पवित्र होती है।

इसलिए लड़कियो, इस समय तुम्हारा जिससे प्रथम प्रेम हो गया है वह यदि तुम्हारे योग्य नहीं है और तुम्हारा वास्तविक वर, जिसके पल्ले तुम सचमुच बँधोगी, कहीं बैठा तुम्हारा इन्तजार कर रहा है, तो तुम उस महनीय वस्तुको क्यों गवाँती हो जिसे अपने वरको देनेके लिए तुम फिर कभी नहीं पा सकतीं ?

लड़का हो या लड़की,—दोनोंके लिए यही एक बात ध्यान देनेयोग्य है कि यौन-क्रियाकी अनुभूति प्राप्त करनेकी चाहे जितनी तीव्र उत्कण्ठा हो, या अपने इस समयके प्रेम-पात्रके प्रति प्रेम प्रकट करनेकी चाहे जितनी व्यग्रता हो, बस केवल विधेय अवसरकी प्रतीक्षा करते रहो—लाजिम वक्तका इन्तजार करते रहो।

तुम अपने पिछड़े हुए चरित्र-विकासको इतना समय दो कि वह तुम्हारे शारीरिक विकासके साथ हो ले। अपनेको इतना मौका दो कि अधिकसे अधिक व्यक्तियोंसे मिल-जुल सको। आज जो व्यक्ति तुम्हारे उपयुक्त जान पड़ता है, कल तुम्हारे विकासके आगे बढ़नेपर वह शायद तुम्हारे योग्य न ठहरे। तुम यह नहीं चाहते होंगे कि किसीसे प्रतिज्ञा भंग करके और उसे क्लेश देकर अलग हो जाओ।

दूसरोंके मनोभावोंको समझने-बूझनेकी चेष्टा करो और अपने मनोभावोंको वशमें रखो।

इस बातको अच्छी तरह हृदयङ्गम करनेकी चेष्टा करो कि यौन-शक्तियोंसे फिलहाल काम न लेनेकी जो हिदायत तुम्हें दी जाती है वह चाहे कितनी ही कठोर आज्ञा क्यों न प्रतीत होती

हो, फिर भी सामाजिक जीवनकी सुश्रृंखलाके लिए एक सच्चे नागरिक बननेका यह मूल्य तुम्हें चुकाना ही चाहिये।

हम जिस समाजमें रहते हैं उसके हितके लिए हम सबोंको अपनी-अपनी प्रवृत्तियों और आवेगोंको दबाना पड़ता है। हाजत होने ही से हम चाहे जहाँ मल-मूत्र नहीं त्याग सकते। यदि हम ऐसा करें तो सामाजिक जीवन विश्रृंखल हो जाय।

ऐसे ही कारणोंसे युवकों और युवतियोंसे आत्म-नियंत्रणका मूल्य चुकानेके लिए कहा जाता है जिसमें सामाजिक जीवन सुश्रृंखलित बना रहे और कोई व्यक्ति न तो दूसरोंको आघात पहुँचाये और न स्वयं खतरेमें पड़े।

अपनेको वशमें रखनेकी आदत डालनेसे तुम्हें कोई नुकसान नहीं होगा, बल्कि इससे तुम्हारे चरित्र और आवेगोंका तुम्हारे द्रुतगामी यौन-विकासका साथ पकड़नेका समय मिल जायगा।

कुछ वर्षोंके बाद तुम बहुत अच्छी स्थितिमें पहुँच जाओगे और इस बातका ठीक-ठीक निर्णय कर सकोगे कि जिससे तुम्हारा इस समय प्रेम है उसीके साथ विवाहित जीवन व्यतीत किया जाय अथवा किसी अन्य व्यक्तिसे विवाह किया जाय।

अध्याय २४

संसारमें तुम्हारा स्थान

तुम अपने जीवन-मार्गके एक नुक्कड़पर आ गये हो अथवा तुम्हारी जीवन-यात्रा एक नये मार्गसे आरम्भ होनेवाली है, क्योंकि वयस्क लोगोंके समाजमें तुम अपना स्थान ग्रहण करने वाले हो।

तुम्हारा निकट भविष्य क्या होगा?

तुम अपने पैरोंपर खड़े होकर स्वतन्त्र होना चाहते हो और अपने माता-पिताके समान ही काम धन्धे तथा फुरसतके समय अपना व्यक्तित्व प्रकट करना चाहते हो। तुम्हारी ऐसी इच्छा होना स्वाभाविक है।

यदि तुम्हारे माता-पिताने बचपनमें स्नेहके साथ तुम्हारी यथोचित देख-रेख रखनेकी बुद्धिमानी की है, तो इस नये लक्ष्यको प्राप्त करनेमें भी वे तुम्हारी ओर विशेष ध्यान देंगे और तुम्हें सहायता देंगे।

सम्भवतः जीविका उपार्जनके मौकेको तुम अपनी मनोवाञ्छित स्वतन्त्रता प्राप्त करनेका पूर्व-लक्षण मानते हो। जीविका-उपार्जन एक अत्यन्त साहसिक जीवन-कार्य है। इससे तुम्हारी आत्म-सम्मानकी भावना अत्यधिक बढ़ जायगी।

पता नहीं, तुमने इन दिनों कभी शान्त चित्तसे यह सोचनेकी चेष्टा की है कि तुम हालके कुछ वर्ष किस प्रकार व्यतीत करना चाहते हो?

तुम कौन-सा काम और किस उद्देश्यसे करना चाहते हो? फुरसतका वक्त किस तरह बिताना चाहते हो?

इधर कुछ वर्षोंसे सभी परिस्थियाँ बदल गयी हैं। शिक्षा-प्रणाली भी बदल रही है और इसमें बहुत उन्नति होनेवाली है।

सन् १९३० से १९४० तक विलायतमें बहुतेरे छात्र-वृत्ति-प्राप्त युवक भी यथोचित जीविका-उपार्जनके उपयुक्त नहीं हो सके, क्योंकि उन्हें पांडित्यकी शिक्षा मिली थी, व्यावहारिक विषयोंकी शिक्षा नहीं मिली थी।

कुछ स्कूलोंमें आज भी ऐसी ही पाण्डित्यकी शिक्षा दी जाती है, परन्तु साधारणतया आजकाल लड़कोंको पुरातत्व इत्यादि विषयोंके साथ-साथ साधारण व्यावहारिक शिक्षा भी दी जाने लगी है, बशर्ते कि उनकी अभिरुचि और परिस्थिति वैसी हो।

कुछ वर्षों पहले बेकारी बहुत बढ़ी हुई थी। आज परिस्थिति बदल गयी है। यदि तुम काममें मन लगाओगे तो बेकारीका कोई डर नहीं रहेगा। *

नवयुवकोंके लिए यह बहुत महत्वपूर्ण बात है। महायुद्धके पहले उन्हें जीविका उपार्जनकी खातिर जबरन निम्न श्रेणीके काम करने पड़ते थे और अन्तमें उन लोगोंकी दशा धोबीके कुत्तेकी-सी हो गयी, न घरके रहे न घाट के।

चिट्ठी-रसा, माल लगानेवाले, चपरासी, कल-कारखानोंमें काम सीखनेवाले इत्यादिकी हैसियतसे लड़के नियुक्त किये जाते थे और जब वे बड़ी उम्रवालोंकी-सी तनख्वाह माँगते थे तो उन्हें

---

* भारतवर्षमें तो बेकारीकी समस्या दिनपर दिन जटिल होती जाती है। पढ़े-लिखे लड़के बेकार और मारे-मारे फिरते हैं।—

अनुवादक

निकाल-बाहर किया जाता था। उन दिनों यह कोई असाधारण घटना नहीं थी।

आज मजदूरोंके अभावके कारण ऐसी घटना होनेकी संभावना नहीं है। परन्तु यह स्थिति एकदम निरापद भी नहीं है।

यदि तुम जानते हो कि तुम्हारी नौकरी समुचितरूपसे सुरक्षित है तो अदूरदर्शिताके कारण तुम्हारा चित्त तुम्हें यही बहकायेगा कि 'येन-केन प्रकारेण' बँधे हुए कामकी चक्की चलाते रहो। फिर तुम अपनी उन्नतिका कोई प्रयत्न नहीं करोगे।

यह बहुत बड़ी मूर्खता होगी। कौन जानता है, आगे चलकर तुम कौन-कौन-सी जिम्मेदारियाँ अपने ऊपर लेना चाहोगे। इस तरहका निर्वाह कैसे कर सकोगे?

सिर्फ जिम्मेदारियोंका सवाल नहीं है। क्यों न तुम अपने लिए ऐसे सुखपूर्ण जीवनका निर्माण करो जिससे तुम्हें गृहस्थीका सच्चा सुख हो, समुचित आनन्द-मंगलकी सामग्रियाँ प्राप्त हों, देशाटनकी कुछ सुविधाएँ हों और थोड़ा बहुत संसार देखनेका भी अवसर मिले?

अतएव, तुम किस प्रकारका काम-धन्धा करना चाहते हो—यह निर्णय करनेके बाद जब तुम पहला काम चुनने लगो तब उसके विषयमें खूब अच्छी तरह सोच-विचार लो।

काम-धन्धेका आरम्भ

तुम्हें अपने काम-धन्धेसे क्या मिलना चाहिये और उसमें अपनी ओरसे क्या देना चाहिये?

तुम्हें काम-धन्धेमें अपने समयका बहुत बड़ा हिस्सा देना

पड़ेगा। इसलिए तुम किसी ऐसे धन्धेसे मत बँधो जो तुम्हें रुचता न हो या जिससे आगे चलकर असन्तोष पैदा होनेकी संभावना हो; अन्यथा तुम्हारा कर्म-जीवन मरुभूमि-सा हो जायगा। अतएव तुम्हें धन्धा चुननेमें सावधानीसे काम लेना चाहिये।

दूसरी ओर यह भी समझना चाहिये कि बिना कुछ दिये कुछ पाना असम्भव है, इसलिए एक बार धन्धा चुन लेनेके बाद फिर उसमें तुम्हारा वही उत्साह होना चाहिये जो तुम और कामोंमें दिखाते हो।

यही तुम्हारे लिए उचित और उत्तम होगा।

मैं समझता हूँ कि अपने हितके लिए अपने मनोनीत धंधेपर दो दृष्टिकोणोंसे विचार करना चाहिये—

१. धन्धा लक्ष्य प्राप्तिका एक उपाय है। अर्थात् इस उपायसे तुम अपना परिपालन कर सकोगे और समय आनेपर जीवनमें आशानुरूप उच्च स्थिति प्राप्त कर सकोगे।

२. धन्धा स्वतः एक लक्ष्य है। धन्धा करनेसे आत्मसन्तोष होता है और तुम्हारी स्वाभाविक योग्यता चाहे जिस विषयमें हो, उसका विकास होता है।

किसी कामका अनुभव न होनेके कारण शुरू-शुरू तुम्हें शायद 'आफिस बाय' (चपरासी) का काम करना पड़े।* इसमें हर्ज ही क्या है? बड़े-बड़े कुशल और सफल लोगोंने अपनी जीविका-उपार्जनकी शुरुआत इसी तरह की थी।

पर तुम्हारी यह मंशा तो है नहीं कि तुम सदा क्लर्क बने रहो।

---

* विलायतमें क्लर्क बननेके लिए प्रायः चपरासीगिरीसे काम शुरू करना पड़ता है।—अनुवादक

तुम यह भी नहीं चाहते कि यदि कुर्की छोड़कर कोई दूसरा धन्धा करनेकी इच्छा हो तो उसे एकदम शुरूसे सीखना पड़े।

इस समय शायद तुम्हें यह प्रश्न महत्वपूर्ण न मालूम पड़े कि किस धन्धेसे जीविका आरम्भ की जाय, क्योंकि तुम्हारा मुख्य उद्देश्य इस समय है–किसी धन्धेसे लग जाना और घरमें दो पैसा लाना। परन्तु तुम्हारी यह समझ दुरुस्त नहीं है।

आरम्भसे ही किसी उपयुक्त धन्धेको चुन लेना बड़ा अच्छा होता है। तुम इस कथनकी सत्यताको समझते होगे, परन्तु आश्चर्य है कि बहुतेरे नवयुवक रोजी कमानेकी धुनमें इस आवश्यक प्रश्न-पर ध्यान नहीं देते।

यदि तुम पत्रकार बनना चाहते हो तो किसी कारखानेमें कुर्कीका धन्धा क्यों शुरू करते हो? तुम्हें चाहिये कि किसी समाचारपत्र या पुस्तक-प्रकाशकके कार्यालयमें कामका जरिया ढूँढ़ो।

यदि तुम्हारा झुकाव विज्ञानकी ओर है तो तुम्हें रसायनशाला इत्यादिमें काम ढूँढ़ना चाहिये।

यदि तुम कृषक बनना चाहते हो तो बनियेकी दूकानपर नौकरी मत करो, बल्कि जोतने-बोनेके अदने कामोंको सीखना शुरू करो।

मतलब यह कि उचित दिशाकी ओर जाओ!

संभव है, तुम किसी एक आफिस या फर्ममें पड़े रहना न चाहो। ठीक ही है। कई तरहके कामोंका विस्तृत अनुभव प्राप्त करना और विभिन्न सहकर्मियोंका संग-साथ होना बड़ा अच्छा है। यदि शुरूमें तुमने वही धन्धा या पेशा अपना लिया है जो तुम्हें पसन्द है, तो उसकी शुरूआत चाहे कितनी ही छोटी क्यों न हो, तुमने ठीक रास्ता पकड़ा है और उसका तुम यथेष्ट अनुभव प्राप्त कर सकोगे। यदि तुम इस धन्धेको छोड़कर कोई दूसरा

धन्धा अख्तियार करोगे तो यही अनुभव उस नये काममें भी तुम्हारी सहायता करेगा।

तुम्हें कौन-सा काम-काज करना चाहिये,—इस विषयपर शायद तुम्हारा अपने बड़ोंसे कुछ तर्क-वितर्क होता हो।

यदि उनकी सलाह तुम गलत समझते हो, तो भी उनकी बात-को प्रसन्नताके साथ सुनना तुम्हारे हकमें अच्छा ही होगा। व्यापार और जीवन-सम्बन्धी उनके अनुभवोंसे तुम्हें कुछ शिक्षा ही मिलेगी।

यदि सलाह देनेवाले तुम्हारे माता-पिता हों तो उनसे इस विषयकी बातें करते समय अधीर मत बनो। उन्हें तुम्हारे हितकी वास्तविक चिन्ता है और यदि वर्षोंसे वे तुम्हारी देख-रेख करते आ रहे हैं तो आज भी उनकी यही मंशा है कि तुम कोई गलती न कर बैठो।

यदि तुम कुछ तय नहीं कर पाते हो, तो तुम्हें चाहिये कि अपने माता-पिताकी सलाह मान लो।

इसके विपरीत यह बात भी ठीक नहीं है कि जिस धन्धेसे तुम्हें सुखी होनेकी आशा नहीं है वह तुम्हें जबरन करना पड़े सिर्फ इसलिए कि तुम्हारे माता-पिताकी अभिलाषा पूरी होगी। जीविकाका सम्बन्ध तुम्हारे माता-पिताके जीवनसे नहीं है, बल्कि तुम्हारे जीवनसे है।

फिर भी, यदि उनकी ऐसी ही जिद हो तो तुम्हें उनकी सलाह नम्रतासे सुननी और समझनी चाहिये। वे हृदयसे तुम्हारा भला चाहते हैं। इसमें सन्देह नहीं कि तुम्हें किस धन्धेमें सुख और सफलता मिलेगी—इसका अन्तिम निर्णय तुम्हारे ही हाथ है।

यदि कोई धन्धा तुम्हें पसन्द हो और उसे करनेका अवसर भी मिल जाय तो किसीके मतमें आकर उसे छोड़ो मत। परन्तु

किसीकी राय अस्वीकार करते समय तुम्हें नम्रता और समझदारीसे काम लेना चाहिये। जो माता-पिता तुमसे इतना स्नेह करते हैं, उनका चित्त तुम अपने उद्धत व्यवहारसे बड़ी जल्दी दुखा दोगे और फिर पीछे तुम्हें भी इसका पछतावा होगा।

यदि तुम अपने लिए कोई धन्धा तय नहीं कर पाते हो, तो ऐसे पेशेवर लोग और संस्थाएँ भी हैं जो तुम्हारी योग्यता और स्वभावके अनुसार किसी मुनासिब धन्धेकी तजवीज कर देंगी। *

उद्योग-धन्धेके लिए मनोविज्ञानकी ऐसी संस्थाएं हैं जो यह ठीक-ठीक बतानेका प्रयत्न करती हैं कि कौन-सी चाभी किस तालेमें ठीक बैठेगी—अर्थात् कौन मनुष्य किस कामके उपयुक्त होगा। काम-धन्धेकी राह दिखानेवाली संस्थाओंमें आजकल मनुष्य-स्वभावको समझनेवाले अनुभवी लोग काम करते हैं। इनसे तुम्हें यथोचित सहायता मिल सकती है।

तुम्हारे स्कूलके हेडमास्टर शिक्षा-विभागके अधिकारियोंसे तुम्हारी मुलाकात करा सकते हैं। उनके जरिये तुम नौकरी तलाश कर सकते हो। तुम्हारे स्थानीय धर्म-मन्त्री भी इस विषयमें तुम्हारी सहायता करेंगे। ❀

यदि इन उपायोंसे सफलता न मिले तो तुम्हें हताश न होना चाहिये। जिस धन्धेके विषयमें तुम सन्देहमें पड़े हुए हो तुम्हें

---

* दुर्भाग्यसे भारतवर्षमें ऐसी संस्थाओंका नितान्त अभाव है।
—अनुवादक

❀ ये बातें भारतवर्षके लिए अभी स्वप्न-सी हैं। यहाँ बिचारे पढ़े-लिखे लोग नौकरीके लिए दर-दर ठोकरें खाते फिरते हैं, पर कोई उनकी बातका पुछवैया नहीं है।—अनुवादक

उसीके लिए प्रयत्न करना चाहिये। जो मौके हम अपने लिए आप ढूंढ़ निकालते है अक्सर वे ही सबसे अच्छे होते है।

स्थानीय वाचनालयोंमें जाकर उद्योग-धन्धेकी पत्र-पत्रिकाओंमें प्रकाशित विज्ञापनोंको देखा करो। मनलायक काम-काजका विज्ञापन नजर आते ही उस कामके लिए प्रयत्न करो।

जो धन्धा तुम करना चाहते हो, यदि उस पेशेके लोगोंको तुम जानते हो तो उनसे सहायता माँगनेमें संकोच मत करो। लोग चाहते है कि हमसे कोई सलाह लेने आये। उन्हें दूसरोंका उपकार करना अच्छा लगता है, इसलिए उनसे मदद माँगनेमें तुम्हें संकोच नहीं करना चाहिये।

परन्तु इसके साथ ही तुम्हें उन लोगोंसे बुद्धिमानीके साथ बात चीत करनी चाहिये और अपनी चिन्ता प्रकट नहीं करनी चाहिये। मित्रताके नाते तुम किसीसे हर्गिज ऐसी मदद मत माँगो जिससे यह प्रकट हो कि तुम अपने पैरोंपर आप खड़े नहीं हो सकते।

नौकरी-चाकरी या काम-काजके लिए अर्जी लिखनेमें, पत्र व्यवहार करनेमें या मुलाकात करनेमें भी तुम्हें ऐसी ही बुद्धिमानी और योग्यतासे काम लेना चाहिये।

अर्जीमें उम्र, योग्यता, विषय-विशेषमें व्युत्पत्ति और अभिरुचि इत्यादि मुख्य बातोंका संक्षिप्त विवरण अलग अलग पैराग्राफमें सीधी सरल भाषामें लिखना चाहिये। यह अर्जी ही तुम्हारा प्रथम परिचय उस अधिकारीसे करायेगी जिसके पास तुम इसे भेजोगे।

तुम्हारी अर्जी पाकर यदि अधिकारी तुम्हें इंटरव्यू (मुलाकात) के लिए बुलायँगे तो तुम्हें बड़ी दिक्कत मालूम होगी, खासकर इसलिए कि पहलेसे तुम्हें इसका कोई अनुभव नहीं है। स्कूलके हेडमास्टरने शायद कभी अपने कमरेमें बुलाकर तुमसे

कुछ बातचीत की हो तो बस उतनी ही सी मुलकातका तुम्हें अनुभव होगा।

किसी अधिकारीसे बातचीत करनेमें घबरा जाओगे तो या तो बहुत-कुछ बोलने लगोगे या फिर तुमसे कुछ भी नहीं बोला जायगा। जिससे बात करते हो यदि उसीपर ध्यान रखो और अपनेको भूल जाओ तो तुम्हारी बातचीत सरल और स्वाभाविक होगी।

अपनी घबराहटके दोषको ढकनेके लिए अत्यधिक दीनता अथवा अहम्मन्यता प्रकट करनेकी आवश्यकता नहीं। यदि अधिकारीके मनमें यह बात बैठा सको कि तुम चुस्त चालाक हो और उसका काम अच्छी तरह कर सकोगे तो इतना ही काफी होगा।

अधिकारीसे बातचीत करते समय उसकी बातोंको गौरसे सुनो और जरूरत पड़नेपर संक्षेपमें उत्तर दो। तुम अपनेको अधिकारीकी हैसियतमें समझो और जो कुछ जानना उसके लिए जरूरी हो वे सब बातें उसे बतलाओ।

केवल योग्यतासे काम नहीं चलता

विषयान्तर अवश्य हो जायगा, परन्तु यहाँ मैं तुम्हें कुछ ऐसी बातें बताना चाहता हूँ जो तुम्हारे कर्म-जीवनके आरम्भसे अन्त तक अत्यन्त महत्वपूर्ण सिद्ध होंगी।

केवल शिक्षा और योग्यता प्राप्त करना ही यथेष्ट नहीं है। अपने फनके उस्ताद हो जानेसे भी कोई लाभ नहीं, यदि चरित्रका विकास भी उसी सतहपर न हुआ हो।

जिस मनुष्यपर भरोसा नहीं किया जा सकता और जो मन-की झोंकपर काम करता है-वह चाहे कितना ही तेज-तर्रार हो अन्तमें वह कार्यके उपयुक्त प्रमाणित नहीं होना। उससे अधिक कामका वह मनुष्य होता है जिसपर भरोसा किया जा सकता है चाहे वह उतना योग्य न हो। इसी प्रकार ऐसे मनुष्यको भी कोई नहीं चाहता जो औरोंकी मनुष्योचित भावनाओंको समझने और सहन करनेका प्रयत्न नहीं करता।

तुम्हें याद होगा, मैं पिछले विभागमें बता चुका हूँ, कि लोग चाहते हैं कि उनसे कोई सलाह माँगे। मैं यह भी कह चुका हूँ कि किसी अधिकारीसे पहले-पहल मुलाकात करते समय तुम अपनेको उसीकी हैसियतमें समझो तभी सफलता मिलेगी।

आगे चलकर मैं तुम्हें यह बताऊँगा कि अपने सहकर्मियोंके साथ मिल्लतदारीसे क्यों रहना चाहिये।

इन सब बातोंका निष्कर्ष यह है कि तुम्हें अपने सामाजिक जीवनमें और कर्म-जीवनमें मनोविज्ञानसे काम लेना चाहिये। इसका ज्ञान अधिकांशमें तुम्हें स्वयं अपने जीवनसे मिला होगा और थोड़ा-बहुत शायद इस पुस्तकके द्वितीय भागसे भी प्राप्त हुआ होगा।

यदि तुमने अपने मनका निरीक्षण करना आरम्भ कर दिया है और अपने विचारों और भावोंकी क्रियाओंको समझने लगे हो, तो तुम दूसरोंके मनोभावोंको अच्छी तरह समझ सकते हो।

साधारणतया मनुष्यके विचारों और भावनाओंकी क्रियाएँ सर्वत्र एक-सी होती हैं। जिस मनुष्यसे तुम घृणा करते हो, जो मनुष्य तुम्हें कतई अच्छा नहीं लगता, वह भी तुम्हारी ही तरह सोचता-विचारता और प्रतिक्रियाएँ करता है।

अब जब तुम ऐसे मनुष्यसे मिलना जो तुम्हें सचमुच नाप-

सन्द हो, तो इस बातको ध्यानमें रखना। तुम उस मनुष्यको पसन्द नहीं करते हो इसलिए वह भी तुम्हें पसन्द नहीं करता है। यदि तुम उससे बुद्धिमानीके साथ पेश आते, उसपर कुछ सहनशीलता दिखलाते और उसमें कुछ अपनी पसन्द लायक गुण खोजते (क्योंकि बुरेसे बुरे मनुष्यमें भी कुछ तो गुण होते ही हैं) तो वह भी तुम्हें नापसन्द न करता और तुम दोनोंका आपसमें समझौता हो जाता।

राष्ट्रोंमें परस्पर सन्देहकी सृष्टि भी इसी प्रकार हुआ करती है।

घरेलू और काम-काजके जीवनमें मनोविज्ञानका प्रयोग करनेसे तुम्हें दो लाभ होंगे।

(१) तुम अन्य लोगोंके प्रति विशेष उदार और सहिष्णु हो जाओगे। बदलेमें तुम्हारे मनोभावोंको अधिकाधिक समझनेकी प्रतिक्रिया उन लोगोंमें भी होगी।

(२) इससे तुम्हें व्यक्तिगत और कर्म-जीवनमें यथेष्ट सफलता मिलेगी। यदि तुम अपनेसे बाहरकी चीजोंपर ध्यान दोगे अर्थात् मनोयोगपूर्वक काम-धन्धा करोगे, साहित्य-चर्चा इत्यादिके सद्व्यसनमें समय दोगे और सर्वोपरि अन्य लोगोंकी आवश्यकताओं और प्रतिक्रियाओंको समझनेकी चेष्टा करोगे, तो तुम्हारी साख जमेगी और तुम्हारे जीवन-मार्गमें एकसे एक बढ़कर लाभकारी अवसर आयेंगे।

प्रारम्भिक कर्म-जीवन

नये काम-धन्धेको सदा कौतुककी वस्तु ही न समझो, खासकर ऐसी अवस्थामें जब कि वह तुम्हारा पहला धन्धा है।

यह कौतुककी वस्तु केवल इसी अर्थमें है कि तुम्हें नया अनुभव प्राप्त हो रहा है और तुम पहले-पहल एक ऐसी निराली दुनियाको देख रहे हो जिसे तुमने अब तक नहीं देखा था। विशेषतः यदि तुम किसी बड़े आफिस या कार्यालयमें भर्ती हुए हो जहाँ तुम्हारा व्यक्तित्व नगण्य है, तो तुम्हारे मनमें कुछ भयका भी संचार हो सकता है।

स्कूलमें शायद तुम्हारा ऊंचा स्थान रहा होगा, पर यहाँ तुम किसी गिनतीमें नहीं हो, बल्कि तुमसे अन्य कर्मचारी घबराते हैं। आरम्भमें तुम्हें यह परिवर्तन खलेगा और अपनेको नयी परिस्थितिके अनुकूल बनानेमें कठिनाई होगी।

याद रहे कि जब कोई परिस्थिति एकाएक बदलती है तब उसके अनुकूल बन जानेके लिए प्रारम्भमें कुछ कठिनाई अवश्य होती है। जीवनकी परिस्थितियाँ तो नित्य ही बदलती रहती हैं, क्योंकि जीवन स्वतः एक परिवर्तन-प्रणाली है। अतएव उन परिस्थितियोंके साथ-साथ उन्हींके अनुकूल तुम्हें भी बदलना चाहिये।

बचपनमें होश सम्हालते ही तुमने देखा कि तुम एक कुटुम्बके अंग हो। आगे चलकर तुम स्कूलकी दुनियाके अनुकूल बने। अब तुम उससे एक कदम आगे बढ़ गये हो। बस, इतनी ही तो बात है।

जैसे-जैसे तुम उम्रकी सीढ़ियोंपर चढ़ोगे वैसे-वैसे तुम्हें पहले बहुत बड़ी और महत्वपूर्ण जान पड़ने वाली वस्तुएं अपने असली रूपमें दिखायी पड़ेंगी। तुम्हारा क्रम-विकास अतीतको छोटा बनाता जायगा। इस स्थितिसे घबरानेकी नहीं बल्कि कुछ सीखनेकी जरूरत है।

अतएव तुम्हें अपनी नयी नौकरीकी परिस्थितिके अनुकूल बनना है। याद रहे, तुम अभी नौसिखुये हो, इसलिए तुम्हें काम

सीखना पड़ेगा और जरूरत पड़नेपर डाँट-डपट भी चुपचाप सहनी पड़ेगी।

इसका यह अर्थ नहीं है कि तुम दीन-हीन बनकर जिल्लत उठाओ या अपनेको इतना गिरा लो कि काम-चोर कहलाओ। जब स्कूलमें तुम्हारी यह दशा नहीं हुई तब यहाँ क्यों होगी?

अगर तुमसे कोई गलती हो जाय तो उसे मंजूर करनेसे हर्गिज मत डरो। अपना कसूर मान लो। ऐसा कौन सफल मनुष्य है जिससे कभी भूल-चूक न हुई हो या अक्सर न होती रही हो? गलतियोंसे आइन्दाके लिए सबक सीखते रहोगे तो तुम्हारी उन्नति ही होगी, अवनति नहीं।

गलती करके माफी माँगनेसे मत हिचको। यदि तुम अपनी गलतीको साफ शब्दोंमें स्वीकार करोगे और उसके लिए हार्दिक खेद प्रकट करोगे तो लोगोंके मनमें तुम्हारे बारेमें अच्छा ख्याल होगा। गलती करना और उसके लिए माफी न माँगना नीचता है। इससे लोग तुम्हारे विरोधी हो जायगे।

नौकरीकी स्थितिमें तुम्हारे जीवनका तीन बातोंसे सम्बन्ध हो जाता है। पहला कामसे सम्बन्ध, दूसरा अपने मालिकों और सहकर्मियोंसे सम्बन्ध और तीसरा जो कि वास्तवमें बहुत महत्व-पूर्ण है, घर और अवकाशकी पृष्ठभूमिसे सम्बन्ध।

इन बातोंकी पारस्परिक प्रतिक्रियाएं हुआ करती हैं।

यदि तुम्हें अपना कर्म-जीवन सरल प्रतीत नहीं होगा तो दिन-भरके बाद जब तुम थके-माँदे और दुःखितचित्त घर लौटोगे तब उस दुःखकी छाया तुम्हारे गृह-जीवनपर पड़ेगी। यदि गृह-जीवनमें कोई झंझट खड़ी हो जायगी तो दिल लगाकर काम नहीं कर सकोगे।

नौकरीकी शुरुआतमें जो छोटे दर्जेके और उकतानेवाले काम

करने पड़ेंगे उनसे तुम्हारा जी ऊब सकता है। पर तुम्हें तो शुरूसे ही काम सीखना है। बिना इस तरह सीखे तुम्हें अनुभव कैसे प्राप्त होगा और कैसे उन्नति कर सकोगे? बिना इसके तुम्हारे अफसर भी तुम्हारी योग्यताकी परख कैसे कर सकेंगे?

धीरजसे काम लो। बचपनमें तुम्हें चलना सीखना पड़ा। उसी तरह आज भी तुम इस नये मार्गपर चलना सीख रहे हो। जीवनपर्यन्त तुम्हें सीखना ही सीखना है।

छोटे दर्जेके कामोंको जी लगाकर करोगे तभी जिम्मेदारीके काम करनेके योग्य बनोगे। साथ ही, यह भी जरूरी नहीं है कि तुम उन छोटे-मोटे कामोंमें ही अपनी क्रियात्मकताको सीमित रखो।

यदि तुम आँख कान खोलकर काम करोगे तो तुम्हें ऐसे अवसर मिलेंगे जिनसे तुम अपने कार्यालयके उद्योग और व्यापार, कार्य-प्रणाली, विभिन्न विभागोंका पारस्परिक सम्बन्ध, इत्यादि अनेक बातें सीख और समझ सकोगे।

यदि तुम अपने निर्धारित कामको करते हुए चारों ओर नजर दौड़ा कर अन्यान्य बड़े कामोंसे परिचित होनेका प्रयत्न करोगे तो समय आनेपर तुम जिम्मेदारीके काम करनेकी योग्यता प्राप्त कर सकोगे।

तुम्हें अपने कार्यालयके समस्त व्यवसायको मोटे तौरपर समझनेकी चेष्टा करनी चाहिये। यदि तुम इसी कार्यालयमें अपना ओहदा बढ़ाना चाहते हो तो ऐसी चेष्टा करना जरूरी है। यदि कभी दूसरी जगह जाना चाहोगे तो यहाँके अनुभवसे तुम यह ठीक-ठीक समझ सकोगे कि तुम्हारे लिए कौन-सी नयी जगह इससे अधिक उपयुक्त होगी।

यद्यपि इन अन्तिम पृष्ठोंमें ऐसी ही बातें बतायी गयी हैं जो

आफिसोंमें काम करनेवालोंपर लागू हैं, फिर भी सिद्धान्त-रूपसे ये बातें—व्यवसाय, वाणिज्य, जन-सेवा इत्यादि जो भी पथ तुमने ग्रहण किया हो—सभीपर एक-सी ठीक बैठती हैं।

तुम्हारे कर्म-जीवनका आधा हिस्सा तुम्हारे व्यक्तिगत व्यवहार-बर्तावसे सम्बन्धित है। यह व्यवहार-बर्ताव बहुत ही महत्व-पूर्ण वस्तु है, जैसा कि तुम्हें पिछले विभागमें बताया जा चुका है। इसका प्रभाव तुम्हारे व्यक्तित्वके विकासपर पड़ेगा और जिस व्यवसायके तुम अंग हो उसके सहयोगपूर्ण परिचालनपर भी पड़ेगा।

साधारणतया यदि घरेलू जीवनमें तुम किसी व्यक्तिको नापसन्द करते हो तो उससे बिना मिले-जुले काम चल सकता है। परन्तु कर्म-जीवनमें ऐसे व्यक्तिसे केवल मिलना-जुलना ही नहीं होगा, बल्कि संभवतः उसके सम्पर्कमें नित्य ही आना पड़ेगा। अतएव तुम्हें आरम्भ ही में यह तय कर लेना पड़ेगा कि ऐसे व्यक्तिसे तुम्हारा व्यवहार-बर्ताव कैसा होगा।

यदि एक साथ काम करनेवाले लोग आपसमें एक दूसरेसे घृणा करते हैं, तो इसका प्रभाव केवल उन लोगोंपर ही नहीं पड़ता बल्कि उनके कामपर भी पड़ता है। इस स्थलके लिए भी वही दृष्टान्त उपयुक्त है कि यदि शरीरके अंग आपसमें लड़ पड़ें तो शरीरका अस्तित्व कठिन हो जाय।

अतएव सतर्क रहो, अपनी योग्यतासे काम लो और मनोविज्ञानकी शिक्षाका उपयोग करो। इससे तुम और लोगोंके विचारों और कार्योंको ठीक-ठीक समझ सकोगे। यह तभी होगा जब तुम उनपर अपना प्रभाव डालनेके बजाय उनके व्यक्तित्व और उनकी अभिरुचिपर सोचो-विचारोगे।

ऐसे लोगोंसे दलील न करना या उनके प्रति अपनी घृणा और

क्रोध प्रकट न होने देना आत्म-प्रवंचना नहीं है। जिस समाज या व्यवसायके तुम अंग हो उसके हितके लिए 'सफेद झूठ' की तरह इस प्रकारका शिष्टाचार अत्यन्त आवश्यक है।

ऐसे शिष्टाचारसे तुम्हारा भी हित होगा और लोगोंके विचारों और मनोभावोंको समझने और सहन करनेकी आदत पड़ेगी और उनके और अपने बीच व्यर्थकी दीवार नहीं खड़ी होगी।

इसका यह अर्थ नहीं है कि फिलहाल तुम कुछ लोगोंकी मातहतीमें हो इसलिए उनकी लल्लोपत्तो किया करो। स्कूली जीवनमें ऐसा करनेकी सलाह मैंने नहीं दी और कर्म-क्षेत्रमें भी मैं ऐसी सलाह नहीं देता हूँ। परन्तु मेरे कथनका यह तात्पर्य भी नहीं है कि तुम उन लोगोंके मुहपर चिकनी-चुपड़ी बातें करो और पीठ-पीछे गला रेतो।

दूसरोंसे चातुर्य और कौशल-पूर्वक व्यवहार-बर्ताव करना चाहिये और यह समझनेकी चेष्टा करनी चाहिये कि किसीकी प्रकृतिमें कोई विशेषत्व है तो उसका कारण क्या है।

ऐसा करनेसे स्वयं तुम्हें शिक्षा मिलेगी। भौतिक और आत्मिक दोनों ही दृष्टियोंसे अन्तमें तुम्हारी उन्नति होगी, क्योंकि यदि तुम्हारे आफिस या कार्यालयके वातावरणमें व्यक्तिगत ईर्ष्या, द्वेष और प्रतिद्वन्द्विताकी सनसनी होगी तो कामका हर्ज होगा। झगड़ा पैदा करनेवाले कर्मचारियोंको अफसर लोग बहुत छोटी निगाहसे देखते हैं और वे यह ठीक ही करते हैं।

मेरा हर्गिज यह इशारा नहीं है कि तुम अपने मालिक या अफसरोंको चकमा दो। मेरा यह भी मतलब नहीं है कि तुम अपने शुरूके छोटे-मोटे कामपर ही सन्तोष करो और ताजिन्दगी नीचे दर्जेकी मातहती करते रहो।

छोटीसे छोटी शुरूआतसे बढ़ते-बढ़ते भविष्यमें बड़ेसे बड़ा काम

किया जा सकता है। इस विषयपर बहुत कुछ कहा जा सकता है।

यदि तुमने अपने मनमें होनेवाली छोटी-छोटी प्रतिक्रियाओंको नियंत्रित करनेका कष्ट उठाया है, तो भविष्यमें तुम्हें यह देखकर बड़ा ताज्जुब होगा कि जिन लोगोंको कर्म-क्षेत्रमें कहीं आगे बढ़ जाना चाहिये था, वे इस प्रकारके नियंत्रणकी शिक्षा प्राप्त न करनेके कारण पीछे ही लटके रह गये।

कभी-कभी आफिसों या कार्यालयोंमें पहलेकी ईर्ष्या, द्वेष और प्रतिद्वन्द्विताके फलस्वरूप कर्मचारियोंमें पुरानी दलबन्दियाँ चलती रहती हैं। परिणाम यह होता है कि सबकी सम्मिलित हित-कामनाकी बात पीछे पड़ जाती है और व्यक्तिगत छिछोरी बातोंका प्राधान्य हो जाता है। इससे वहाँके काम-काज और वाणिज्य-व्यवसायको बड़ा धक्का लग सकता है।

तुम ऐसी दलबन्दियोंसे दूर रहना और कभी उनके फेरमें न पड़ना।

तुम दोनों विरोधी दलोंसे मीठे बने रहो—इसके लिए तुममें असाधारण चातुर्य और कौशल होना चाहिये। आरम्भमें दोनों पक्षवाले तुम्हें दुरंगी चाल चलनेवाला समझेंगे; परन्तु अन्तमें वे लोग तुम्हारी नेकनीयती और हिम्मतकी इज्जत करेंगे।

अन्तमें यह स्मरण रक्खो कि समस्त मनुष्य-जातिकी विरासत एक-सी है। एक ही-सी प्रवृत्तियाँ हम सब लोगोंमें मौजूद हैं। यदि प्रकृतिकी तुमपर विशेष कृपादृष्टि रही है और उसने तुम्हें काम-काजमें योग्यता और सामाजिक सम्बन्ध-स्थापनमें अभिज्ञता प्रदान की है तो तुम इन गुणोंको दैवी आशीर्वाद समझो।

इस बातके ज्ञानसे तुम्हें अहम्मन्य और असहिष्णु नहीं होना चाहिये, बल्कि और भी अधिक विनम्र और सहनशील बनना चाहिये, अन्यथा जिन गुणोंपर तुम्हें गर्व है, तुम उन्हींको मिट्टीमें मिला दोगे।

अध्याय २५

सिलसिला जमाना

काम-काजमें और वयस्क-जीवनके विस्तृत क्षेत्रमें तुम आनन्द-पूर्वक अपना सिलसिला किस हद तक जमा सकोगे—यह बहुत कुछ तुम्हारे गृह-जीवनकी पृष्ठभूमि और तुम्हारी शिक्षा-दीक्षापर अवलम्बित होगा।

भौगोलिक दृष्टिसे इङ्गलैण्ड छोटा-सा देश है। साधारणतया इसके निवासी प्रायः एक-सा जीवन व्यतीत करते हैं—क्योंकि सभीकी एक सी चिन्ताएं हैं और सभीको आनन्दोपभोगके समान अवसर प्राप्त है।

फिर भी यह मार्केकी बात है कि यहाँ ऊंच-नीचका बड़ा जबर्दस्त भेद-भाव है।

मेरा यह तात्पर्य नहीं है कि यहाँ अधिकतर नीच श्रेणीके लोग हैं और उनके लिए हदबन्दी है। यह स्थिति यहाँ नहींके बराबर है और जो कुछ है भी वह इतनी नगण्य है कि उसकी उपेक्षा की जा सकती है।

इतना अवश्य है कि अपनी-अपनी आय और अपने-अपने अभ्यासके अनुसार परिवारोंके रहन-सहनका ढंग और जीवनके प्रति दृष्टिकोण जुदा-जुदा है।

नवयुवकोंको इससे कठिनाई होती है, क्योंकि आज शिक्षाकी सुविधा प्राप्त होनेके कारण वे व्यापारी या अन्यान्य पेशेकी

श्रेणियोंमें अपनी राह बनाते हैं, यद्यपि उनके बाप-दादे वैसी श्रेणियोंके नहीं थे।

घरमें सिर्फ गरीबी होनेके कारण कोई भी नेकनीयत आदमी अपने घरेलू जीवनपर शर्मिन्दा नहीं होगा। शर्मिन्दा होनेके बजाय तुम्हें अपने माता-पितापर गर्व होना चाहिये, क्योंकि अनेकांशमें उन्हींके त्याग और स्नेहकी बदौलत तुम्हें शिक्षा-दीक्षा इत्यादिमें उनसे भी आगे बढ़ जानेका अवसर प्राप्त हुआ है।

जब उच्च श्रेणीवालोंकी बड़ी दुनियाँमें तुम्हारा प्रवेश हो तब वहाँकी सीखने लायक बातोंको सीखनेसे मुह मोड़ना नादानीका काम होगा।

कुछ लोगोंका सचमुच यह विश्वास है कि किसीमें योग्यता होनी चाहिये फिर चाहे वह कैसा ही बदतमीज हो कोई हर्ज नहीं। कुछ लोग इससे भी आगे बढ़ गये हैं, क्योंकि उनके दृष्टिकोणमें ऊँच-नीचके भेद-भावकी प्रतिक्रिया काम करती है। उन्हें यह कहनेमें ही सन्तोष प्राप्त होता है कि बोल-चालकी तहजीब न होनेसे मनकी वह उच्चता प्रमाणित होती है जो शिष्टाचारके ढकोसलोंसे कहीं ऊपर है।

मेरे विचारसे यह उस अनाड़ी कलाकारकी-सी बात है जो अपनी असफलताओंके लिए अपने मनको यह समझा देता है कि 'मेरी प्रतिभाको परखनेकी तमीज ही किसीको नहीं है' और मूँछ-दाढ़ी बढ़ाकर बहुरूपिया बनकर प्रतिभाका ढिंढोरा पीटता फिरता है।

इसमें सन्देह नहीं कि दो-एक ऐसे महान् प्रतिभाशाली व्यक्ति भी हुए हैं जिनका व्यवहार-बर्ताव असभ्यतापूर्ण रहा। परन्तु इसकी विपरीत बात ठीक नहीं हो सकती। असभ्य व्यवहार-बर्ताव प्रतिभाका प्रमाण नहीं हो सकता।

इसके अतिरिक्त, किसी कार्यविशेषमें ऐसा कोई व्यक्ति अपनी प्रतिभाका चमत्कार दिखला दे तो भी मेरे विचारसे, वह व्यक्ति और भी महान् हो सकता है यदि वह जीवनकी नित्य नैमित्तिक बातोंमें मिठास लानेका थोड़ा-बहुत प्रयत्न करे।

सौभाग्यसे तुम्हारा जन्म ऐसे परिवारोंमें हुआ होगा जहाँ बात-चीतमें नम्रजीव और सभ्यताका खयाल रखा जाता है। ऐसी अवस्थामें तुमने अपने बड़ोंके आचरणकी नकल करते हुए स्वाभाविक रूपसे सीख लिया होगा कि अपरिचित लोगोंसे कैसे मिलना होता है और जीवनमें सामाजिक शिष्टाचारकी गलतियोंसे किस तरह बचे रहना चाहिये।

यदि तुम्हें यह शिक्षा मिली है तो अपनेको सौभाग्यशाली समझो, परन्तु यदि तुम दूसरोंको इस कर्त्तव्यसे च्युत देखो तो अपने ऊपर गर्व मत करो और यही समझो कि उन लोगोंको तुम्हारे-जैसा सुअवसर प्राप्त नहीं हुआ।

बहुत संभव है कि तुम्हारे घरकी दुनियाँ बहुत ही छोटी हो। विशेषतः यदि तुम शहरके आस-पासके स्थानोंके निवासी हो तो तुम्हें बहुत लोगोंसे मिलने-जुलनेका और बात-चीत करनेका सुअवसर नहीं मिला होगा।*

---

* अंग्रेजोंमें सामाजिक शिष्टाचार और तकल्लुफातके अपने अलग कायदे हैं जो कि उच्च श्रेणीके लोगोंमें बरते जाते हैं। English etiquette प्रसिद्ध हैं। पुस्तकके इस विभागमें और अगले विभागमें इस विषयकी कुछ चर्चा है।—अनुवादक

विनयशीलता और शिष्टाचार

सच्ची विनयशीलता और शिष्टाचारका सम्बन्ध प्रथा या रिवाजसे उतना नहीं है जितना परिमार्जित रुचिसे है।

इसमें सन्देह नहीं कि नित्यप्रतिके व्यवहार-बर्तावमें सुन्दरता लानेवाले छोटे-छोटे कायदोंका सम्बन्ध प्रचलित रीति-रिवाजोंसे है, जैसे,—टेबुलपर भोजन करते समय छुरी-काँटा कैसे रखना चाहिये, खाना कैसे खाना चाहिये, इत्यादि। इन कायदोंको तुम नहीं जानते हो तो इन्हें किसीसे सीखनेमें शर्माओ मत अन्यथा सभ्य समाजके सम्मुख तुम्हें लज्जित होना पड़ेगा।

इस तरहकी रस्मोंके अतिरिक्त विनयशीलता और शिष्टाचार दूसरोंके खयालसे बरते जाते हैं।

तुम सोचते होगे कि इस पुस्तकमें सर्वत्र इस बातपर जोर दिया गया है कि तुम अपने हृदय और मनका निरीक्षण करो और उन्हें वशमें रखनेके लिए उनकी क्रियाओंको समझो।

इसका यह अर्थ नहीं है कि तुम्हारे विचारोंका विश्लेषण तुमपर और तुम्हारे स्वार्थपर केन्द्रित हो।

जिस तरह भी हो, अपने विचारों और अनुभूतियोंका विश्लेषण अवश्य करो, परन्तु इनके दो उद्देश्य होने चाहिये।

१. तुम्हें आत्म-नियंत्रणमें अधिकाधिक सहायता मिल सके जिसमें तुम अपने चरित्रके दोषोंको सुधार सको।

२. तुम अन्य लोगोंकी मनोभावनाओं और दृष्टिकोणोंको समझ सको।

ये दोनों ही उद्देश्य आवश्यक हैं, परन्तु पहलेकी पूर्तिसे ही दूसरेकी सिद्धि संभव होगी।

तुम्हारे मनका विश्लेषण अज्ञात रूपसे स्वतः समयपर हो

जायगा। परन्तु दूसरोंके मनोभावोंको समझनेका प्रयत्न सदा-सर्वदा करते रहना चाहिये जिसमें तुम्हारा ध्यान अपने ऊपर नहीं बल्कि उन्हीं लोगोंपर केन्द्रित रहे।

वृद्धोंको बस या ट्रामपर चढ़नेमें सहायता देना, उनके लिए दरवाजा खोल देना, इत्यादि बातें बहुत ही छोटी मालूम होंगी, परन्तु ऐसी बातोंसे यह प्रकट होगा कि तुम्हें अन्य लोगोंके अस्तित्वका बोध है और तुम्हें उनके सुख और आरामका खयाल है। इन्हीं बातोंसे समस्त चरित्रकी सूचना मिलती है।

तुम्हारी इन छोटी-छोटी 'समझदारियों'से लोग प्रसन्न होंगे और तुम्हें ऊंची नजरोंसे देखेंगे। इस तरहका पुरस्कार प्राप्त करनेकी नीयतसे तुम्हें कोई काम नहीं करना चाहिये, हालाँकि ये पुरस्कार तुम्हें अपने-आप ही मिलेंगे।

कुछ दोगे नहीं तो कुछ पाओगे भी नहीं। यही जीवनका नियम है। किसीके दुख-सुखपर ध्यान दोगे तो उससे स्नेह प्राप्त करोगे।

यदि गरीबीमें तुम्हारा जीवन प्रारम्भ हुआ हो और उससे होनेवाली असुविधाएं तुम्हें भोगनी पड़ी हों तो भी इस बातसे मत डरो कि लोगोंसे मिलना-जुलना और उनके मनमें घर करना तुम सीख ही नहीं सकोगे।

अपनेको भूलकर अपने विचारोंको अपने साथवालोंपर केन्द्रित करना सीखो। उदाहरणके लिए, इससे बढ़कर और क्या उदासी छायेगी कि जिसके साथ भोजन कर रहे हो वह गूँगा बना बैठा है! साथ ही ऐसे मनुष्यको भी कोई नहीं पसन्द करता जो व्यर्थकी बक-बक करता रहे, या तुम्हें किस विषयसे दिलचस्पी है किससे नहीं,—इस बातकी बिना परवाह किये अपना ही राग अलापता रहे।

आदर्श साथी वही है जो दूसरोंके विचारों और दृष्टिकोणोंको बुद्धिमानीके साथ सुनने-समझनेकी योग्यता रखे और बातचीतमें दिलचस्पी दिखाये चाहे उस विषयसे उसका विशेष सम्पर्क न हो। ऐसा साथी जब विदा होता है तब अपने पीछे बड़ा अच्छा प्रभाव छोड़ जाता है।

इसका यह अभिप्राय नहीं है कि जिस बातको तुम नहीं जानते हो उसमें झूठ-मूठ डींग अड़ाओ। यदि तुम्हें किसी विषयकी जानकारी न हो तो यह साफ-साफ स्वीकार कर लेना कहीं अच्छा है बनिस्बत इसके कि तुम उस विषयकी जानकारी दिखाओ और बात-चीतके सिलसिलेमें तुम्हारी पोल खुल जाय।

ऐसी अवस्थामें तुम अपने साथीसे कहो कि वह तुम्हें उस विषयको समझाये। किसी तरहकी सलाह देनेमें या कोई बात बतानेमें उसे बड़ी प्रसन्नता होगी। तुम भी कुछ सीख सकोगे। इस प्रकार तुम दोनों ही सन्तुष्ट होंगे।

इसमें सन्देह नहीं कि तुम अक्सर ऐसे लोगोंके सम्पर्कमें आओगे जिनके विचार तुम्हारे विचारोंसे एकदम भिन्न होंगे। बिना जोशमें आये हुए मुनासिब तौरसे उनसे बहस-मुबाहसा करनेमें कोई हानि नहीं होगी। विचारोंकी टक्कर बलदायक और उत्पादक वस्तु हो सकती है। परन्तु जब तुम किसी बातको तयशुदा मान लेते हो और दूसरेको यह स्वतन्त्रता नहीं देते हो कि वह तुम्हारे विचारोंसे भिन्न अपने विचारोंपर विश्वास कर सके तो बहस-मुबाहसेसे कोई लाभ नहीं होता बल्कि इससे आपसमें कड़वाहट और गलतफहमी होती है।

किसीके धर्म, राजनीति या सदाचार-विषयक सिद्धान्तोंपर—ऐसे सिद्धान्तोंपर जिनपर उसका दृढ़ विश्वास है—कड़ी चोट करना बुद्धिमानी नहीं है। इससे केवल उजड्डपन जाहिर होता है।

उसे अपनी रायपर उतना ही अधिकार है जितना तुम्हें अपनी रायपर। वह तुम्हें चाहे कैसा ही मूर्ख क्यों न जान पड़े, परन्तु अपनी रायको जबर्दस्ती उसके गलेके नीचे उतारनेकी चेष्टा करनेसे उसकी, तुम्हारी या तुम्हारे सिद्धान्तकी कोई भलाई नहीं होगी।

इस बातसे भी यही निष्कर्ष निकलता है कि दूसरोंका खयाल करना चाहिये। यदि कोई वस्तु या सिद्धान्त किसी व्यक्तिके लिए पवित्र और आदरणीय है तो तुम उसपर आक्षेप करके उसके जीको क्यों दुखाते हो? तुम्हारे इस कार्यसे उसका जी अवश्य दुखेगा। अतएव ऐसा कार्य न करके तुम्हें अपने दृष्टिकोणको बुद्धिमानी और कायदेके साथ उसके सम्मुख रखना चाहिये। इस प्रकार दूसरोंकी राय बदलनेकी इच्छाकी उत्पत्ति अधिकतर उस आत्मिक प्रवृत्तिसे है जो सबको अपनाना चाहती है।

तुम्हें ऐसे अनेक व्यक्ति मिलेंगे जो समझते हैं कि 'दूसरोंकी आत्माका उद्धार करना या उनके जीवनको अग्रसर करना हमारा ही काम है।'

यह किसीका भी काम नहीं है कि दूसरे व्यक्तिके जीवनको अग्रसर करे या उस व्यक्तिमें किसी तरहका परिवर्तन लानेकी चेष्टा करे। तुम्हें स्वयं कितना कुछ करना है जिससे तुम अपने जीवनको अग्रसर कर सकते हो और अपनी भलाईके लिए अपनेमें यथा-साध्य परिवर्तन ला सकते हो।

यदि तुम्हारे उदाहरणका कुछ मूल्य है तो मौखिक उपदेशकी अपेक्षा कहीं अधिक प्रबल प्रभाव यही दूसरोंपर डालेगा।

प्रथम प्रेम

व्यावहारिक और आत्मिक विनयशीलता और सदाचारका प्रश्न तुम्हारी प्रथम मित्रता और प्रेमके विषयसे अत्यधिक सम्बन्धित है।

कुछ व्यक्तियोंके विचार उनके स्वार्थपर ही केन्द्रित होते हैं। वे अन्य लोगोंसे मित्रता इत्यादिके सुखमय सम्बन्ध स्थापित करनेके सारे सुअवसरोंको नष्ट कर देते हैं, क्योंकि उनके जानतेमें नहीं तो अनजानते ही, उनकी नीयत हर घड़ी इसी ताकमें लगी रहती है कि ऐसे सम्बन्धसे उनका कौन-सा मतलब पूरा होगा।

मतलब निकालनेके आधारपर न तो यारी-दोस्ती हो सकती है, न मेल-मोहब्बत हो सकती है और न ब्याह-शादी हो सकती है।

गाढ़ीसे गाढ़ी मित्रतामें भी दो जुदा पहलू जरूर होने चाहिये—एक तो, दो व्यक्तियोंकी घनिष्ठता या एकात्मीयता; और दूसरे, प्रत्येक व्यक्तिका स्वतंत्र व्यक्तित्व।

कभी-कभी नवयुवक अपने प्रथम प्रेम-सम्बन्धको ठीक-ठीक निभा नहीं सकते हैं और बहुत सदमा उठाते हैं। इसका कारण यही है कि वे अपने प्रेम-पात्रको समूचाका-समूचा निगल जाना चाहते हैं अर्थात् उसपर अपना और केवल अपना ही अधिकार चाहते हैं।

यह बहुत ही भयंकर प्रवृत्ति है। विशेषतः स्त्रियोंको इससे सावधान रहना चाहिये। उनमें यह प्रवृत्ति स्वभावसे ही होती है, क्योंकि उनके हृदयकी सारी भावनाओंका अस्तित्व उनके प्रेम-जीवनसे गुथा हुआ है। पुरुषोंकी अपेक्षा स्त्रियोंमें यह प्रवृत्ति अधिक होती है, क्योंकि इससे प्रकृतिका प्रयोजन सिद्ध होता है।

पुरुष यदि यह समझ ले कि स्त्री उसे समूचा निगल जाना चाहती है तो वह उससे मील भर दूर भागेगा। पुरुषके लिए स्त्रीसे दूर भागनेका यही सबसे बड़ा कारण होता है।

अपना अनुचित अधिकार जमानेका प्रलोभन यदि स्त्रीको उसके हृदयकी भावनाके कारण होता है, तो वैसा ही प्रलोभन पुरुषको उसके मस्तिष्ककी तर्क-बुद्धिके कारण होता है। पुरुष सोचता है कि 'मेरे और स्त्रीके सम्मिलित जीवनमें मुझे ही अधिक सक्रिय भाग लेना पड़ेगा, अतएव जिन बातोंका निर्णय स्त्री स्वयं कर सकती है और करनेकी अधिकारिणी है, उनमें भी उसे मेरे हुक्मको कानून मानकर चलना पड़ेगा।'

ऐसे मामलोंमें दोनों ओरसे लेन-देनका हिसाब ठीक रहना चाहिये और साथ ही कुछ अप्रिय बातोंको हसकर उड़ा देना भी जरूरी है।

अपने प्रेम-सम्बन्धमें जब तुम पहले-पहल भग्न-हृदय हो, (ऐसी भग्न-हृदयता प्रायः अवश्य होती है) तब यथासंभव उसे हंसी-मजाकमें उड़ा देनेकी चेष्टा करो।

भग्न-हृदय होना युवक या युवतीके लिए अत्यन्त पीड़ा-जनक व्यापार है, क्योंकि उस समय यही जान पड़ता है कि संसारमें प्रलय आ गया। यद्यपि यह उपदेश तुम्हें इस समय बहुत ही कठोर मालूम पड़ेगा, फिर भी अन्य अवस्थाओंकी तरह तुम्हारी यह अवस्था भी बीत जायगी।

समय हृदयके घावको भर देता है। जब हम अपनी पहली पसन्दकी प्रेमिकाके साथ सुखी थे, उस बीते समयको लौटा लानेकी सामर्थ्य यदि हममें होती और हम उसे लौटा लाते तो भी कोई लाभ नहीं होता।

स्वभावका मेल न बैठनेके कारण जैसे पहले प्रेमी-प्रेमिकाका

सम्बन्ध टूटा वैसे ही फिर सम्बन्ध टूट जायगा। प्रथम सम्बन्ध-विच्छेदसे ही यह बात प्रमाणित होती है कि वे एक दूसरेके उपयुक्त नहीं थे।

इसमें दोष प्रेमीका हो सकता है, प्रेमिकाका हो सकता है या दोनोंका ही हो सकता है।

तुमसे कौन-सी चूक हो गयी—यह इस अवसरपर तुम्हें अपने हृदयपर हाथ रखकर सोचना चाहिये जिसमें आइन्दा ऐसी गलती न होने पाये। इस अवसरपर तुम्हें शांत चित्तसे यह भी विचारना चाहिये कि तुम्हारे प्रेम-पात्रमें ऐसी कौन-सी बात थी, जिसका मेल तुम्हारे साथ नहीं बैठता था। नये प्रेम-पात्रको चुननेमें फिर तुम उसी गलतीको न दुहराओ। ऐसी गलती हम सभी लोगोंसे हो जाती है और इसके अनेक कारण हैं जिनका उल्लेख 'स्कूल की मित्र-मण्डली' वाले अध्यायमें किया जा चुका है।

प्रेम-सम्बन्धकी प्रथम असफलतासे तुम्हें जो अनुभव प्राप्त होता है उससे यदि शिक्षा ग्रहण करना चाहोगे तो हानिके बजाय लाभ ही होगा।

जैसा कि मैं पहले कह चुका हूँ,—समाज यदि हमें प्रेम करनेकी शारीरिक क्षमता प्राप्त करते ही अर्थात् जवान होते ही प्रेम करनेकी आज्ञा नहीं देता है तो परिणामको देखते हुए वह कुछ बुरा नहीं करता है।

हमें अनेकानेक व्यक्तियोंसे मिलना-जुलना चाहिये और उनकी हर बातको समझना-बूझना चाहिये। तभी हम उनमेंसे अपने मनोनुकूल एक ऐसे उत्तम प्रेम-पात्रको ठीक-ठीक पसन्द कर सकते हैं जिसके साथ हमारा विवाह-सम्बन्ध स्थायी और सुखमय हो सकता है।

अध्याय २६

तुम्हारा सुदूर भविष्य

अब हम तुम्हारे वर्तमान दृष्टिकोणके उस क्षितिजपर पहुँच गये हैं जहाँसे तुम अपने जीवनके भविष्यकी इमारत खड़ी करना चाहते हो और उसकी नींव डाल रहे हो।

नींव पक्की और पुख्ता होनी चाहिये क्योंकि उसपर बहुत-कुछ निर्माण करना है।

तुम्हारे जीवनके लक्ष्य क्या हैं?

मेरे दृष्टिकोणके अनुसार तुम्हारे जीवनके लक्ष्य संक्षेपमें तुम्हारी इसी अभिलाषाके अन्तर्गत होने चाहिये कि काम-काज, अवकाश, विवाह और पितृत्व (या मातृत्व) की पूर्तिके लिए तुम्हारी शारीरिक, मानसिक और आत्मिक शक्तियोंका पूरा-पूरा विकास हो।

अपनी अभिलाषाओंको इतनी ऊँची न बनाओ कि तुम्हारी परिस्थिति और व्यक्तित्व सम्बन्धी स्वाभाविक योग्यताके लिए वे असाध्य हो जायँ। जो बात पूरी नहीं हो सकती उसकी लालसा करना व्यर्थ है। तुम्हारी वर्तमान परिस्थितिमें न्यायतः जो कुछ सम्भव है उसीकी या उससे कुछ अधिक कामनापर ही सन्तोष करना चाहिये।

यदि तुमने अपने काम-धन्धेकी अच्छी नींव डाली है, यदि तुम अपनी सारी योग्यता काम-धन्धेमें लगा देना चाहते हो, यदि तुम अपने सहकर्मियोंके मनोभावों और विचारोंको समझकर

चलना चाहते हो, तो किसी अज्ञात घटनाके सिवाय और कोई ऐसा कारण नहीं हो सकता जिससे तुम्हारी साधारण सफलता रुक जाय।

पैसा पैदा करना ही अपना एकमात्र उद्देश्य मत समझो।

हाँ, तुम्हें इतना अवसर अवश्य मिलना चाहिये कि तुम केवल अपने जीवनका अस्तित्व ही न बनाये रहो, बल्कि उसमें सुख और सौन्दर्यकी सृष्टि भी कर सको। भ्रमण और विस्तृत मित्र-मण्डलीसे तुम्हें अपनी पूर्ण मानवताके विकासमें सब समय सहायता मिल सकती है।

तुम्हारे काम-काजसे आर्थिक लाभके अलावा अन्य लाभ भी होने चाहिये। यदि तुमने अपने काम-धन्धेका चुनाव बुद्धिमानीके साथ किया है तो तुम्हें अपनी स्वाभाविक शक्तियोंके पूर्ण उपयोगसे और अपनी सफलतासे निश्चय ही सन्तोष होगा।

मैं आशा करता हूँ कि उचित समयपर जब तुम विवाह करोगे तब केवल रूप देखकर ही पत्नी पसन्द नहीं करोगे।

यदि तुमने अपने मनोभावोंको समझना सीख लिया है और गैरोंका अन्तस्तल परखना भी तुम्हें आ गया है, तो तुम विवाहके लिए ऐसी स्त्रीको पसन्द कर सकोगे जिसके साथ तुम्हारा दाम्पत्य-सम्बन्ध, यौन-अनुभूतिका प्रथम आवेश बीत जानेपर भी, दृढ बना रहेगा।

इसकी सफलताके लिए तुम दोनों पति-पत्नीकी एक-सी अभिरुचि और एक-से आदर्श होने चाहिये।

ऐसा भी समय आ सकता है जब यही प्रतीत होगा कि तुम दोनोंका सम्बन्ध-विच्छेद हो जायगा। यदि वह समय आये तो सारा दोष पत्नीके मत्थे मढ़नेकी चेष्टा मत करना। स्त्रीको भी चाहिये कि वह केवल पुरुषको ही दोषी न माने।

दाम्पत्य-जीवनमें जो कठिनाइयाँ उपस्थित हो जाती हैं उनके लिए कोई एक पक्ष ही दोषी नहीं होता।

कठिनाइयाँ अनेक कारणोंसे आ जाती हैं, जैसे,–सम्भव है, पुरुष अपनी स्त्रीके विषयमें जरूरतसे जादा कोई निश्चयात्मक धारणा अपने मनमें बना ले या स्त्रीके आत्म-विश्वासका आधार नष्ट कर दे, या लापरवाहीके साथ स्त्रीकी कुछ ऐसी तीव्र आलोचनाएं करे अथवा उससे ऐसे दुर्व्यवहार करे जिनसे दाम्पत्य-सम्बन्धकी नींव हिलनेकी आशंका हो, अथवा स्त्रीकी ओरसे ही ऐसी बातें हों।

दाम्पत्य-जीवनमें विनयशीलता और सदाचारका उपयोग इस अर्थमें होना चाहिये कि पति और पत्नी एक-दूसरेका खयाल रखें और लिहाज करें। यह सबसे पहली जरूरत है।

जो व्यक्ति बाहर भला बना रहता है और घरमें कठोर और भद्दा, बर्ताव करता है, वह 'विष-रस भरा कनक-घट जैसे'–वाली कहावतको चरितार्थ करता है।

जब तक तुम यह अच्छी तरहसे नहीं समझ लेते हो कि विवाह एक स्थायी सम्बन्ध है और उसके लिए सहनशीलताकी आवश्यकता है, तबतक तुम्हें विवाह-बन्धनमें नहीं बँधना चाहिये।

दाम्पत्य-जीवनमें यदि सुखोपभोगके प्रिय दिन होते हैं तो कठिनाइयोंके अप्रिय अवसर भी आते है, क्योंकि पति और पत्नी, आखिर मनुष्य ही हैं और उनमें मनुष्य-स्वभावकी अपूर्णताएँ रहती ही हैं।

तुम स्वयं क्या दूधके धोये हो? क्या तुममें कमजोरियाँ नहीं हैं? फिर भी तुम एक अपर व्यक्तिकी कमजोरियाँ सहन नहीं कर सकते?

एक बार विवाह कर लेनेके पश्चात् पुरुष और स्त्रीको वह आपसका समझौता कायम रखना चाहिये जिसके आधारपर वे विवाह-सूत्रमें बँधे थे। पति और पत्नीका आपसमें व्योंत बैठना चाहिये और दोनोंको परस्पर एक-दूसरेके अनुकूल बनना चाहिये। उम्र के विकासकी भाँति और स्वतः जीवनके क्रम-विकासके समान दाम्पत्य-जीवनके लिए भी अनुकूलता और व्योंत बैठानेकी आवश्यकता होती है।

विशेषतः यदि तुम्हारे बच्चे भी हों तो तुम्हें अपनी व्यक्तिगत इच्छाओंकी पूर्तिके पहले सारे घरके हितको ही तरजीह देनेका सबक सीखना पड़ेगा। पति और पत्नीमें गलतफहमी हो जाय और वह जड़ पकड़ ले तो उसका बुरा असर बच्चोंके जीवनपर पड़ता है और उन्हें अपनी हिफाजतका इतमीनान नहीं होता है। इससे बच्चोंकी स्थायी हानि हो सकती है।

माता अपने बच्चेके जीवनके लिए और उसके हित-साधनके लिए बिना विचार अपनेको बलि चढ़ा देगी। प्रायः अज्ञानके कारण वह यह महसूस नहीं करती कि अन्य दिशाओंमें भी उसका कुछ ऐसा ही त्याग होना चाहिये।

पति और पत्नीमें समय-समयपर खटपट होगी ही, परन्तु उन्हें चाहिये कि जब कभी कोई झगड़ा हो तब वे वातावरणको इतना अशान्त और कड़वा न बना दें कि उससे बच्चोंकी मानसिक क्षति हो।

चाहे कुछ भी हो, बच्चे रहें या न रहें, पति और पत्नीकी अनबन बढ़ते-बढ़ते जंगलीपनके दर्जेतक पहुचे ही क्यों? यदि दोनों ओरसे आदान-प्रदानका हिसाब ठीक नहीं रह सकता या दोनों ओरकी हुज्जत-तकरारमें औचित्य और सभ्यताकी रक्षा

नहीं हो सकती तो क्या आशा की जाय कि घर या बाहर—कहीं भी मनुष्यको शान्ति मिल सकेगी ?

हमें आशा है कि जब हमारे पाठक और पाठिकाएँ बचपनकी अवस्थासे पिता और माताके दरजेको पहुँचेंगे तब इस बातको स्मरण रखेंगे और अपने माता-पिताकी गलतियोंको स्वयं नहीं दुहरायेंगे ।

तुम यह तो नहीं चाहते हो कि जो वंशगत असुविधाएँ तुम्हें भोगनी पड़ी हैं वे अगली पीढ़ीकी भी विरासत बनें ?

जो माता या पिता अपना लड़कपन प्रतिकूल अवस्थामें बिता चुके हैं और अब अपनी ही तरह अपने बच्चोंके जीवनको भी विपत्तिग्रस्त बनाते हैं, कहना पड़ेगा कि उन्होंने कोई सबक नहीं सीखा । उनकी जो मानसिक क्षति हो चुकी है, अपने बच्चोंको वही क्षति पहुँचा कर वे मानों अपना बदला चुकाते हैं ।

यह बात सर्वोपरि स्मरण रखनी चाहिये कि और सब चीजोंकी तरह बच्चे तुम्हारी मिलकियत नहीं हैं । जिस तरह तुमने महसूस किया कि तुम्हारा एक स्वतंत्र व्यक्तित्व है, उसी तरह वही बात तुम्हारे बच्चे भी महसूस करेंगे ।

किसी मनुष्यको यह अधिकार नहीं है कि वह किसी दूसरे मनुष्यको अपनी मिलकियत बनानेकी कोशिश करे । किसी भी माता या पिताको अपने बच्चोंके पर काट डालनेकी चेष्टा नहीं करनी चाहिये ।

माताएँ इस लोभको संवरण नहीं कर सकतीं । उनके लिए ऐसा होना स्वाभाविक ही है, क्योंकि उन्हें सन्तानकी चिन्ता और ममतामें वर्षों व्यतीत करने पड़ते है ।

जो माता चिन्ता और ममतासे व्याकुल होकर अपनी सन्तानको अपनेसे जुदा नहीं होने देती और उसके स्वतंत्र जीवन-यापन

करनेमें बाधक होती है वह वृद्धावस्थामें अपनी सन्तानसे सर्वाधिक श्रद्धा और सम्मान नहीं प्राप्त कर सकती।

सफल माता और पिता वे ही होते हैं जो व्यावहारिक और आत्मिक स्नेहके साथ अपनी सन्तानका लालन-पालन करते हैं और उसके सयाने हो जानेपर उसे स्वतंत्र जीवन व्यतीत करनेका अवसर प्रदान करते हैं।

ईश्वर और तुम

मानव-जीवनके इस जटिल रूपके पीछे ऐसा कौन-सा भेद छिपा है जिसके कारण मनुष्य एक पृथक् व्यक्तित्व भी है और किन्हीं विराट् तत्वोंका एक आवश्यक अङ्ग भी है ?

शायद हमें इसका अन्तिम उत्तर नहीं मिल सकता।

यदि तुम्हारा कोई ऐसा दृढ़ धार्मिक विश्वास है जिससे इस प्रश्नका उत्तर मिल जाता है, तो तुम्हें अपने जीवन-मार्गके लिए बड़ा ही भव्य अवलम्ब प्राप्त हो सकता है। अपने विश्वासपर दृढ़ रहो और सतर्क रहो कि कोई दुष्टता-पूर्वक उस विश्वासको छिन्न-भिन्न न कर दे।

दूसरी ओर यह बात है कि यदि और लोगोंके दृष्टिकोणोंसे तुम्हारा मत न मिलता हो, तो तुम्हें सहनशील होकर उन्हें समझनेकी चेष्टा करनी चाहिये। तुम्हें यह महसूस करना चाहिये कि तुम्हारे ही समान और लोगोंको भी अपना-अपना स्वतंत्र मत माननेका अधिकार है, वह चाहे तुम्हें भले ही अमान्य हो।

यदि तुम्हें किसी एक धर्म या मतमें जीवनकी समस्याओंका सन्तोष-जनक उत्तर नहीं मिला, तो यह मत सोचो कि तुम अगम

समुद्रमें पड़े हो और पथ-प्रदर्शनके लिए ध्रुव तारेका अभाव है।

यदि तुम सच्ची लगनसे खोजोगे तो उस ध्रुव तारेको तुम अपने ही अन्दर—सद्-असद्-विवेक-ज्ञानकी जन्मदात्री अपनी ही अन्तरात्मामें—पाओगे।

सम्भव है, ईश्वर तुम्हें बहुत दूरकी वस्तु या अन्धविश्वास-की कपोल-कल्पना-मात्र जान पड़े और तुम उसके अस्तित्वको स्वीकार न कर सकते हो।

परन्तु क्या इसका यही अर्थ है कि तुम यह स्वीकार ही नहीं कर सकते कि ईश्वर नामकी कोई वस्तु है?

जीवन-विकासकी सारी प्रवृत्ति समस्त वस्तुओंकी एकात्मी-यताकी ओर अंगुलि-निर्देश करती है। प्रकृति एक है और समस्त प्रकृतिमें सामञ्जस्य और संतुलन है।

अधिक नहीं तो कमसे कम इतना तो अवश्य किया जा सकता है कि हम लोग अपने जीवनमें वही एकता, सामञ्जस्य और संतुलन अनुभव करें।

कोई भी ऐसा कार्य करना जो नीचतापूर्ण और क्षुद्र हो या जिससे दूसरेका अपकार होता हो, जीवनकी एकताके प्रति प्रहार है। यह उस मनुष्यपर प्रहार है जिसे तुम्हारे ही समान जीवनपर अधिकार है। यह तुम्हारे अपने प्रति भी प्रहार है क्योंकि जब तुम दूसरेको क्षति पहुँचने वाला काम करते हो, तब तुम्हारा विकास गलत दिशाकी ओर होता है और तुम्हें नुकसान पहुँ-चता है।

आदत बड़ी जबर्दस्त चीज है। दूसरोंको नुकसान पहुँचाकर जो लोग अपना मतलब निकालनेके आदी हो जाते हैं, वे गलत आदतके गुलाम बन जाते हैं। इसका नतीजा यही होता है कि वे जीवनकी एकात्मीयतासे अपना सम्पर्क खो बैठते हैं।

औरोंको नुकसान पहुँचाकर अपना भला करनेवाला मनुष्य अपनी दुष्ट नीतिके कारण अन्तमें स्वयं नाशको प्राप्त होता है। पहले तो उसका आत्मिक पतन होता है, पर अन्तमें उसे भौतिक दृष्टिसे भी कुफल भोगना पड़ता है। पहले कुछ समयतक वह भले ही फूले-फले, परन्तु उसकी दुष्टता सदा अबाध गतिसे नहीं चल सकती। वह औरोंको नुकसान पहुचायेगा तो अपनी जरूरतके वक्त किस मुहसे किसीसे मदद माँग सकेगा और कौन उसे मदद देगा ?

कुछ ज्ञानियोंको संगठित धर्मके अनावश्यक आडम्बरोंके माननेमें आपत्ति हो सकती है। वे सच्चे हृदयसे किसी ऐसी बातको स्वीकार नहीं कर सकते जो उन्हें अन्धविश्वास-मात्र जान पड़ती है।

जिस तथ्यको कोई भी अस्वीकार नहीं कर सकता वह यह है कि पृथ्वीपर समस्त जीवन-समुदायमें एक-सा ही आदर्श व्याप्त है,—समस्त जीवनमें एकता है और पारस्परिक निर्भरता है। यही नहीं, वह एकता और पारस्परिक निर्भरता स्वतः अन्तिम लक्ष्य नहीं वरन् उच्चातिउच्च क्रम-विकासका लक्ष्य प्राप्त करनेका मार्ग है।

जिसमें इतनी समझ है कि वह मनुष्य-मात्रको परस्पर भाई-भाई मानता है और अपने लिए समझता है कि 'मैं उस विश्व-व्यापी भ्रातृत्वका एक अंश हूँ और मेरा यह नाता आजका नहीं बल्कि विगत समस्त जीवनोंमें रहा और समस्त भावी जीवनोंमें बना रहेगा, वह व्यक्ति एक ऐसा आन्तरिक सामञ्जस्य प्राप्त करेगा जिसके कारण वह अपने मार्गमें आनेवाली सभी विपत्तियोंकी परीक्षाओंमें उत्तीर्ण होता जायगा और अपने आदर्शोंको कायम रख सकेगा।

तिक्त स्वभाववाला और अपनी व्यर्थता अनुभव करनेवाला वही मनुष्य होता है जो इस तरहकी समझदारी अख्तियार करनेसे चूक जाता है। ऐसा व्यक्ति वस्तुतः सुखी नहीं हो सकता।

तुम्हारा ईश्वर सगुण हो या निर्गुण, तुम्हारा विश्वास ईश्वरके मध्यस्थ ईसामसीहपर हो या गौतम बुद्धपर, तुम चाहे सात्विक नियमोंको ही प्रकृतिकी संसृतिके सिद्धान्त मानते हो या तुम्हारा धार्मिक विश्वास और कुछ हो, परन्तु यदि तुम अपने स्वीकृत धर्मका पालन करते हो और उसके प्रति विश्वास-[illegible]त नहीं करते हो, तो तुम्हें आन्तरिक शान्ति प्राप्त होगी।

तरुण पाठकोंसे निवेदन

मुझे आशा है कि तुम्हें इस पुस्तकके पढ़नेमें आनन्द आया होगा और कमसे कम, सब नहीं तो कुछ भाग रोचक प्रतीत हुए होंगे।

यद्यपि मैंने इस पुस्तकमें वर्तमान समयमें तुम्हारे जीवनसे सम्बन्धित अनेक प्रश्नों और समस्याओंपर विचार किया है, फिर भी आशा यही है कि बहुतेरी बातें मुझसे छूट गयी होंगी।

यदि तुम कुछ नये अध्याय या विभाग जोड़नेके लिए कोई सुझाव पेश करना चाहते हो ताकि उन्हें पुस्तकके अगले संस्करण-में स्थान दिया जा सके तो कृपाकर तुम मुझे इस विषयकी सूचना अवश्य देना। इसके लिए मैं हृदयसे तुम्हारा कृतज्ञ होऊँगा।

यदि तुम इस पुस्तककी कोई आलोचना करना चाहते हो तो वह आलोचना भी मेरे पास भेजनेमें संकोच न करना। पुस्तकमें आवश्यक परिवर्तन करनेके बाद मुझे यह अनुभव करनेमें बड़ी प्रसन्नता होगी कि इस पुस्तकको मैंने और तुमने मिलकर लिखा है।
